कृषि विकास - विविध आयाम

एस एस यादव

राम गोपाल सागर

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया
अच्छे लोग, अच्छा बैंक

Union Bank
of India
Good people to bank with

कृषि विकास - विविध आयाम

संपादक

एस एस यादव

राम गोपाल सागर

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया

Union Bank of India

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया Union Bank of India

राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग
मानव संसाधन विभाग
केंद्रीय कार्यालय, मुंबई- 400 021
फोन: 022 22896517 / 22896503 • फैक्स: 022-22850375

कृषि विकास - विविध आयाम

संरक्षक
- **अरुण तिवारी**
  अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक

मार्गदर्शन
- **विनोद कथूरिया**
  कार्यपालक निदेशक
- **राज कमल वर्मा**
  कार्यपालक निदेशक
- **अतुल कुमार गोयल**
  कार्यपालक निदेशक

विशेष सहयोग
- **आर आर मोहंती**
  महाप्रबंधक (मानव संसाधन),के.का.
- **एस एन कौशिक**
  महाप्रबंधक (ग्रामीण एवं कृषि कारोबार)

प्रथम संस्करण : मार्च, 2017

प्रधान संपादक
- **राम गोपाल सागर**
  सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा),
  राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, के.का.

संपादक
- **एस एस यादव**
  मुख्य प्रबंधक (राजभाषा),
  राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, के.का

संपादन सहयोग
- **राजेश कुमार**
  सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा),
  राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, के.का
- **नवल दीक्षित**
  मुख्य प्रबंधक (राजभाषा),
  राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, के.का.

मुद्रक :
प्रिंट्रेड इश्यू (इंडिया) प्रा.लि.,
मुंबई, फोन: 022 4083 2525

(आंतरिक परिचालन हेतु)

इस पुस्तक में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के हैं. यूनियन बैंक ऑफ इंडिया प्रबंधन की उनसे सहमति आवश्यक नहीं है. स्त्रोत का उल्लेख करने पर, इस पुस्तक में प्रकाशित आलेखों को पूर्णतया या आंशिक तौर पर उद्धृत किये जाने पर बैंक को कोई आपत्ति नहीं होगी.

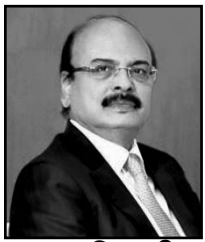

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया

अरुण तिवारी
अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक

प्रिय साथियो,

यह अत्यंत हर्ष की बात है कि हमारे बैंक द्वारा सामयिक बैंकिंग विषयों पर हिन्दी में पुस्तकों के प्रकाशन की शृंखला में इस वर्ष 'कृषि विकास- विविध आयाम' नामक पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है. इस पुस्तक के सभी लेख हमारे स्टाफ सदस्यों द्वारा लिखे गए हैं.

कहा जाता है कि भारत गांवों का देश है तथा भारत की आत्मा गांवों में बसती है. आज भी कृषि, ग्रामीण जनता की आजीविका का प्रमुख साधन है तथा भारतीय अर्थव्यवस्था में इसका महत्वपूर्ण योगदान है. आजादी के दशकों बाद तक भारतीय कृषि तथा भारतीय किसान के विषय में दो कथन प्रसिद्ध थे. पहला यह कि **"भारतीय कृषि मानसून का जुआ है"** और दूसरा कि **"भारतीय किसान कर्ज में जन्म लेता है, कर्ज में जीता है और कर्ज में ही मर जाता है"**. लेकिन सुखद पहलू यह है कि ये दोनों ही कथन अब काफी हद तक असत्य सिद्ध हो गये हैं. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुई प्रगति, कृषि में हो रहे निरंतर नए आविष्कारों एवं हरित क्रांति की पहलों ने कृषि को आज एक लाभप्रद व्यवसाय बना दिया है. अब रही किसानों की ऋणग्रस्तता, तो सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने कृषि से संबंधित विभिन्न गतिविधियों के लिए सरल, सहज व शीघ्र ऋण सुविधा उपलब्ध कराकर किसानों को साहूकारों के कर्ज से काफी हद तक राहत दिला दी है.

जहां तक हमारे बैंक का प्रश्न है, कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र को ऋण सुविधा उपलब्ध कराने में हमारा बैंक सदा अग्रणी रहा है. ग्राम ज्ञान केन्द्र तथा आरसेटी के माध्यम से ग्रामीण जनसंख्या को कृषि एवं इससे संबद्ध विभिन्न गतिविधियों की जानकारी व प्रशिक्षण

देकर तथा ऋण सुविधा उपलब्ध कराकर हमारा बैंक ग्रामीण बेरोजगारी व गरीबी के निर्मूलन एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में प्रमुख भूमिका निभा रहा है तथा इन क्षेत्रों के वित्त पोषण हेतु सरकार द्वारा निर्धारित लक्ष्य से बेहतर उपलब्धि रही है. ऐसे समय में, जब सरकार द्वारा इस क्षेत्र के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जा रही है, देश के विकास का एक प्रमुख घटक होने के कारण हमारे बैंक ने इस दिशा में और बेहतर कार्य करने का अपना लक्ष्य बनाया है और इस पुस्तक में दी गई जानकारी स्टाफ सदस्यों के प्रयासों को और कारगर ढंग से कार्यान्वित करने में सहायक होगी.

मुझे पूर्ण विश्वास है कि कृषि विकास से संबंधित विभिन्न विषयों पर प्रस्तुत जानकारी पाठकों तथा स्टाफ सदस्यों के लिए काफी उपयोगी व ज्ञानप्रद सिद्ध होगी. इस पुस्तक के सफल प्रकाशन के लिए मैं इसमें योगदान देने वाले सभी रचनाकारों तथा संपादक मंडल को हार्दिक बधाई व धन्यवाद देता हूँ.

शुभकामनाओं सहित

आपका

प्रतिवारी..

(अरूण तिवारी)

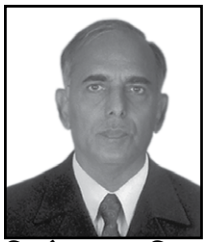

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया

विनोद कथूरिया
कार्यपालक निदेशक

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी हमारे बैंक द्वारा बैंकिंग विषय पर हिन्दी में पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है, जो 'कृषि विकास- विविध आयाम" विषय पर है. मनुष्य का प्राचीनतम कारोबार कृषि ही है. कृषि की जानकारी से पहले आदि मानव विभिन्न जीव- जंतुओं का शिकार कर या फिर स्वत: उगी वनस्पतियां एवं उनके फल- फूल खाकर अपनी भूख मिटाता था. कृषि (खेती) करने के ज्ञान से उसके जीवन में बहुत बड़ा बदलाव आया तथा खानाबदोश का जीवन छोड़कर वह एक स्थान पर स्थायी रूप से रहने लगा और यहीं से आदि मानव के सभ्य जीवन की शुरूआत कही जा सकती है.

कृषि, जो आदि काल में जीवन का आधार थी, आज लाखों- करोड़ों वर्षों बाद भी मानव जीवन ही नहीं, सम्पूर्ण सृष्टि के लिए उतनी ही महत्वपूर्ण जरूरत है तथा आर्थिक विकास का प्रमुख घटक है. यही कारण है कि सभी देशों द्वारा कृषि उत्पादों पर विशेष जोर दिया जाता है तथा हमारे देश में तो इसकी महत्ता और भी अधिक है. भारत सरकार द्वारा वर्ष 2017-18 के बजट में कृषि, किसान व ग्रामीण जनसंख्या को विकास में विशेष प्राथमिकता दी गई है. तदनुसार हमारा बैंक भी इन क्षेत्रों को सर्वाधिक प्राथमिकता दे रहा है और इस पुस्तक में दी गई जानकारी हमारे लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होगी, ऐसा मेरा विश्वास है.

सामयिक विषय पर पुस्तक प्रकाशन के इस उत्कृष्ट प्रयास हेतु मैं राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग एवं ग्रामीण व कृषि कारोबार विभाग के स्टाफ सदस्यों तथा पुस्तक के सभी रचनाकारों को हार्दिक बधाई देता हूं. आशा करता हूं कि आगे भी 'बैंकिंग- विविध आयाम' शृंखला के अंतर्गत इसी प्रकार सामयिक विषयों पर स्तरीय पुस्तकों का प्रकाशन जारी रहेगा.

शुभकामनाओं सहित,

आपका

विनोद

(**विनोद कथूरिया**)

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया

राजकमल वर्मा
कार्यपालक निदेशक

भारत एक कृषि प्रधान देश है तथा इसकी अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार कृषि है. यदि देश के कृषक सम्पन्न होंगे, तभी देश की अर्थव्यवस्था भी मजबूत होगी. विकास के इस दौर में भारतीय कृषि ने भी पारंपरिक कृषि से आधुनिक कृषि तक का सफर तय किया है. भारत सरकार द्वारा भी कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्रों में नवीनतम तकनीक, अनुसंधान एवं विकास को बढ़ावा देकर कृषि की आधुनिकतम विधियां उपलब्ध कराई जा रही हैं. ऐसे समय में कृषि विकास के सफर से जुड़े महत्वपूर्ण विषयों की जानकारी संबंधित स्टाफ सदस्यों को दिया जाना एक महत्वपूर्ण कार्य है. मुझे प्रसन्नता है कि इस प्रकार की जानकारी प्रदान करने की दृष्टि से हमारे बैंक द्वारा 'कृषि विकास- विविध आयाम" नामक पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है.

कृषि आज बैंकिंग का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गई है तथा निरंतर बढ़ती प्रतिस्पर्धा के इस दौर में हम सभी के लिए यह अपेक्षित हो जाता है कि इससे संबंधित सभी आयामों की जानकारी प्राप्त करें; ताकि हम अपने ग्राहकों, विशेष कर कृषक एवं ग्रामीण जनता को बेहतर सेवा प्रदान कर उनकी समस्याओं का समाधान कर सकें तथा अपने बैंक को आगे बढ़ायें. कृषि का विकास आज कृषकों के साथ-साथ बैंकों के लिए भी लाभकारी है. बैंक कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने को प्राथमिकता दे रहे हैं, जिससे कम जोखिम आस्तियों के जरिए बेहतर लाभ की स्थिति बनाई जा सके.

मेरा विश्वास है कि यह पुस्तक स्टाफ सदस्यों व पाठकों के लिए उपयोगी व ज्ञानप्रद होगी. पुस्तक के सफल प्रकाशन हेतु मैं सभी रचनाकारों को हार्दिक शुभकामनाएं देता हूं, जिन्होंने इस पुस्तक में अपनी प्रतिभागिता दी. इसके अलावा मैं केंद्रीय कार्यालय के राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग एवं ग्रामीण व कृषि कारोबार विभाग के स्टाफ सदस्यों को भी साधुवाद देता हूं, जिनके प्रयासों से यह पुस्तक प्रकाशित हो सकी है.

हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

आपका

(राजकमल वर्मा)

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया

अतुल कुमार गोयल
कार्यपालक निदेशक

यह प्रसन्नता का विषय है कि हमारे बैंक द्वारा 'कृषि विकास-विविध आयाम' नामक पुस्तक का प्रकाशन ऐसे समय पर किया जा रहा है, जिस समय भारत सरकार द्वारा कृषि व ग्रामीण क्षेत्र तथा ग्रामीण जनसंख्या के समन्वित विकास को सर्वाधिक महत्व दिया जा रहा है. कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ रही है. यद्यपि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में निरंतर प्रगति के कारण उद्योग एवं सेवा क्षेत्र का तेजी से विस्तार व विकास होने से हमारे जीडीपी में कृषि के योगदान में गिरावट हुई है; लेकिन आज भी कृषि भारतीय जनमानस के जीवन का आधार है; क्योंकि अन्न तो खेतों में ही पैदा होता है. इसीलिए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी देश के विकास के लिए कृषि एवं गांवों के विकास को सर्वाधिक महत्व दिये जाने की बात कहते थे.

हरित क्रांति की पहल ने कृषि के लिए साधनों व तरीकों की मांग बढ़ाई तथा बैंकों के राष्ट्रीयकरण से खेती करने के नवीनतम साधनों व तरीकों की सुलभता बढ़ी है. अब तो बैंकिंग की अवधारणा ही 'बैंक, ग्राहक के द्वार' हो गई है. गांवों, विशेषकर कृषि क्षेत्र में बैंकिंग सुविधाओं के विस्तार की काफी संभावनाएं हैं और इसके लिए आवश्यक है कि हम कृषि व ग्रामीण क्षेत्र के परिवेश, उनकी जरूरत व मांग को पहचानें. प्रसन्नता है कि इस पुस्तक में पारंपरिक कृषि से हाई-टेक कृषि तक के सफर व कृषि क्षेत्र के लिए ठोस व प्रभावी नीतियों के क्रियान्वयन की विधिवत जानकारी दी गई है, जो सभी के लिए उपयोगी सिद्ध होगी.

मुझे आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि स्टाफ सदस्य प्रकाशित सामग्री का उपयोग अपने ज्ञानार्जन हेतु अवश्य करेंगे. लेखकों ने शोधपूर्ण व व्यावहारिक ढंग से अपने लेख प्रस्तुत किए हैं. इस पुस्तक के प्रकाशन में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े सभी साथियों को बधाई.

हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

आपका

ए. कु. गोयल

(अतुल कुमार गोयल)

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया

एस एन कौशिक
महाप्रबंधक (आरएबीडी)

साथियो,

भारतीय कृषि विरोधाभासों की कहानी है. भारत में खेती योग्य भूमि, दुनिया के औसत 11 प्रतिशत की तुलना में 52 प्रतिशत है. भारत देश विभिन्न प्रकार की जलवायु विविधताओं से परिपूर्ण है. समय के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था के स्वरूप में भी बदलाव हुआ है. स्वतंत्रता के समय सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में कृषि का योगदान लगभग 50 प्रतिशत था, जो वर्तमान में 15 प्रतिशत से भी कम हो गया है, जबकि देश की आधी आबादी की आजीविका का एकमात्र साधन कृषि ही है. अर्थव्यवस्था का विकास कितनी भी तेज गति से क्यों न हो, कृषि क्षेत्र में जब तक तेजी से प्रगति नहीं होगी, देश की आधी आबादी अर्थव्यवस्था के विकास से हो रहे लाभों से वंचित रहेगी.

चीन के साथ भारत की तुलना करने पर एक महत्वपूर्ण तथ्य उभर कर सामने आता है. भारत में कृषि योग्य भूमि लगभग 157.35 मिलियन हेक्टेयर है, जो चीन की अपेक्षा कुछ अधिक है, लेकिन चीन, भारत से 40 प्रतिशत अधिक चावल और गेहूं का उत्पादन करता है तथा चीन के बाद दूसरा सर्वाधिक उत्पादन वाला देश है. चीन के बाद दुनिया में फलों और सब्जियों का दूसरा सबसे बडा उत्पादक देश भारत है. गौरतलब है कि चीन का फल उत्पादन भारत के उत्पादन का तीन गुना है. अन्य विकल्पों की तुलना में गेहूं और चावल कम मूल्य वाली फसलें हैं. हालांकि, भारतीय किसान अभी भी गेहूं और चावल की खेती ही अधिक करते हैं, जो क्षेत्र के आधार पर तो कुल उत्पादन का 70 प्रतिशत है, लेकिन मूल्य के आधार पर यह 25 प्रतिशत से भी कम है. यह कृषि की कम उत्पादकता और असंगत नीति को दर्शाता है.

भारत में कृषि की कम उत्पादकता अनेक कारकों का सम्मिलित परिणाम है, जिनमें छोटी-छोटी जोतें प्रमुख कारक हैं. 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में जोत का औसत आकार 1.15 हेक्टेयर है तथा कुल कृषक समुदाय के 85% छोटे और सीमांत किसान हैं. बढती आबादी तथा संयुक्त परिवार के विघटन के कारण जमीन के निरंतर विभाजन, वर्षा पर भारी निर्भरता (केवल 45% बुवाई क्षेत्र ही सिंचित होने) तथा कृषि यंत्रों और तकनीकों के सीमित प्रयोग के कारण कृषि की उत्पादकता बहुत कम है.

भारतीय कृषि में 1960 की 'हरित क्रांति' जैसे एक और क्रांतिकारी परिवर्तन की आवश्यकता है. दूसरी 'हरित क्रांति' भारत के लिए अब अनिवार्य हो गई है. इसके साथ ही संबद्ध क्षेत्रों में अधिक उत्पादकता पर ध्यान देने की आवश्यकता है, जिसमें 'प्रोटीन क्रांति' और अंतर्देशीय मत्स्य पालन की 'नील क्रांति' के और प्रसार सम्मिलित हैं. भारत सरकार ने खेती को लाभप्रद बनाकर पांच वर्षों में कृषि आय को दोगुना करने का एक महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किया है, जिसके अंतर्गत कार्यान्वयन की निम्नलिखित रणनीति अपनायी जा रही है :

1. सिंचाई पर विशेष जोर, ताकि पानी की हर बूंद से फसल में बढोत्तरी हो.
2. उन्नतिशील बीज एवं भूमि की उर्वरा शक्ति में बृद्धि.
3. भंडारगृहों एवं कोल्ड चेन में निवेश
4. खाद्य प्रसंस्करण के माध्यम से मूल्य संवर्धन
5. राष्ट्रीय कृषि बाजार का गठन
6. फसल नुकसान के जोखिम से बचाव हेतु किसानों के लिए सामान्य लागत पर नई क्रांतिकारी बीमा योजना
7. कुक्कुटपालन, मधुमक्खी पालन, मछलीपालन आदि जैसी सहायक गतिविधियों का विकास

उपर्युक्त के मुख्य उद्देश्य निम्न हैं :

क) खेती की लागत में कमी,

ख) प्रति इकाई उपज में वृद्धि और

ग) उपज की लाभदायक कीमत.

इस प्रकार कृषि के पक्ष में व्यापार की शर्तों को पुनर्स्थापित करने और बदले में किसानों की सबंधित आय में वृद्धि करने के लिए मूल्य आधारित और गैर-मूल्य आधारित दोनों ही हस्तक्षेप आवश्यक हैं. विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों को उपयुक्त कृषि उपकरण प्रदान किए जाने चाहिए, जो टिकाऊ, हल्के और कम लागत के होने के साथ-साथ क्षेत्र, फसल और संचालन सुविधा के अनुकूल हों. विभिन्न कृषि उद्यमों जैसे फसल उत्पादन, पशुपालन, मत्स्य पालन, वानिकी आदि का एकीकरण भी आवश्यक है. यहां तक कि उत्पादक प्रयोजनों के लिए भी कृषि अपशिष्टों का बेहतर पुनर्नवीनीकरण किया जा सकता है.

कृषि उत्पादों का विपणन किसानों के लिए प्रमुख समस्या है. किसानों में सही मोल-भाव करने की क्षमता का अभाव उन्हें कम मूल्य पर फसल बेचने के लिए मजबूर कर देता है. अच्छी फसल से किसानों की आय बढनी चाहिए; लेकिन व्यवहार में ऐसा नहीं होता; बल्कि इससे कीमत में गिरावट आ जाती है. इसी तरह, अभाव के समय जब कृषि उत्पादों

की कीमतें बढती हैं, तब भी किसानों को अधिक लाभ नहीं मिलता है, क्योंकि मध्यस्थ उसका लाभ द्वारा उठा लेते हैं, जिनकी संख्या काफी हो जाती है.

फलों और सब्जियों जैसी शीघ्र खराब होने वाली वस्तुओं के संदर्भ में, व्यावसायिकता का अभाव, अस्वस्थता की स्थिति, मानकीकरण और उन्नयन की कमी, नीलामी में पारदर्शिता और सुविधाओं की कमी, ग्रेडिंग, पैकिंग, कोल्ड स्टोरेज, प्रोसेसिंग की कमी आदि सामान्य समस्याएं हैं. फसल की हानि होने पर कभी-कभी मात्र एक चौथाई हिस्सा ही शेष रह पाता है, जिससे फसल से होने वाला लाभ स्वत: समाप्त हो जाता है.

कृषि के वित्तपोषण के लिए अभिनव और व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है. अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों (एससीबी) से रु.9,30,000 करोड की ऋण सुविधा कृषि और संबद्ध क्षेत्रों को प्रदान की गई अर्थात सकल बैंक क्रेडिट में इसकी 14% भागीदारी रही. यह जीडीपी में कृषि के योगदान के अनुरूप कहा जा सकता है.

कृषक समुदाय को अधिक ऋण मुहैया कराने के लिए हमें कृषि को अधिक सुदृढ करने एवं अनपेक्षित घटनाओं से उनकी आय को सुरक्षित करना आवश्यक है. इस प्रकार कृषि संबंधी संपूर्ण मूल्य शृंखला का समाधान ही किसानों की समस्याओं का समाधान है (कृषि वित्तपोषण तो मूल्य शृंखला का केवल एक हिस्सा है). निजी क्षेत्र में लगभग दो-तिहाई पूंजी निर्माण बैंक क्रेडिट के माध्यम से होता है. इसलिए दीर्घकालिक ऋण की मांग को पूरा करने में बैंकों की भूमिका महत्वपूर्ण है. हालांकि, दीर्घकालिक ऋण कुल कृषि ऋण के एक चौथाई से भी कम है. इसलिए पर्याप्त बजटीय सहायता के माध्यम से बैंकों को प्रोत्साहित करना हमारी नीति में शामिल होना चाहिए. रिजर्व बैंक ने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कृषि के बीच अंतर को दूर किया है और कृषि ऋण के अंतर्गत लघु एवं सीमांत किसानों के लिए एडजस्टेड नेट बैंक क्रेडिट (एएनबीसी) का उप- लक्ष्य 8% रखा है, जो प्राथमिकता क्षेत्र ऋण के अंतर्गत एएनबीसी के 18% लक्ष्य के तहत है.

कृषि ऋण- यूनियन बैंक ऑफ इंडिया के लिए एक प्रमुख क्षेत्र :

हमारे बैंक में ऋण के तीन महत्वपूर्ण क्षेत्रों अर्थात रैम क्षेत्र (रिटेल, कृषि और सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्यम) में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है. बैंक ने किसानों को पूर्ण सहयोग प्रदान करने के लिए 2000 से अधिक ग्रामीण विकास अधिकारियों (आरडीओ) की एक मजबूत टीम नियुक्त कर रखी है. बैंक की 1300 से अधिक ग्रामीण शाखाओं में से भौगोलिक आधार पर 700 से अधिक शाखाओं की पहचान कृषि केन्द्रित शाखाओं के रूप में की गई है. मार्च 2017 को कुल कृषि ऋण, एएनबीसी का 19.27 प्रतिशत रहा. मार्च 2017 को छोटे और सीमांत किसानों को कुल अग्रिम, एएनबीसी के 8 प्रतिशत के बेंचमार्क के सापेक्ष 9.16 प्रतिशत रहा. वित्त वर्ष 2016-17 के दौरान 1.81 लाख नए किसानों को ऋण सुविधा प्रदान की गई. रू.2,492 करोड से अधिक की ऋण सुविधा के साथ 1.95 लाख अतिरिक्त

किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) जारी किए गए. विशेष कृषि ऋण योजना (एसएसीपी) के तहत वित्त वर्ष 2016-17 के लिए रू.20,500 करोड के लक्ष्य के सापेक्ष कुल रू.22,956 करोड का वितरण किया गया. कृषि क्षेत्र में सतत उन्नति हेतु यूनियन बैंक ऑफ इंडिया सदैव तत्पर है.

हमें अपने अन्नदाता 'किसान' के प्रति कृतज्ञ होना चाहिए; क्योंकि उनके किसानी करने से ही हमारा अस्तित्व सुरक्षित है. यह दु:खद है कि कई किसान ऋण चुकाने की असमर्थता के कारण आत्महत्या कर रहे हैं. ऐसा नहीं है कि हम संवेदनशील नहीं हैं, लेकिन कृषि जगत की महत्ता को देखते हुए हमें अतिरिक्त सामूहिक प्रयास करने हैं. राष्ट्र का हित इसी में है कि हम विपरीत परिस्थितियों से किसानों को जल्दी बाहर निकालें और एक खुशहाल राष्ट्र की संकल्पना को साकार करें.

शुभकामनाओं सहित

भवदीय

(एस एन कौशिक)

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया

एस एस यादव **रामगोपाल सागर**

सम्पादक की कलम से.....

विल रोजर्स के अनुसार, 'सृष्टि के प्रारम्भ से तीन महान आविष्कार हुए हैं- आग, पहिया तथा केन्द्रीय बैंकिंग.' इसी क्रम में यदि हम कहें कि कृषि या खेती की विधा की खोज इन आविष्कारों से कम महत्वपूर्ण नहीं है, तो अतिशयोक्ति नहीं होगी. इसमें कोई संदेह नहीं कि आग की खोज से आदि मानव के जीवन में चमत्कारिक परिवर्तन आया. आग के सहारे आदि मानव एक ओर जहां हिंसक व जंगली जानवरों से अपनी सुरक्षा करने में सक्षम हुआ, वहीं स्वत: उगी वनस्पतियों, उनके फलों- फूलों तथा मांस को भून कर खाने से स्वादिष्ट भोजन का आनंद पाने लगा. सभ्यता की ओर बढने की दिशा में यह एक बहुत बडा कदम था और आगे चलकर पहिये की खोज ने तो उसके श्रम को बहुत आसान कर दिया. यह निर्विवाद सत्य है कि आज भी इन चमत्कारिक खोजों का कोई विकल्प नहीं है और इनके बिना संसार की हर क्रिया-प्रक्रिया आदिम युग के समान स्थिर व जडवत सी हो जायेगी. तथापि इस दृष्टि से कृषि को अन्य आविष्कारों से अधिक महत्वपूर्ण कहा जा सकता है कि भूख की शान्ति का साधन यही है. क्षुधा पीर ही मनुष्य सहित सभी जीव-जंतुओं को मेहनत करने हेतु विवश/ प्रेरित करती है, अन्यथा 'पेट नहीं- तो भेंट नहीं' वाली कहावत ही लागू होती.

जानवरों का शिकार कर तथा स्वत: उगी वनस्पतियों, उनके फलों से अपना पेट भरने वाले आदि मानव को भूमि में किसी पौधे का बीज बो कर उसे उगाने की जानकारी जब प्राप्त हुई, तो वह खुशी से उछल पडा. एक दाने से अनेक दाने प्राप्त करने की इस विधा ने भोजन जुटाने की उसकी समस्या का बहुत बडा व चिर-स्थायी समाधान प्रस्तुत कर दिया. भोजन की तलाश में दर-दर भटकता आदि मानव का समूह एक स्थान पर स्थायी रूप में रहने लगा, जो उसके सभ्य जीवन की शुरूआत में एक बहुत बडा कदम था. इस प्रकार कृषि या खेती करने की विधा सृष्टि की सर्वाधिक महत्वपूर्ण खोज कही जा सकती है, जिसने मनुष्य को क्षुधा-पूर्ति की चिन्ता से मुक्त कर उसे अपने मन-मस्तिष्क, बुद्धि एवं शक्ति को विभिन्न विधाओं/ आयामों की खोज में लगाकर चहुमुखी विकास करने व नित नई खोजें करने का अवसर प्रदान किया और जिसका प्रतिफल हम आज के इस सभ्य, सुसंस्कृत, विकसित व सुन्दर-सलोने संसार के रूप में देख रहे हैं.

इस प्रकार कृषि आदि काल में भी मनुष्य सहित जीव-मात्र के पोषण का आधार रही, आज भी है और भविष्य में भी रहेगी. यद्यपि समय के साथ संसार में निरंतर नई विधाओं, क्रिया-कलापों एवं ज्ञान- विज्ञान के विविध क्षेत्रों की खोज हो रही है, तथापि जीवन का आधार होने के कारण कृषि, सर्वाधिक महत्वपूर्ण विधा है. विश्व के सभी देशों द्वारा कृषि विकास को प्राथमिकता दी गई है तथा हमारे देश में कृषि तो अर्थव्यवस्था की रीढ ही कही जाती है. भारत सरकार द्वारा वर्तमान वर्ष के बजट में जिन क्षेत्रों को विकास में सर्वाधिक प्राथमिकता दी गई है, वे कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित हैं. सरकार की इस मुहिम में हमारा बैंक हमेशा सक्रिय भागीदार रहा है. अत: कृषि विकास में हमारे बैंक के योगदान पर विशेष जोर देने की दृष्टि से बैंकिंग विषय पर हिन्दी में प्रकाशित होने वाली पुस्तकों के क्रम में इस वर्ष 'कृषि विकास- विविध आयाम' नामक पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है.

उल्लेखनीय है कि आज भी भारत की अधिकांश जनसंख्या गांवों में रहती है तथा कृषि व उसकी सहायक गतिविधियों से जुडी है. देश का सर्वाधिक कुशल व अकुशल श्रमबल इसके साथ जुडा है. देश की 125 करोड से अधिक जनसंख्या, खाद्यान्न के लिए कृषि पर ही निर्भर है; लेकिन भारतीय अर्थव्यवस्था एवं सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान निरंतर घटता जा रहा है. कृषि पर जनसंख्या का दबाव निरंतर बढने, ग्रामीण क्षेत्रों का अस्वस्थ वातावरण, गैर-कृषि गतिविधियों का समुचित विकास न होने, अपर्याप्त कृषि निवेश, ग्रामीण जनता की अज्ञानता एवं अशिक्षा आदि कुछ प्रमुख कारण हैं, जो कृषि उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव डालते हैं. इसके अतिरिक्त जोतों के छोटे आकार, काफी सीमा तक कृषि की मानसून पर निर्भरता, लगभग आधे कृषि क्षेत्र के असिंचित होने, अकाल, बाढ, सूखा जैसी प्राकृतिक आपदाओं आदि के कारण हमारे देश में कृषि की औसत उपज अन्य देशों की तुलना में कम है.

अत: कृषि क्षेत्र को वित्तीय सहायता बढ़ाना आवश्यक है. इस दृष्टि से बैंकों के लिए अपने कुल समायोजित बैंक ऋण का न्यूनतम 40% प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के अन्तर्गत उपलब्ध कराना सरकार द्वारा अनिवार्य किया गया है, जिसमें से 18% कृषि क्षेत्र के लिए निर्धारित है. इसके अतिरिक्त कृषि के सम्पूर्ण विकास के लिए इसे उद्योग के रुप में विकसित किए जाने एवं कृषि की सहायक गतिविधियों को और अधिक व्यवस्थित एवं यांत्रिक बनाए जाने की आवश्यकता है.

सीमित संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग किस प्रकार किया जाए, क्षेत्र विशेष की जलवायु को देखते हुए वहां किस प्रकार की फसल उगायी जाए, असिंचित क्षेत्र में किन फसलों को उगाया जाए; किस प्रकार के बीजों का उपयोग किया जाए, बहु-कृषि व्यवस्था अर्थात एक ही कृषि भूमि पर किस प्रकार एक साथ दो या अधिक प्रकार की फसलें उगायी जाएं, ताकि पानी का अधिकतम व अनुकूलतम उपयोग हो सके तथा मिट्टी के सही परीक्षण आदि सभी बातों के लिए किसानों को साक्षर किए जाने की आवश्यकता

है. इसी प्रकार खेती में प्रयुक्त ऊर्जा जैसे डीजल, बिजली आदि किसानों को सस्ती दर पर उपलब्ध करायी जानी चाहिए. यह सुखद पहलू है कि भारत सरकार द्वारा इस वर्ष के बजट में कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र के विकास के लिए रु.10 लाख करोड के ऋण का प्रावधान किया गया है.

कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र के विकास से जुडी एक ज्वलंत समस्या है कृषि उपजों के प्रभावी विपणन की. सही विपणन व्यवस्था के अभाव में किसानों को अपनी उपज बहुत कम दामों में दलालों को बेचनी पडती है. अतः उन्नत किस्म की कृषि मंडियों का होना आवश्यक है. कभी-कभी विक्रय का सही समय नहीं होता है, अतः उपज के उचित भंडारण की सुविधा भी होनी आवश्यक है.

इन सभी विषयों को समाहित करते हुए 'कृषि विकास-विविध आयाम' नामक इस पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है. पुस्तक में समाहित लेखों में कृषि की परम्परागत विधियों से लेकर आधुनिकतम कृषि की विधाओं पर प्रकाश डाला गया है. कृषि विकास में आ रही समस्याओं, उनके समाधान व उन्नतिशील खेती के विविध तरीकों की जानकारी भी इसमें दी गई है. साथ ही कृषि की विभिन्न सहायक गतिविधियों के विविध पहलुओं पर भी व्यापक जानकारी प्रस्तुत है. इस दिशा में क्षेत्र कर्मियों को आ रही समस्याओं के समाधान की जानकारी भी लेखकों द्वारा सरल, सहज व सुग्राह्य शैली में प्रस्तुत की गई है.

किसी भी संकल्पना को साकार करने के लिए सर्वोच्च शिखर से आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है और हमारे इस प्रयास में सर्वोच्च स्तर से निरंतर मार्गदर्शन प्राप्त हुआ है. पुस्तक को मूर्त रुप देने हेतु शीर्षकों के चयन व प्राप्त आलेखों की गुणवत्ता की जांच में ग्रामीण एवं कृषि कारोबार विभाग के महाप्रबंधक श्री एस.एन. कौशिक के मार्गदर्शन व सहयोग तथा राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग के संरक्षक श्री आर.आर. मोहंती, महाप्रबंधक (मासंप्र) के प्रेरणादायी मार्गदर्शन के लिए हम हृदय से आभार व्यक्त करते हैं. पुस्तक हेतु प्राप्त उपयोगी एवं ज्ञानवर्धक लेखों के लिए सभी रचनाधर्मियों, इन्हें प्रकाशन योग्य बनाने में मिले सहयोग के लिए श्रीमती सविता शर्मा, श्री वी आर राजू, सुश्री प्रियंका शर्मा, श्री देवाशीष मजुमदार व श्री अमित महतो के साथ-साथ इस पुस्तक के प्रकाशन में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग करने वाले सभी साथियों के प्रति भी हम आभार व्यक्त करते हैं. आशा है कि भविष्य में भी उनका यह सहयोग एवं स्नेह इसी प्रकार प्राप्त होता रहेगा. हमें यह भी विश्वास है कि पूर्व में प्रकाशित पुस्तकों की तरह यह पुस्तक भी पाठकों की अपेक्षाओं पर खरी उतरेगी. शुभकामनाओं सहित,

आपका

(एस एस यादव) **(रामगोपाल सागर)**

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया Union Bank of India

अनुक्रम

- **प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना- एक सार्थक पहल**
  - विमलेश जैन 1
- **भारतीय कृषकों की समस्याएं एवं समाधान**
  - कृष्ण कुमार यादव 7
- **भारतीय कृषि में प्रच्छन्न बेरोजगारी**
  - आनंद कुमार 14
- **छोटी जोत -कृषि के विकास में अवरोध**
  - जय प्रकाश चौधरी 20
- **ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों के विकास में कृषि की भूमिका**
  - धनंजय गंधे 29
- **कृषि का विकास: बेरोजगारी का निदान**
  - श्वेता सिंह 34
- **भारतीय कृषि एवं हरित क्रांति**
  - प्रियंका शर्मा 42
- **भारतीय कृषि एवं मानसून**
  - विजय कुमार पाण्डेय 49
- **खेतिहर मजदूर- समस्याएं एवं समाधान**
  - रामजीत सिंह 55
- **परम्परागत एवं आधुनिक कृषि**
  - देवाशीष मजूमदार 60

❐ **कृषि निर्यात- संभावनाएं एवं विस्तार**
- सपन चौधरी 64

❐ **कृषि वानिकी**
- सविता शर्मा 67

❐ **बागवानी असीम संभावनाएं**
- मोहन बोधनकर 72

❐ **संविदा खेती: एक विकल्प**
- अर्पित जैन 79

❐ **कृषि ऋण एवं जोखिम प्रबंधन**
- हृषिकेश मिश्रा 86

❐ **कृषि क्षेत्र में भारत सरकार की नवीनतम पहल**
- सुशांत त्रिवेदी 94

❐ **बजट में कृषि विकास हेतु विशेष प्रावधान**
- बी. पी. शर्मा 99

❐ **कृषि एवं सहायक गतिविधियां एक दूसरे की पूरक - मत्स्यपालन, कुक्कुटपालन, मधुमक्खी पालन**
- प्रभात अम्बष्ट 105

❐ **पशु पालन- ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक आधार**
- लुकमान अली खान 109

❐ **श्वेत क्रांति- चुनौतियां एवं उपलब्धियां**
- शिल्पा शर्मा सरकार 116

❐ **दुग्ध उत्पादन एवं प्रसंस्करण: विभिन्न आयाम**
- राजकुमार सिंह 123

❐ **श्वेत क्रांति में कृत्रिम गर्भाधान का योगदान**
- निधि सोनी 129

❐ **कृषि विकास में बैंकों की भूमिका**
- धीरज शर्मा 133

❐ **भारतीय किसानों की पारंपरिक एवं आधुनिक ऋणग्रस्तता**
- बी. एन. तिवारी 138

❐ **किसान क्रेडिट कार्ड - कार्ड एक-लाभ अनेक**
- अरविन्द कुमार तिवारी 142

❐ **लघु एवं सीमांत कृषकों के लिए कृषि ऋण के विभिन्न अवसर**
- बी. एम. सैनी 148

❐ **स्वयं सहायता समूह - सफलता के आयाम**
- जयदेव साव 154

❐ **संयुक्त देयता समूह (जेएलजी)**
- रवि हिंदुजा 163

❐ **कृषि एवं सहकारी संस्थाएं**
- सुनील दत्त 168

❐ **कृषक क्लब**
- उदय बी ठाकुर 175

❐ **सतत हरित क्रान्ति**
- संतोष श्रीवास्तव 179

❐ **खाद्य एवं कृषि प्रसंस्करण**
- पुष्कर कुमार सिन्हा 184

❐ **जैविक खेती - क्यों और कैसे**
- तुषार श्रीवास्तव 190

❐ **वित्तीय साक्षरता एवं कृषि विकास**
- पी.सी. पाणिग्रही 197

❐ **कृषि व्यवसाय केंद्र**
- पुष्पांजलि कुमारी 203

❐ **कृषि पर्यटन की बढ़ती संभावनाएं**
- अजीत मराठे 208

❐ **कृषि ऋण- अनर्जक आस्तियों के कारण एवं निवारण**
- राजीव श्रीवास्तव 212
❐ **ग्रामीण भंडारण योजना**
- प्रतिभू बनर्जी 222
❐ **गैर पारंपरिक ऊर्जा: एक वैकल्पिक स्त्रोत**
- विक्रांत कुमार 229
❐ **कृषि विपणन**
- नितिन गोसावी 232
❐ **भारत में कृषि उत्पाद बाजार**
- दयानन्द चौधरी 238
❐ **हाइटेक कृषि**
- प्रदीप सिंह 245
❐ **परिशुद्ध खेती (Precision Farming)**
- सज्जन कुमार चौहान 254

विमलेश जैन

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना: एक सार्थक पहल

भारत कृषि प्रधान देश है एवं हमारे देश की अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती है, जिनका मुख्य कार्य कृषि एवं कृषि से संबंधित गतिविधियां करना है. सिंचाई के पर्याप्त साधन नहीं होने एवं पानी की उपलब्धता कम होने के कारण हमारे देश में कृषि उत्पादन मुख्यतः बारिश पर निर्भर करता है. यदि बारिश अच्छी होती है, तो किसान के खेत में पैदावार भी अच्छी होती है एवं भूमि में भी बारिश का पानी जाने से किसान दूसरी फसल भी ले सकता है. बारिश की कमी अथवा समय पर बारिश नहीं होने से कृषि उत्पादन कम रहता है, जिससे किसानों की आमदनी प्रभावित होती है. इससे किसानों को राहत पहुंचाने के लिए पूर्व में भी सरकार द्वारा राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना एवं मौसम आधारित फसल बीमा योजना लागू की गयी थी, परन्तु इन योजनाओं में बीमा प्रीमियम की राशि अधिक होने एवं बीमा कम्पनियों द्वारा दावों का समय पर भुगतान नहीं करने के कारण ये योजनाएं सफल नहीं हुई एवं लगभग 23% किसान ही फसल बीमा सुविधा का लाभ ले रहे थे.

अतः इन कमियों को दूर करते हुए केन्द्र सरकार द्वारा पूरे भारतवर्ष के लिए एक नई फसल बीमा योजना **'प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना'** 2016 से लागू की गयी, जो किसानों को प्राकृतिक आपदाओं से होने वाले फसलों के नुकसान से कम बीमा प्रीमियम पर बचाती है. इस बीमा योजना में बीमा दावों के शीघ्र निपटान करने के लिए नवीन तकनीकों एवं नुकसान के शीघ्र आकलन हेतु फोन एवं रिमोट सेंसिंग आदि का प्रयोग किया जाता है. योजना के तहत फसल बीमा में कवर करने के लिए राज्य सरकार अधिसूचित फसल की घोषणा करती है एवं बैंक द्वारा स्वीकृत फसली ऋण के सभी खाते अनिवार्यतः फसल बीमा योजना में कवर होते हैं. यदि अधिसूचित फसल जिस पर बैंक से फसल ऋण लिया गया है एवं उसका बीमा नहीं करवाया गया है, तो संबंधित बैंक शाखा इसके लिए उत्तरदायी होगी. अन्य कृषक जो फसल बीमा कराने के इच्छुक हों, वे भी नजदीकी बैंक शाखा में जाकर फसल बीमा करा सकते हैं.

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना की प्रमुख जानकारी निम्नानुसार है :

1. **योजना का लक्ष्य**

अ) आकस्मिक घटनाओं/ प्राकृतिक आपदाओं से हुई फसल की हानि/ क्षति से पीड़ित किसानों को वित्तीय सहायता प्रदान करना.

ब) खेती को चालू रखने के लिए किसानों की आय को स्थिर करना.

स) किसानों को नवीन एवं आधुनिक कृषि पद्धतियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना.

द) कृषि क्षेत्र में ऋण के प्रवाह को बनाए रखना, जो किसानों को जोखिम से बचाने के साथ-साथ उनकी खाद्य सुरक्षा, फसल विविधीकरण एवं प्रगति को बढ़ाने एवं कृषि प्रतिस्पर्धा में योगदान देगी.

2. योजना के दायरे में आने वाले कृषक :

अ) अधिसूचित क्षेत्रों में अधिसूचित फसलें उगाने वाले बटाईधारकों एवं किराये पर कृषि करने वाले कृषकों सहित समस्त किसान योजना के दायरे में आएंगे. अधिसूचित/ बीमित फसल पर किसानों का बीमित हित होना चाहिए. गैर-ऋणी कृषकों को उनके राज्य में लागू भूमि कब्जा प्रमाण पत्र एवं बटाई धारकों/ किराये पर कृषि करने वालों के लिए संबंधित राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित/ अनुमत लागू अनुबंध/ समझौता विवरण/ अन्य दस्तावेज साक्ष्य के रुप में प्रस्तुत करना आवश्यक है.

ब) **अनिवार्य घटक:** अधिसूचित फसल के लिए वित्तीय संस्थानों से फसली ऋण की सुविधा प्राप्त कर रहे सभी कृषक अनिवार्य रुप से इसके दायरे में आएंगे.

स) **स्वैच्छिक घटक :** गैर ऋणी किसानों के लिए यह योजना वैकल्पिक होगी.

द) योजना के अन्तर्गत अनुसूचित जाति/ अनुसूचित जनजाति की महिला कृषकों को दायरे में लाने के लिए विशेष प्रयास किए जाएंगे.

3. शामिल की जाने वाली फसलें :

1. खाद्य फसलें (अनाज, मोटा अनाज एवं दलहन);

2. तिलहन;

3. वार्षिक कॉमर्शियल/ बागवानी संबंधी फसलें

4. बीमा जोखिम का दायरा:

अ) **बीजारोपण एवं पौधारोपण जोखिम से रोकथाम :** वर्षा के अभाव अथवा विपरीत मौसमी परिस्थितियों के कारण बीमित क्षेत्र में बीजारोपण/ पौधारोपण नहीं होना.

ब) **खड़ी फसलें (बीजारोपण से फसल कटाई तक):** गैर रोकथाम वाले जोखिमों जैसे सूखा, लम्बे अन्तराल से बारिश न होना, बाढ़, सैलाब, बीमारी एवं महामारी, चट्टानें खिसकना, प्राकृतिक आग एवं बिजली गिरना, बवंडर, ओला-वृष्टि, चक्रवात, प्रचंड तूफान, अंधड़ एवं आंधी के कारण प्रभावित होने वाली उपज की क्षति आदि की सुरक्षा हेतु विस्तृत जोखिम बीमा प्रदान करना.

स) **फसल कटाई के बाद होने वाली हानियां:** जिन फसलों को काटने के बाद सुखाने एवं कटाई के बाद खेतों में फैलाना आवश्यक हो, उनके संबंध में चक्रवाती वर्षा एवं बेमौसमी वर्षा से बचाव के लिए फसल कटाई के बाद अधिकतम दो सप्ताह की अवधि के ही लिए जोखिम सुरक्षा प्रदान करना.

द) **स्थानीय आपदाएं:** अधिसूचित क्षेत्र में अलग-थलग पड़े हुए खेतों में ओलावृष्टि, चट्टान खिसकने एवं सैलाब जैसे चिह्नित स्थानीय जोखिमों के परिणामस्वरुप होने वाली हानि/ क्षति.

5. बीमित राशि/ जोखिम सीमा:

अ) बीमित राशि प्रति हेक्टेयर ऋणी एवं विभिन्न फसलों के लिए तय स्केल ऑफ फाइनेंस- ऋणी कृषकों एवं अन्य कृषकों, दोनों के लिए समान होगी एवं जिला स्तरीय तकनीकी समिति द्वारा निर्धारित स्केल ऑफ फाइनेंस एवं एसएलसीसीसीआई द्वारा पूर्व घोषित एवं अधिसूचित के बराबर होगी. स्केल ऑफ फाइनेंस के लिए कोई अन्य गणना लागू नहीं होगी. किसान के लिए बीमित राशि बीमा के लिए किसान द्वारा क्षेत्र की अधिसूचित फसल एवं प्रति हेक्टेयर स्केल ऑफ फाइनेंस के बराबर होगी. कृषि के अन्तर्गत क्षेत्र को सदैव हेक्टेयर के रुप में वर्णित किया जाएगा.

ब) सिंचित एवं गैर-सिंचित क्षेत्र के लिए बीमित राशि अलग-अलग होगी.

6. मौसमी अनुशासन: ऋणी एवं गैर ऋणी किसानों, दोनों ही के लिए निर्दिष्ट तारीख एक ही होगी. विभिन्न फसलों के लिए राज्यवार निर्दिष्ट तारीख समय- समय पर प्रकाशित मुख्य फसलों के कैलेंडर पर आधारित होगी. उपयुक्त अवधि एवं तिथियों में सरकार परिवर्तन कर सकती है.

क्र.	गतिविधि	खरीफ	रबी
1.	अनिवार्य आधार पर दायरे में आए ऋणी कृषकों के लिए ऋण की अवधि (ऋण स्वीकृत/ नवीनीकृत)	अप्रैल से जुलाई	अक्तूबर से दिसम्बर
2.	प्रस्तावों को प्राप्त करने/ किसानों के खातों से प्रीमियम नामे करने की निर्दिष्ट तारीख (ऋणी एवं गैर ऋणी)	31 जुलाई	31 दिसम्बर
3.	समेकित घोषणा पत्र/ अनिवार्य आधार पर दायरे में आए ऋणी कृषकों एवं दायरे में स्वैच्छिक आधार पर आए गैर ऋणी किसानों के प्रस्ताव बैंक शाखाओं (वाणिज्यिक बैंक/ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक) से संबंधित बीमा कम्पनियों एवं पीएसीएस के लिए डीसीसी शाखाओं से प्राप्त होने की निर्दिष्ट तारीख	ऋणी कृषकों के लिए निर्दिष्ट तारीख के बाद 15 दिनों एवं गैर ऋणी कृषकों के लिए 7 दिनों के अन्दर.	

7. कृषकों से प्रस्तावों एवं प्रीमियम का संग्रहण:

वाणिज्यिक बैंकों की सभी शाखाएं इस उद्देश्य के लिए नोडल शाखाओं के रुप में कार्य करेंगी. संबंधित क्षेत्रीय कार्यालय इन शाखाओं के साथ समन्वय रखेंगे तथा निर्दिष्ट तारीख के अन्दर बीमा कम्पनियों को समेकित प्रस्तावों को प्रेषित करेंगे तथा बीमा विवरण की सॉफ्ट प्रति फसल बीमा के पोर्टल में अपलोड करेंगे.

जब कभी भी शाखाएं अधिसूचित क्षेत्र में अधिसूचित फसल हेतु ऋण मंजूर करेंगी, तो फसल ऋण की केवल अधिसूचित फसल के स्केल ऑफ फाइनेंस एवं ऋणी कृषक की अधिसूचित फसल के निर्धारित एकड़ भूमि के क्षेत्र के बराबर ही मौसमी अनुशासन के अनुसार अनिवार्य जोखिम के अन्तर्गत शामिल किया जाएगा. फसल के मौसम तत्व के अनुसार शाखाएं अधिसूचित फसल के अन्तर्गत स्केल ऑफ फाइनेंस एवं घोषित फसल भूमि के आधार पर खरीफ एवं रबी, दोनों ही मौसमों के लिए अलग-अलग ऋण राशि की पात्रता की गणना करेंगी.

संवितरण करने वाली शाखाएं मौसमी अनुशासन के अनुसार फसल बीमा प्रीमियम की जानकारी का मासिक विवरण फसलवार एवं बीमा इकाईवार तैयार करेंगी. शाखाएं ऋण आवेदन में उल्लिखित भूमि की मात्रा अथवा किसान द्वारा बाद में घोषित वास्तविक बुवाई क्षेत्र के अनुसार बीमित फसल में जोखिम को बांट देंगी.

शाखाएं अपने अधिकार क्षेत्र के बीमा प्रस्तावों/ विवरणों को समेकित करेंगी एवं बीमा प्रीमियम के लिए किए गए प्रेषण के विवरण/ आरटीजीएस/ एनईएफटी के साथ बीमा कम्पनी को राज्य सरकार द्वारा चयनित फसल एवं मौसम द्वारा निर्धारित, निर्दिष्ट तारीख के अनुसार प्रेषित करेंगी.

कृषक ऋण आवेदन में प्रस्तुत मूल फसल से बीमित फसल बदल सकता है; परन्तु ऐसे परिवर्तन की जानकारी संबंधित बैंक शाखा को अग्रिम में देनी होगी; ताकि उनकी प्रस्तावित फसल का बीमा कराया जा सके. गैर-अधिसूचित फसल से अधिसूचित फसल में परिवर्तन बिना बुवाई प्रमाण पत्र के अनुमत नहीं होगा.

४. फसल बीमा प्रीमियम दर, जो किसान से वसूल की जाएगी, यह पूरे देश में फसल/ क्षेत्रों के लिए समान है:

क्र.	मौसम	फसल	किसान द्वारा चुकाया जाने वाला अधिकतम बीमा प्रभार
1.	खरीफ	सभी खाद्य अनाज एवं तिलहन की फसलें (सभी अनाज, मोटे अनाज, दलहन एवं तिलहन फसलें)	बीमित राशि अथवा बीमांकित राशि, जो भी कम हो, का 2%.
2.	रबी	सभी खाद्य अनाज एवं तिलहन की फसलें (सभी अनाज, मोटे अनाज, दलहन एवं तिलहन फसलें)	बीमित राशि अथवा बीमांकित राशि, जो भी कम हो, का 1.5%.
3	खरीफ एवं रबी	वार्षिक वाणिज्यिक/ वार्षिक बागवानी फसलें	बीमित राशि अथवा बीमांकित राशि, जो भी कम हो, का 5%.

बीमांकित राशि की गणना संबंधित फसलों के फसल ऋण के अनुमोदित स्केल ऑफ फाइनेंस एवं फसल के क्षेत्र के अनुसार की जाएगी.

राज्य सरकार/ केन्द्र शासित प्रदेश द्वारा फसल बीमा के क्रियान्वयन हेतु नोटिफिकेशन जारी किया जाएगा, जिसमें फसल बीमा के तहत कवर की जाने वाली फसलें, क्षेत्र, स्केल ऑफ फाइनेंस, बीमित राशि, बीमा प्रीमियम दरें, जो कृषक को देनी हैं, बीमा प्रीमियम सब्सिडी राशि, विभिन्न गतिविधियों के लिए कट ऑफ डेट आदि का उल्लेख होगा एवं वह प्रदेश के लिए जिला अनुसार बीमा कम्पनियों का चयन करेगी एवं बजट में फसल बीमा प्रीमियम सब्सिडी का प्रबंध करेगी. बीमा प्रीमियम राशि पर सेवा कर देय नहीं है.

प्राकृतिक आपदाओं एवं आकस्मिक घटनाओं से फसल को हुई क्षति का आकलन राज्य सरकार एवं बीमा कम्पनी के प्रतिनिधियों द्वारा नोटिफिकेशन में निर्धारित निश्चित प्रक्रिया के अनुसार किया जाएगा एवं तद्नुसार बीमा क्लेम का भुगतान किया जाएगा. यदि बाढ़ अथवा अकाल के कारण फसलों को 50% से अधिक नुकसान हुआ है, तो ऑन एकाउंट बीमा क्लेम भुगतान का भी प्रावधान है.

फसल बीमा योजना के तहत कवर सभी किसानों की जानकारी बैंकों को फसल बीमा पोर्टल में अनिवार्य रुप से फीड करनी होगी, जिससे कि सभी किसानों की जानकारी, फसल अनुसार सूचना सरकार के पास उपलब्ध रहे. साथ ही फसल के नुकसान होने की स्थिति में तुरन्त बीमा क्लेम की राशि की गणना कर भुगतान किया जा सके.

यह योजना किसानों के लिए बहुत फायदेमंद है, जिसमें बहुत ही कम बीमा प्रीमियम पर वह प्राकृतिक आपदाओं से होने वाली फसल के नुकसान की प्रतिपूर्ति बीमा क्लेम द्वारा कर सकता है. अतः योजना का अधिक से अधिक प्रचार प्रसार कर सभी किसानों (फसली ऋण वाले एवं बिना ऋण वाले) को प्रधान मंत्री फसल बीमा का लाभ उठाने के लिए प्रेरित करना चाहिए, जिससे वह फसलों को होने वाले नुकसान से बच कर अच्छा जीवनयापन कर सके.

पीएमएफबीवाई योजना एवं इसके परिचालानात्मक दिशानिर्देश www.agricoop.nic.in एवं फसल बीमा पोर्टल www.agri-insurance.gov.in. पर अपलोड हैं. हमारे बैंक द्वारा इस संबंध में अनुदेश परिपत्र क्रमांक 407/2016 दिनांक 22.03.2016 जारी किया है, जिसमें योजना की विस्तृत जानकारी एवं कृषि विभाग द्वारा जारी परिचालानात्मक अनुदेश उपलब्ध हैं.

विमलेश जैन, उप महाप्रबंधक, ग्रामीण एवं कृषि कारोबार विभाग, केन्द्रीय कार्यालय, मुम्बई

कृष्ण कुमार यादव

भारतीय कृषकों की समस्याएं एवं समाधान

कृषि प्रकृति का अनमोल उपहार है. शताब्दियों से कृषि पर ही मानव सभ्यता का आधार टिका हुआ है. कृषि का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है, इसमें खाद्यान्नों के साथ फल व सब्जियों का उत्पादन, पशुपालन, जल व भूमि संरक्षण, पर्यावरण सुरक्षा आदि वह सब कुछ शामिल है, जिसके अभाव में पृथ्वी पर मानव सभ्यता की कल्पना भी नहीं की जा सकती है. कृषि हमारे देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ होने के साथ ही साथ हमारे यहां की संस्कृति, नीति, संस्कार व आम चेतना भी मुख्यतः कृषि-समाज ही है. हरित क्रांति के पश्चात हमारे देश के कृषि उत्पादन में लगातार वृद्धि हुई है; परंतु आज भी कृषि उत्पादकता का स्तर अन्य विकसित देशों की तुलना में कम है. सीमित विकास के साथ आज भी भारतीय कृषक परम्परावादी है; क्योंकि खेती व्यवसाय के रूप में नहीं; बल्कि जीविकोपार्जन के लिये की जाती है.

भारतीय कृषक इतने मेहनतकश होते हैं कि वे पथरीली व रेतीली भूमि से भी सोना उपजा लेते हैं. वे अधिक पढ़े-लिखे नहीं होते; परंतु उन्हें खेती की बारीकियों का ज्ञान होता है. वे मौसम के बदलते मिजाज को पहचान कर तदनुसार नीति निर्धारित करने में दक्ष होते हैं. भारतीय किसानों की इसी विशेषता को देखकर किसी ने गौरवपूर्ण चरित्र चित्रण करते हुए इन्हें कर्दम से पोषित होने पर भी पवित्र, शोषित होने पर भी निर्माता, अशिक्षित होने पर भी शिक्षितों से अधिक शिक्षित, दृढ़- चरित्र, दुख-सहिष्णु व अभय-चित्त बताया है. वर्तमान संदर्भ में भी भारतीय कृषक आधुनिक विष्णु हैं. वे अन्न, दूध, दही, फल, सब्जी आदि पैदा कर पूरे देश का पोषण करते हैं, लेकिन बदले में उन्हें उचित पारिश्रमिक तक नहीं मिल पाता और उनका जीवन अभावों में ही गुजर जाता है.

स्वतंत्रता से पूर्व व स्वतंत्रता के पश्चात दशकों बीत जाने के बाद भी भारतीय कृषकों की दशा में मामूली अंतर ही दिखाई देता है. जिन अच्छे किसानों की बात की जाती है, उनकी संख्या उंगलियों पर गिनी जा सकती है. पुरानी परम्परागत विधियों, पूँजी की कमी, भूमि सुधार की कमी, विपणन एवं वित्त संबंधी कठिनाइयों के साथ-साथ बढ़ती

आबादी, औद्योगीकरण एवं शहरीकरण के कारण कृषि योग्य भूमि के क्षेत्रफल में निरंतर गिरावट से कृषकों की समस्याएँ बढ़ी हैं. आज कृषकों की खुशहाली की बात तो सभी स्तरों पर होती है तथा उनके लिए योजनाएं भी बनती हैं, परंतु उनकी मूलभूत समस्याएं ज्यों की त्यों बनी हुई हैं. आइये, हम आज के दौर में भारतीय कृषकों की प्रमुख समस्याएं एवं उनके समाधान पर चर्चा करते हैं:

भूमि का उप-विभाजन एवं उप-खण्डन: भारत में 90% कृषकों के पास कुल भूमि का मात्र 38% भाग ही है. इसका अर्थ यह हुआ कि एक किसान के पास औसतन मात्र 0.2 हेक्टेयर से भी कम भूमि है. इतना ही नहीं, यह भूमि भी कई टुकड़ों में बँटी हुई है. इतने छोटे-छोटे भू-खण्डों पर खेती करना किसी भी किसान के लिए आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद नहीं हो सकता है. इस समस्या के समाधान हेतु सभी राज्यों में चकबंदी योजनाएं चालू तो हैं, पर वर्षों बाद भी स्थिति में ज्यादा सुधार नहीं हुआ है. लघु व सीमांत किसान आज भी छोटे-छोटे व दूर-दूर स्थित भूखंडों पर खेती के लिए अभिशप्त हैं. अत: सरकार द्वारा कुछ कठोर निर्णय लेते हुए चकबंदी व्यवस्था को और प्रभावी बनाना आवश्यक है. साथ ही पंचायतों एवं सहकारी समितियों का सहयोग प्राप्त कर भूमि के अधिकांश भाग को खेती के लिये लाभदायक बनाने का प्रयास भी किया जाना आवश्यक है. इसके अतिरिक्त निम्न कार्य किये जाने अपेक्षित हैं :

भूमि प्रबंधन: देश में भूमि एवं फसल प्रबंधन की उचित व्यवस्था नहीं होना भी भारतीय कृषकों की एक प्रमुख समस्या है. तदर्थ आधार पर नीतियों व प्रबंधन का संचालन वे लोग करते हैं, जिन्हें इस क्षेत्र की विशेष जानकारी नहीं होती. अत: राष्ट्रीय स्तर पर ऐसी नीति अति आवश्यक है, जिससे किसानों को कौन सी फसल बोनी है और उनके लिए आवश्यक जलवायु, पानी, भूमि आदि कैसी होनी चाहिए आदि का परीक्षण कर उन्हें शिक्षित किया जा सके. इससे उत्पादन भी बढ़ेगा और कृषक भी व्यावहारिक दृष्टि से प्रशिक्षित होंगे.

भूमि की न्यून उत्पादकता: पिछली सदी के सातवें दशक तक हमारे देश के अधिकांश भागों में औसत उत्पादन स्तर अधिकांश विकसित व कई विकासशील देशों (इण्डोनेशिया, फ़िलीपीन्स, मेक्सिको, ब्राजील आदि) से काफ़ी कम था. यद्यपि, 'हरित क्रांति' एवं निरन्तर सरकारी प्रयासों द्वारा इस स्थिति में काफी सुधार हुआ है; तथापि इस क्षेत्र में अभी भी काफी कुछ किया जाना शेष है.

भूमि अधिग्रहण नीति: मौजूदा भूमि अधिग्रहण नीति भी किसानों की समस्याओं में इजाफा करती है. अत: केन्द्र/ राज्य सरकारों द्वारा गठित विभिन्न विकास प्राधिकरणों द्वारा भूमि अधिग्रहण की नीति में कृषि योग्य भूमि के मद्देनजर परिवर्तन किया जाना परम आवश्यक है. औद्योगिक विकास, आधारभूत संरचना विकास व आवासीय योजनाओं हेतु

कम पैदावार वाली भूमि का ही अधिग्रहण किया जाना चाहिए; अन्यथा कृषक शहरों में जाकर मजदूरी करने के लिए विवश हो जाएंगे.

बीज: देश में कृषकों की पैदावार लागत को कम कर उनका मुनाफा बढ़ाने की राह में सबसे बड़ा रोड़ा उच्च गुणवत्ता वाले बीजों की कमी है. इसका एक प्रमुख कारण बाजार में प्रभावी बीज माफिया हैं. देश के कृषकों का कल्याण तभी होगा, जब कृषकों को इन बीज व खाद माफियाओं से मुक्ति मिलेगी; अन्यथा हमारे किसान इनके कर्जदार बनते रहेंगे; तथापि हमारे देश में बीज बैंक की स्थापना और अनुरक्षण की एक योजना प्रचलन में है, परंतु इस योजना हेतु वितरण के लिये ढाँचागत सुविधाएं विकसित करना अभी शेष है. वैसे तो किसानों की बुनियादी समस्या खाद और पानी है; परंतु महंगे उन्नतशील बीज उनकी समस्या में इजाफा कर देते हैं. इसके अतिरिक्त नई- सीड कंपनियां किसानों को अधिकतम उत्पादन का सपना दिखाकर आज नकली बीज धड़ल्ले से बेच रही हैं. अत: संवर्धित किस्म के बीजों को सामुदायिक विकास केन्द्रों तथा पंचायत एवं सहकारी समितियों के माध्यम से वितरित किए जाने की व्यवस्था करनी चाहिए. साथ ही, देश में कृषि आधारित अनुसंधानों को बढ़ावा देते हुए ऐसे बीजों का अनुसंधान होना चाहिए, जिनकी कम पानी से उत्पादकता अधिक हो व कृषकों को प्रत्येक ऋतु में बाजार से नए बीज न खरीदने पड़ें. वे अपने पास अगली फसल के लिए बीज का सुरक्षित संग्रहण उत्पादित अन्न में से ही कर सकें. जिससे बाजार पर उनकी निर्भरता कम हो.

भूमि शक्ति का ह्रास: सदियों से निरंतर प्रयोग के कारण भारतीय कृषि भूमि की उत्पादकता का ह्रास बहुत तेजी से हुआ है. मिट्टी की गुणवत्ता बढ़ाने पर ध्यान दिये बिना फसल उगाने के लिए मृदा का मात्र दोहन हो रहा है. सस्ते ईंधन के अभाव में कृषक परिवारों द्वारा पशुओं के गोबर का अधिकांश भाग ईंधन के रूप में जला दिया जाता है. फलत: खेतों को पर्याप्त मात्रा में जैविक खाद नहीं मिल पाती है. साथ ही, फसलों में बिना सूझबूझ के असंतुलित मात्रा में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से मृदा में उपस्थित लाभकारी जीवाणु और जीव-जंतु धीरे-धीरे विलुप्त हो रहे हैं, जिससे वायु, जल व मृदा प्रदूषण बढ़ रहा है. इन कारणों से मिट्टी की गुणवत्ता में भारी कमी आई है तथा फसलों का उत्पादन प्रभावित हुआ है. इसका प्रतिकूल प्रभाव हमारे कृषकों पर पड़ा है. अत: कृषक परिवारों हेतु सस्ते ईंधन का प्रबंध किया जाना अति आवश्यक है, ताकि भूमि की खोई हुई शक्ति को पुन:स्थापित कर उत्पादकता को बढ़ाया जा सके व भू-अपरदन घटाया जा सके.

उर्वरकों व कीटनाशकों का प्रयोग: रासायनिक उर्वरकों व उन्नत कीटनाशकों की बढ़ती कीमतें भी लघु व सीमांत कृषकों को बुरी तरह प्रभावित कर रही हैं. अत: कृषकों के हित में मृदा को पोषित करने एवं पर्यावरणीय सुरक्षा हेतु वनस्पति कीटनाशकों को

प्रोत्साहित कर नकली व घटिया स्तर के कीटनाशकों/ उर्वरकों की बिक्री रोकी जानी चाहिए. प्रत्येक ब्लाक में कृषकों, कीटनाशी विनिर्माताओं और विस्तार कार्मिकों द्वारा फसल देखरेख परिसंघ कायम कर कृषकों को किफ़ायती उर्वरक उपलब्ध कराये जाने की व्यवस्था बनानी चाहिए.

कृषि रोग: कभी-कभी फ़सलों को लगने वाली बीमारियाँ, बाढ़, ओला, शीतलहर, विभिन्न कीड़े- मकोड़े, चूहे व वन्य जीव फ़सलों को काफी नुकसान पहुँचाते हैं, जिससे कृषकों का उत्पादन कम हो जाता है. इन तत्वों को वैज्ञानिक उपकरणों की मदद से नियंत्रित करने का प्रयास किया जाना चाहिए. आज आवश्यकता इस बात की भी है कि वैज्ञानिक कुछ इस प्रकार की फसलों पर अनुसंधान करें; जिनकी खेती रासायनिक खाद व कीटनाशकों पर आधारित न हो.

सिंचाई के सीमित साधन: आज भी अधिकांश भारतीय किसान प्रधानत: मानसून/ प्रकृति की दया पर ही निर्भर रहते हैं. आज भी भारत की मात्र **41%** भूमि को ही सिंचाई की सुविधा प्राप्त है. यह सर्वविदित है कि खेती के लिए सबसे महत्वपूर्ण पानी है. इसके बिना न तो अच्छे बीज डाले जा सकते हैं और न ही उर्वरकों का ही प्रयोग किया जा सकता है. इसके अतिरिक्त सूखा, अकाल, कुपोषण व बीमारियाँ भी सूखे इलाकों में ही अधिक रहती है. अत: कृषकों का जीवन खुशहाल बनाने हेतु देश में वृहत और मध्यम सिंचाई योजनाओं को सृजित किया जाना आवश्यक है. साथ ही, देश में नदियों को जोड़ने की भारत सरकार की लंबित योजना को भी मूर्त रूप प्रदान कर इस समस्या के समाधान की दिशा में अग्रसर हुआ जा सकता है.

कृषि यन्त्रों का उपयोग: कृषि विकास धीमी गति से होने के कारण बहुतेरे कृषक आज भी कृषि कार्यों हेतु पशु-शक्ति पर आश्रित हैं. इससे समय, धन व श्रम तीनों का अपव्यय होता है. मशीनों एवं यन्त्रों के उपयोग से कृषि कार्य उचित समय, उचित दक्षता तथा न्यूनतम लागत पर कर पाना सम्भव हो जाता है. सबसे अच्छी बात यह है कि एक ही कृषि उपकरण अनेक कृषि कार्यों में प्रयोग किया जा सकता है. यथा ट्रैक्टर भूमि को उचित गहराई तक जोतने के अतिरिक्त माल ढोने तथा अन्य मशीनों जैसे- थ्रेसर चलाने, कुट्टी काटने, स्प्रेयर चलाने तथा सिंचाई के लिये पम्पसेट चलाने आदि के लिए भी प्रयोग किया जाता है. अत: कृषकों को ट्रैक्टर, थ्रेसर, हार्वेस्टर, पावर टिलर, पम्पसेट, स्प्रेयर तथा डस्टर आदि का अधिकतम उपयोग करने के लिए शिक्षित किया जाना चाहिए. चूंकि कृषकों को ट्रैक्टर, थ्रेशर, कंबाइन हार्वेस्टर तथा निराई, गुड़ाई, बुवाई अथवा कीटनाशकों के छिड़काव आदि से संबंधित यंत्रों की आवश्यकता बहुत थोड़े समय के लिए होती है, साथ ही इन्हें व्यक्तिगत आय से खरीदना भी सभी कृषकों के लिए संभव नहीं है. अत: इन उपकरणों की सुविधाएं उन्हें किराए पर उपलब्ध कराने की व्यवस्था होनी

चाहिए, ताकि लघु एवं सीमांत वर्ग के कृषक बिना किसी बाधा के इनका उपयोग कर सकें.

विक्रय व भंडारण व्यवस्था: भारतीय कृषकों की एक महत्वपूर्ण समस्या अपने उत्पाद का विक्रय व भंडारण है. उन्हें अपना माल मंडियों में ले जाकर बेचना पड़ता है, जो बहुत दूर-दूर होती हैं तथा वहाँ तक पहुँचने के लिये पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं होते. साथ ही इनकी विक्रय व्यवस्था भी ठीक नहीं होती. कृषकों की विडंबना यह भी है कि जब कृषि उत्पाद बाजार में आते हैं, तो उसके मूल्य निरंतर गिरने लगते हैं और मध्यस्थ सस्ती दरों पर उनका माल खरीद लेते हैं. जिस प्रकार औद्योगिक क्षेत्र के उत्पादन की दरें लागत, मांग और पूर्ति को ध्यान में रखते हुए निर्धारित की जाती हैं, उसी प्रकार की व्यवस्था दुर्भाग्य से यहाँ नहीं होती. यहाँ कृषकों के उत्पाद का मूल्यांकन या तो सरकार द्वारा या क्रेता द्वारा किया जाता है. अत: यह आवश्यक है कि:

- कृषि उत्पाद की क्रय-विक्रय व्यवस्था को मजबूत और पारदर्शी बनाया जाय, ताकि तत्काल नष्ट होने वाले उत्पादों की बिक्री के समय किसान असहाय न हो और उसके उत्पाद का मूल्य भी मांग, पूर्ति और लागत के आधार पर निर्धारित किया जा सके.

- मजबूरन बिक्री से बचने के लिए कृषक की उपज को विभिन्न समितियों के माध्यम से क्रय करने व भण्डारण हेतु शीत भंडारण व गोदाम की अथवा निर्यात की समुचित व्यवस्था सरकार द्वारा की जानी चाहिए; क्योंकि उत्पादन अधिक व मांग कम हो जाने तथा भंडारण की उचित व्यवस्था न होने के कारण माल सड़ने लगता है. जब उत्पादन अधिक होता है और मांग कम होती है, तो मध्यस्थ सस्ती दरों पर उसे क्रय कर उच्च दरों पर बिक्री कर बीच का मुनाफा ले जाते हैं तथा कृषक ठगा-सा रह जाता है. इसके अतिरिक्त कृषकों के पास ऐसा कोई तंत्र नहीं है, जिससे उसे उस दिन का बाजार भाव और भविष्य में मूल्यों के उतार- चढ़ाव की संभावनाओं का पता लग सके. एक बार उत्पाद मंडी में ले आने व भाव कम होने पर उसे पुन: घर वापस ले जाने पर किराया-भाड़े का खर्च व परेशानी देख कृषक मजबूर हो बिचौलियों के चुंगल में फंस जाता है और उनका संगठित गिरोह उसके उत्पाद को मनमाने दाम में क्रय कर लेते हैं.

- कृषकों की तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ फसल का उचित मूल्य प्राप्त करने में सहायता के लिए मंडी में सहकारी समितियों के माध्यम से ऐसी व्यवस्था की जा सकती है कि यदि किसी दिन किसी कृषक के उत्पाद का उचित मूल्य नहीं मिल पा रहा है तो उसके माल का भंडारण सहकारी क्रय-विक्रय समितियों के गोदामों में कर दिया जाए और उसे उस दिन के मूल्य का 50% से 80% तक अग्रिम दे दिया जाए; ताकि वह अपने घरेलू व

सामाजिक कार्य कर सके और जब बाजार भाव उच्च स्तर पर आए, तो बिक्री कर समिति का किराया व अग्रिम वापस कर शेष राशि का भुगतान प्राप्त कर ले.

ऋण व्यवस्था: कृषकों की आवश्यकताएं अल्पकालीन व दीर्घकालीन दो प्रकार की होती हैं. अल्पकालीन व्यवस्था के अंतर्गत सरकार का विशेष ध्यान रहता है, परंतु दीर्घकालीन आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है. दीर्घकालीन ऋणों की ब्याज दरें अल्पकालीन ऋण की तुलना में अधिक होती हैं. अत: इस व्यवस्था में सुधार करते हुए परियोजना आधारित ऋण वितरण को समाप्त कर सस्ती ब्याज दरों पर ऋण तथा किसान क्रेडिट कार्ड आदि सुविधाएं उपलब्ध कराई जानी चाहिए, अन्यथा साहूकारों से भारी ब्याज पर लिए गए ऋण को अदा करना कृषक के बस की बात नहीं रह जाती और लोक-लाज के भय से वह आत्म-हत्या तक कर लेते हैं. अत: व्यावसायिक बैंकों द्वारा अपनी ऋण नीतियां इस प्रकार बनानी चाहिए; ताकि कृषकों को पर्याप्त ऋण उपलब्ध हो सके. इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु ग्रामीण बैंकों की स्थापना पर भी विचार किया जा सकता है.

फसल बीमा: किसानों को ऋणग्रस्तता से बचाने व उपज प्रबंधन के लिए बीमा अति महत्वपूर्ण और उपयोगी हो सकता है. खेतों में जो भी फसल बोयी जाए, उसको सहकारी समितियों के माध्यम से बीमाकृत कराया जाए और सरकार की नीतियों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके यह भी सुनिश्चित किया जाय कि यदि कृषक की फसल अतिवृष्टि, ओलावृष्टि, सूखा, आग, चोरी, बाढ़ या किसी अन्य कारण से क्षतिग्रस्त हो जाती है, तो उसे तत्काल बीमा राशि दी जाए. यहाँ केवल बीमा कराना ही पर्याप्त नहीं होगा, क्योंकि अधिकांश बीमा कंपनियाँ बीमा करने के बाद किसानों की कोई खबर नहीं लेती और यदि कोई कृषक संपर्क भी करता है, तो उसे कानूनी दांव-पेंच में फंसाकर परेशान कर दिया जाता है.

प्रक्रिया इकाइयों की स्थापना: प्रति वर्ष हमारे देश में बहुत-सी फसलें खेतों में ही नष्ट हो जाती हैं. कई बार लागत न मिलने के कारण कृषक आलू को गोदामों में ही छोड़ देते हैं, लहसुन व प्याज को खेतों में ही दबा छोड़ देते है, फलों को सस्ती दरों पर बेचने के लिए मजबूर हो जाते हैं. कई बार ऐसा भी होता है कि महंगे परिवहन के कारण समुचित वितरण सुनिश्चित नहीं हो पाता है. जब देश के कुछ भागों में अधिक उत्पादन के कारण फल व सब्जियां खराब हो रही होती हैं, तो वहीं दूसरे भागों में इनकी कमी बनी होती है. अत: किसी क्षेत्र में यदि किसी फसल का उत्पादन अधिक है, तो समुचित वितरण के लिए उन क्षेत्रों में उस उत्पाद से संबंधित प्रक्रिया इकाइयां लगाई जानी चाहिए, ताकि उत्पाद को खराब होने से बचाया जा सके तथा उसका उचित मूल्य भी किसान को मिल सके.

स्मार्ट गाँवों की संकल्पना: कृषकों की समस्याओं के समाधान व गाँवों के तीव्र विकास

की दिशा में स्मार्ट शहरों की तर्ज पर स्मार्ट गांवों की संकल्पना पर भी काम किया जा सकता है. स्मार्ट गाँव होने से वहाँ पर बिजली, पानी, सड़क, संचार व स्वास्थ्य सुविधाएं बढ़ जाएंगी, जिससे कृषकों की अधिकांश समस्याओं का समाधान स्वतः ही हो जाएगा. पुरातन समय में सामूहिकता व परस्पर श्रम विभाजन बड़ी से बड़ी आपदा से निपटने में गांवों को सक्षम बना देता था, परंतु आज जातिगत मूल्यों की उपस्थिति ने इस पक्ष को कमजोर कर दिया है. स्मार्ट गाँव में शिक्षित कृषक होने से जातिगत मूल्यों से ऊपर उठ सामूहिकता की पुनःस्थापना हो सकती है. साथ ही आज तकनीक के बेहतर प्रयोग और परंपरागत कृषि के तरीकों का बेहतर समन्वय करने का समय भी आ गया है.

उपयुक्त के अतिरिक्त कृषकों को भूमि अधिग्रहण पर पर्याप्त मुआवजा, छोटी जोत व 65 वर्ष से अधिक उम्र के कृषकों को पेंशन व्यवस्था जैसे कदमों से कृषकों के मुरझाए चेहरों पर मुस्कान लाने में सफलता पाई जा सकती है.

उपसंहार: भारतीय कृषक की शक्ति व भक्ति दोनों कृषि है. त्याग व तपस्या का दूसरा नाम है भारतीय किसान. वह जीवन पर्यंत मिट्टी से सोना उपजाने की तपस्या करता रहता है. तपती धूप, कड़ाके की ठंड तथा मूसलाधार बारिश भी उसकी इस साधना को तोड़ नहीं पाते. यही कारण है कि भारतीय आत्मा भी कृषक ही है, जो कि गांवों में निवास करता है. कृषक देश को खाद्यान्न में आत्मनिर्भर बनाने के अतिरिक्त भारतीय संस्कृति और सभ्यता को भी सहेज कर रखते हैं. यही कारण है कि शहरों की अपेक्षा गांवों में भारतीय संस्कृति और सभ्यता अधिक परिलक्षित होती है. परंतु, कृषकों की बदहाली आज भी बरकरार हैं. हमारे नेतृत्व के पास खेत-मेड़ के विषय की अधिकतम जानकारी वेबसाइट वाली होने के कारण उनका सुझाव भी व्यावहारिक न होकर जमीनी सच्चाई से बेहद अलग पॉवर प्वाइंट प्रजेंटेशन द्वारा मिले ज्ञान पर ही आधारित होता है. गांवों के प्रति प्रशासनिक अधिकारियों की उदासीनता की झलक भी समाचार पत्रों में गाहे-बगाहे दिखती रहती है. डिजिटल इंडिया के विकास ने शहरों में विकास की नई इबारत लिखने का काम किया है, परंतु गांवों को संपन्न करने की जगह फार्म- हाउस संस्कृति मजबूत होती जा रही है और कृषकों की विपन्नता कड़वी सच्चाई बनी हुई है. हमें इस स्थिति से बाहर निकाल कृषकों को भी संपन्न बनाना होगा. ध्यान रहे यदि देश के कृषक सम्पन्न होंगे, तभी देश की अर्थव्यवस्था भी मजबूत होगी.

कृष्ण कुमार यादव, प्रबंधक, मानव संसाधन विभाग, केन्द्रीय कार्यालय, मुंबई

आनंद कुमार

भारतीय कृषि में प्रच्छन्न बेरोजगारी

आज बेरोजगारी की समस्या विकसित एवं विकासशील देशों की अर्थव्यवस्थाओं की प्रमुख समस्या बनती जा रही है. भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था में तो यह विस्फोटक रूप धारण किये हुये है. भारत में इसका प्रमुख कारण जनसंख्या वृद्धि, पूँजी की कमी, योग्य मजदूरों का अभाव एवं कृषि को एकमात्र आय का जरिया मानने की मानसिकता आदि है. यह समस्या आधुनिक समय में युवा- वर्ग के लिये घोर निराशा का कारण बनी हुई है. वित्त वर्ष 2015-16 के आंकड़ों के अनुसार जीडीपी में कृषि का योगदान लगभग 14.10 प्रतिशत रहा; जबकि वर्ष के अंत तक कृषि के आधार पर जीवन यापन करने वाले लोगों का प्रतिशत कुल जनसंख्या का लगभग 50 प्रतिशत रहा. इसका तात्पर्य है कि कृषि का योगदान जहां जीडीपी का सातवाँ हिस्सा रहा; वहीं इसने 50% लोगों को रोजगार प्रदान किया, जो कि आनुपातिक रूप से बेहद अधिक है.

अर्थव्यवस्था विकसित हो या विकासशील, बेरोजगारी का होना सामान्य बात है. साधारण बोलचाल में बेरोजगारी का अर्थ होता है कि सभी व्यक्ति उत्पादक कार्यों में लगे हुये नहीं होते. भारत में दो प्रकार की बेरोजगारी है. प्रथम, ग्रामीण बेरोजगारी व द्वितीय, शहरी बेरोजगारी. यद्यपि शहरी एवं ग्रामीण बेरोजगारी का समाधान करने के लिये समन्वित रूप से सरकार द्वारा अनेक कारगर उपाय किये गये हैं; तथापि इस समस्या से तभी उबरा जा सकता है; जब जनसंख्या को नियन्त्रित किया जाये और देश के आर्थिक विकास के लिए ढांचागत योजनायें लागू की जाएं. इस ओर सरकार गम्भीर रूप से प्रयास भी कर रही है. भारत में बेरोजगारी की समस्या को समझने हेतु इन दोनों प्रकार की बेरोजगारी को समझना होगा:

1. ग्रामीण बेरोजगारी:

ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या बढ़ने से भूमि पर जनसंख्या का भार बढ़ता जाता है. भूमि पर जनसंख्या की मात्रा बढ़ने से कृषकों की संख्या भी बढ़ जाती है,

जिससे प्रच्छन्न बेरोजगारी की मात्रा बढ़ जाती है. अधिकांश श्रम-शक्ति प्राथमिक व्यवसायों में लगी रहती है तथा व्यावसायिक ढाँचे के बेलोच होने के कारण गैर-व्यस्ततम मौसम में भी ये श्रमिक बाहर नहीं जाते. इसी कारण मौसमी बेरोजगारी भी पैदा होती है. मौसमी बेरोजगारी मानव शक्ति के अल्प-प्रयोग से सम्बंधित है. यदि किसी विशेष मौसम में बेरोजगार श्रमिकों को सहायक व्यवसायों में कार्य मिल भी जाता है, तो भी वे बेरोजगार बने ही रहते हैं. स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्रों में मौसमी बेरोजगारी एवं प्रच्छन्न बेरोजगारी दोनों ही विद्यमान होती हैं.

2. शहरी बेरोजगारी:

शहरी बेरोजगारी ग्रामीण बेरोजगारी की ही प्रशाखा है. कृषि में पूंजीवादी प्रणाली के विकास के कारण तथा भूमि पर जनसंख्या के भार में वृद्धि के कारण कृषक की आर्थिक दशा प्रतिदिन बिगड़ती जाती है, जिसके कारण भारी संख्या में श्रमिक ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर स्थानान्तरित होने लगते हैं. गाँवों से शहरी की ओर जनसंख्या की यह गतिशीलता शहरी आकर्षण के परिणामस्वरूप नहीं; अपितु गाँव में पर्याप्त रोजगार के अवसर उपलब्ध न होने के कारण होती है. ग्रामीण जनसंख्या के इस स्थानान्तरण से शहरों में श्रम-शक्ति की मात्रा में वृद्धि हो जाती है. अत: बेरोजगारी की मात्रा में अधिक वृद्धि हो जाती है. भारत में शहरी बेरोजगारी का मुख्य कारण यहाँ अशिक्षितों की अपेक्षा शिक्षित बेरोजगारों की संख्या अधिक होना भी है. जितनी संख्या में लोग शिक्षा प्राप्त करते हैं, उतनी मात्रा में सेवा-क्षेत्र का विस्तार नहीं होने के कारण यह बेरोजगारी पनपती है.

स्पष्ट है कि भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में मुख्यत: अल्प-रोजगार, मौसमी रोजगार तथा प्रच्छन्न बेरोजगारी विद्यमान होती है, जबकि शहरी क्षेत्रों में खुली बेरोजगारी एवं शिक्षा बेरोजगारी होती है. बेरोजगारी की अवस्था उस समय भी उत्पन्न होती है, जब उपलब्ध रोजगार के अवसरों की तुलना में श्रम-शक्ति के विकास की दर अधिक होती है. विकास की दर जनसंख्या वृद्धि की दर पर भी निर्भर करती है. जब हम यह कहते हैं कि देश में बेरोजगारी बढ़ रही है, तो इसका अर्थ है कि नये रोजगार के अवसरों का विकास पर्याप्त मात्रा में नहीं हो रहा. इसलिए उपलब्ध श्रम-शक्ति को लाभदायक रोजगार के अवसर उपलब्ध नहीं हो पाते.

प्रच्छन्न बेरोजगारी वह अवस्था है, जिसमें किसी भी उत्पादन कार्य में संलग्न व्यक्तियों की संख्या कम करके भी उतना ही उत्पादन किया जा सकता है, जितना कि पहले किया जा रहा था. कभी कभी मन्दी काल में व्यक्तियों को अधिक उत्पादन कार्यों से कम उत्पादक कार्यों में धकेल दिया जाता है, वास्तव में यह

भी एक प्रच्छन्न बेरोजगारी या छिपी हुई बेरोजगारी होती है. ऐसी स्थिति में कई श्रमिक, जो कि रोजगार में संलग्न होते हैं, वास्तव में उत्पादन में किसी भी तरह का योगदान नहीं देते हैं. भारत में बेरोजगारी का रूप विकसित देशों की तरह नहीं है. विकसित देशों में तो बेरोजगारी का कारण वस्तुओं की प्रभावपूर्ण मांग में कमी है, जबकि भारत में यह समस्या मूलतः रुपये और अन्य संसाधनों की कमी का परिणाम है. वास्तव में बेरोजगारी उस अवस्था की ओर इंगित करती है, जिसमें व्यक्ति काम करने हेतु उपलब्ध है, वह काम करना भी चाहता है, परन्तु काम नहीं मिल पाता. बेरोजगारी का यह ऐसा रूप है, जिसमें व्यक्ति अपने आप को बेरोजगार महसूस नहीं करते हैं; लेकिन तकनीकी रूप से वे बेरोजगार ही होते हैं. रोजगार के दो रूप होते हैं **मात्रात्मक** अर्थात कितने लोग रोजगार में हैं और **गुणात्मक** अर्थात रोजगार में लगे व्यक्ति कितना उत्पादन करते हैं, जिसका तात्पर्य रोजगार की उत्पादकता से है. भारत में भूमि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ता जा रहा है. अतः प्रति व्यक्ति उत्पादकता घटती जाती है. ऐसी स्थिति, जिसमें बड़े पैमाने पर श्रमिकों की सीमान्त उत्पादकता शून्य है, अर्थात उनका कार्य, कोई अतिरिक्त उत्पादन नहीं देता है. यदि उन्हें कृषि कार्य से हटा दिया जाये, तो इस प्रकार की बेरोजगारी, प्रच्छन्न (छिपी) बेरोजगारी कहलाती है.

भारत में बेरोजगारी के मुख्य कारण निम्न हैं:

क. जनसंख्या वृद्धि की ऊँची दर बेरोजगारी की समस्या को जन्म देती है. इस दृष्टि से भारत की भूमि पर जनसंख्या का भार पहले से ही बहुत अधिक है. ऐसी स्थिति में नये रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने का दायित्व सहायक एवं सेवा क्षेत्र पर होता है. यदि उद्योग क्षेत्र एवं सेवा क्षेत्र अपने दायित्व को पूर्ण करने में असमर्थ होते हैं, तो जनसंख्या वृद्धि की तुलना में बेरोजगारी में वृद्धि होती है अथवा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रच्छन्न बेरोजगारी उत्पन्न होती है.

ख. भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि क्षेत्र का विकास बहुत धीमा एवं निस्तेज रहा है. यह क्षेत्र विकासशील अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में असमर्थ रहा है. इसका कारण कृषि क्षेत्र की उत्पादकता का स्तर कम होना है. इससे रोजगार के अवसरों की कमी रहती है. कम उत्पादकता हेतु अन्य कारकों के अतिरिक्त, तकनीकी कारक बहुत सीमा तक जिम्मेदार हैं. भूमि सुधारों की प्रगति धीमी रही है, बड़े किसानों में असुरक्षा की भावना बनी हुई है, कृषक एवं भूस्वामी के मध्य सौहार्द नहीं है. इसके अतिरिक्त बाज़ार में बीजों, उर्वरकों, सिंचाई की सुविधाओं, कृषि-यन्त्रों आदि की उपलब्धता तो है, लेकिन उनके प्रयोग से संबन्धित जानकारी की कमी है.

ग. भारत में दोषपूर्ण आर्थिक नियोजन भी रोजगार के अवसरों में कमी का एक प्रमुख कारण है. भारत में अभी तक आर्थिक विकास हेतु आधारभूत ढाँचे का विकास नहीं हुआ है. विभिन्न योजनाओं में ग्रामीण क्षेत्रों का समुचित ढंग से विकास नहीं हो पा रहा है. ग्रामीण जनसंख्या के स्थानान्तरण को नहीं रोका जा रहा है; क्योंकि गांवों में सेवा क्षेत्रों का विकास हम नहीं कर पा रहे हैं.

घ. योजनाकाल में कृषि एवं उद्योगों में तकनीकी विकास नहीं हो सका, ताकि उत्पादन में श्रम-शक्ति का अधिक उपयोग किया जा सके. योजनाओं में बेकार पड़ी हुई भूमि के उपयोग, सिंचाई के साधनों का समुचित विकास, भूमि संरक्षण तथा कृषि के सहायक कुटीर उद्योग जैसे डेयरी, मछली पालन, मुर्गी पालन आदि का पर्याप्त विकास नहीं हो सका, जिसके कारण, शिक्षित, अशिक्षित एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों हेतु नये रोजगार के अवसर उपलब्ध नहीं हो सके हैं.

ङ. बाढ़ नियन्त्रण, नदी-नालों पर बांध, ग्रामीण विद्युतीकरण, सड़क मार्गों का निर्माण आदि का भी समुचित विकास न होने के कारण कृषि का विकास इस स्तर तक नहीं हो पाया कि वह कुशल एवं अकुशल श्रमिकों हेतु पर्याप्त रोजगार के अवसर उपलब्ध करा सके.

च. इसके अतिरिक्त एक कारण यह भी है कि शिक्षा के क्षेत्र में हमने जिस गति से विकास किया एवं शिक्षा का प्रचार-प्रसार जिस गति से हुआ है, उस गति से रोजगार के अवसर उत्पन्न नहीं हो पाये. हालांकि व्यावसायिक शिक्षा व तकनीकी शिक्षा का अभाव है, जिसकी ओर आधुनिक शिक्षा प्रणाली में पर्याप्त जोर दिया जा रहा है.

छ. देश में प्राकृतिक साधन एवं मानव शक्ति का समायोजन न कर पाना भी बेरोजगारी को जन्म देता है.

उपयुक्त कारणों से यह पता चलता है कि ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने के लिये सर्वप्रथम हमें शिक्षा प्रणाली में सुधार करना होगा. इसके लिये आवश्यक यह है कि विद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा को अपनाया जाए; ताकि शिक्षा व्यवसाय उम्मुख हो तथा स्नातकोत्तर स्तर पर या शोध पर केवल मेधावी विद्यार्थियों को ही प्रवेश दिया जाए. ऐसे उद्योग, जिनमें तकनीकी कारणों की वजह से पूंजी-प्रधान विधियों का प्रयोग आवश्यक हो, उनके अतिरिक्त शेष सभी उद्योगों में श्रम-प्रधान विधियों का विकास किया जाना चाहिए. इसके लिये आवश्यक है कि जो उद्योग पूंजी-गहन विधियों में कमी लाकर उत्पादन व रोजगार के स्तर को बढ़ाते हैं, उन्हें वित्तीय प्रोत्साहन व तकनीकी सहायता दी जानी चाहिए; ताकि

लागत में कमी की जा सके. श्रम-प्रधान विधियों को प्रोत्साहित करने हेतु विभेदात्मक ब्याज दर नीति का भी प्रयोग किया जा सकता है. वर्तमान नीति में परिवर्तन करके सुनियोजित ढंग से ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए; ताकि कम पूँजी-गहन विधियों का शीघ्र ही विकास हो सके. इसके अतिरिक्त सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के उद्योगों में पूंजी का निवेश करते समय दीर्घकालिक आवश्यकताओं के लिए ध्यान नहीं रखना चाहिए; जब तक कि यह किन्हीं तकनीकी अपेक्षाओं के कारण जरूरी न हो. ऐसे उद्योगों में निवेश को प्रोत्साहित करना चाहिये, जिनमें शीघ्र ही पूंजी का प्रतिफल प्राप्त होने की सम्भावना हो. बड़े शहरों में बेरोजगारी के केन्द्रीयकरण को रोकने हेतु औद्योगिक क्रियाओं का विचलन एवं विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिए. राष्ट्रीयकृत बैंकों को छोटे उद्योगों एवं स्व-रोजगार युक्त इंजीनियरों द्वारा आरम्भ किये गए उद्योगों को विकसित करने के लिये पर्याप्त मात्रा में सुविधाएँ उपलब्ध करानी चाहिए. सरकार द्वारा रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने के लिए अनेक योजनाएं जैसे नेहरू रोजगार योजना, रोजगार गारन्टी कार्यक्रम आदि क्रियान्वित किये गये हैं. साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में निर्माण, संचालन तथा सामाजिक सेवाओं का विकास करके आर्थिक क्रियाओं में वृद्धि करनी होगी. स्थानीय पूँजी विनिर्माण परियोजनाओं, विशेष रूप से ऐसी परियोजनाएँ जिनके द्वारा उत्पादन में शीघ्र वृद्धि हो सके, जैसे लघु एवं मध्यम सिंचाई परियोजनाएँ, नालियों का निर्माण, संग्रहण सुविधाओं का विकास, स्थानीय यातायात व सड़कों का विकास आदि द्वारा हम ग्रामीण आधारभूत ढांचे का विकास कर सकते हैं. अन्य उत्पादन क्रियाओं जैसे बागान, पशुपालन, मत्स्य, मधुमक्खी पालन व्यवसाय आदि पर ज़ोर देना होगा, ताकि ग्रामीण स्तर पर ही हम अधिक से अधिक रोजगार का सृजन कर सकें. यहाँ यह भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि बेरोजगारी की रोकथाम के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों से शहर की ओर पलायन भी रोकना आवश्यक है. भूमि विकास एवं व्यवस्थापन, खेतों में श्रम-प्रधान विधियों का अधिक प्रयोग, पशुधन का विस्तार, कृषि उत्पादन के अनेक रूप, सामाजिक सेवाओं जैसे शिक्षा, आवास, स्वास्थ्य सेवाएँ आदि का विकास तथा लघु-स्तर के उद्योगों, दस्तकारियों, कृषिजन्य उद्योगों एवं विधायन उद्योगों का विकास आदि करके हम कृषि में निहित प्रछन्न बेरोजगारी को कम कर सकते हैं.

ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की समस्या के समाधान हेतु सरकार ने भी अनेक उपाय किए हैं जैसे- भूमिहीन श्रमिकों तथा सीमान्त किसानों को कृषि कार्यों तथा सम्बद्ध व्यवसायों के लिए रियायती दरों पर ऋण की व्यवस्था की है. कृषि उत्पादकता को बढ़ाने के लिए नयी तकनीकों के प्रयोग हेतु लघु किसानों को ऋण दिया जाता है. स्थानीय कच्चे माल एवं श्रम का पूर्ण लाभ उठाने के लिये सरकार ने कुटीर एवं ग्रामीण उद्योगों के विकास

को काफी महत्व दिया है. कृषि से सम्बद्ध व्यवसायों का विकास किया गया है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के श्रमिकों को पर्याप्त मात्रा में रोजगार के अवसर उपलब्ध हुये हैं.

इसके अतिरिक्त समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम लागू किये गये हैं, जिसके अन्तर्गत पशुपालन, रेशम के कीड़े पालने, हस्तशिल्प, हथकरघा का विकास आदि किया गया है. ग्रामीण कार्य योजनाएँ आरम्भ की गई हैं, जिसमें सड़क निर्माण, बाँध व पुल बनाना, लघु सिंचाई परियोजनाएँ, गोदामों का निर्माण, आवास गृहों का निर्माण आदि को सम्मिलित किया गया है. इसके साथ ही समन्वित शुष्क भूमि कृषि विकास योजना को लागू किया गया है.

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, जिसके अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिवर्ष 300-400 मिलियन श्रम-दिवसों के बराबर रोजगार के अवसरों के निर्माण की व्यवस्था है, जो ग्रामीण भूमिहीन बेरोजगारों को ग्रामीण क्षेत्रों में 100 दिनों के रोजगार की गारन्टी प्रदान करता है, भी ग्रामीण पलायन रोकने में बहुत सहायक होगा.

हालांकि उपयुक्त सभी उपाय उस समय तक विफल रहेंगे; जब तक कि हम नये रोजगार प्राप्त करने वाली श्रम-शक्ति की मात्रा को नियन्त्रित नहीं करते और इसके लिए आवश्यक है कि जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित किया जाये. जब तक जनसंख्या वृद्धि नियंत्रित नहीं की जाएगी, तब तक कोई भी नीति बेरोजगारी को दूर करने में सफल नहीं हो सकती. अत: हम सभी को जनसंख्या की बढ़ती हुई गति को रोकने हेतु ध्यान देना भी उतना ही आवश्यक है, जितना बेरोजगारी दूर करने के अन्य उपाय करना है.

अंतत: बेरोजगारी की समस्या जटिल अवश्य है; किन्तु इसका हल किया जा सकता है; क्योंकि कुछ समस्यायें ऐसी होती हैं, जो स्वयं मनुष्यों द्वारा उत्पन्न की जाती हैं और जिन्हें दूर भी मनुष्य ही कर सकता है. देश में योजनाओं को ठीक से लागू किया जाये, आर्थिक विकास हेतु उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग किया जाये, तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा को शिक्षा का आधार बनाया जाए और अधिक आवश्यकता इस बात की है कि इस समस्या को दूर करने के लिये हम सभी सरकार को सहयोग दें.

आनंद कुमार, प्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय, पटना

जयप्रकाश चौधरी

छोटी जोत-कृषि के विकास में अवरोध

भारत सरकार की किसान नीति में 'किसान' शब्द के अंतर्गत भूमिहीन कृषि श्रमिक, बटाईदार काश्तकार, लघु, सीमांत, उप-सीमांत और बड़े किसान शामिल हैं. इसके साथ-साथ मछुआरे, मुर्गी व पशुपालन में लगे अन्य किसान, बागान कामगार और साथ ही वे ग्रामीण, जो कई प्रकार की खेती से जुड़े व्यवसायों में लगे हैं, जैसेकि मधुमक्खी पालन, रेशम पालन आदि. इस शब्द के अंतर्गत वे जन-जातीय परिवार भी शामिल होंगे, जो गैर-इमारती वन उत्पादों के संग्रहण व उपयोग के कार्य में लगे हैं. फसल और पशुपालन, मात्स्यिकी और कृषि-वानिकी के जरिए अपनी आजीविका कमाने वालों को भी किसान की श्रेणी में शामिल किया गया है:

विषय को परिभाषित करते हुए कृषि योग्य भूमि या जोत एक दूसरे के पर्याय हैं. सरकार द्वारा निम्नानुसार इसका वर्गीकरण किया गया है:

जोत की श्रेणी	किसान की श्रेणी	कृषि योग्य क्षेत्र
सीमांत जोत	सीमांत किसान	1 हेक्टेयर से कम
छोटी जोत	छोटे किसान	2 हेक्टेयर
अर्ध-मध्यम जोत	अर्ध-मध्यम किसान	4 हेक्टेयर
मध्यम जोत	मध्यम किसान	4-10 हेक्टेयर
बड़ी जोत	बड़े किसान	10 हेक्टेयर और अधिक

किस्से-कहावतों में तो भारत देश किसानों का देश है और यहाँ की मिट्टी सोना,हीरे-मोती उगलती है. 'जय जवान-जय किसान,'' 'भारत की आत्मा गांवों में बसती है'' जैसे बहुत से नारे व किस्से किसान के लिए गढ़े गए हैं. मगर वास्तविकता बिलकुल इसके उलट है. आज धरती न तो सोना,हीरे-मोती उगल रही है और न ही किसान की जय-जयकार हो रही है. बल्कि छोटे किसानों सहित अधिकांश ग्रामीण,

जीवन की मूलभूत सुविधाओं के अभाव में गाँव छोड़ रहे हैं तथा जो गाँव में हैं, वे सरकारी नौकरियों, छोटे-मोटे रोजगार-धंधों और शहरों के भरोसे जी रहे हैं. बावजूद इसके आज भी भारत एक कृषि प्रधान देश बना हुआ है और भारत की लगभग 60 फीसदी जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से कृषि पर निर्भर है.

छोटी जोत और भूमि सुधार:

भारत में आजादी के समय एक ऐसी कृषि व्यवस्था मौजूद थी, जिसमें भूमि का स्वामित्व कुछ हाथों में केंद्रित था. सरकार ने वर्ष 1960-61 में भूमि सुधार कार्यक्रम का सूत्रपात किया, जिससे किसानों को भूमि का मालिकाना हक प्राप्त हुआ. जमींदारी प्रथा किसानों के सामाजिक और आर्थिक विकास में बड़ी बाधा थी. आजादी के बाद भारत सरकार द्वारा भूमि सुधारों को सुदृढ़ता से लागू करने का बीड़ा उठाया गया. असमान भूमि वितरण पर नियंत्रण के लिए कोशिशें भी की गईं. भूमि सुधार कार्यक्रम, हदबंदी (चकबंदी) कार्यक्रम लागू किया गया. हदबंदी में जिनके पास अधिक ज़मीन थी, उनसे राज्यों ने अधिक भूमि तो ली, लेकिन भूमिहीनों में उसके वितरण के मामले में अपेक्षित सफलता नहीं मिली. हालांकि भूमिहीनों को भूमि वितरण के प्रयास का लाभ तो हुआ; लेकिन उनके मालिकाना हक़ के रूप में ज़मीन का मात्र एक टुकड़ा आया, इससे छोटे और सीमांत किसानों की संख्या भी बढ़ी. बावजूद इसके भूमि के असमान वितरण में कोई बड़ा बदलाव नहीं आया. बड़े किसानों की तादाद कम होते हुए भी आज उनके पास ज़मीन का बड़ा हिस्सा है. प्रच्छन्न रूप से आज भी जमींदारी प्रथा जारी है, जो कृषि-विकास में अवरोध है और कृषि उत्पादन में इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है.

छोटी जोत और कृषि उत्पादन:

वर्ष 2010-11 की जनगणना के मुताबिक देश के 67.04 प्रतिशत किसान परिवार सीमांत जोत वाले हैं, यानि उनके पास एक हेक्टेयर से भी कम ज़मीन है. इनमें भी सबसे . ज्यादा प्रतिशत उनका है, जिनके पास आधा हेक्टेयर से कम ज़मीन है. इसके बाद 17.93 प्रतिशत छोटी जोत वाले किसान परिवारों के पास एक से दो हेक्टेयर ज़मीन है. कुल 10.05 प्रतिशत परिवारों के पास दो से चार हेक्टेयर ज़मीन है, जिन्हें अर्द्ध-मध्यम श्रेणी का किसान कहा जाता है. मध्यम (चार से दस हेक्टेयर) और बड़े (10 हेक्टेयर से अधिक ज़मीन वाले) किसान कुल 4.98 प्रतिशत हैं. इस आंकड़े के आधार पर कहें तो हमारा देश सीमांत और छोटे किसानों का देश है.

यह सच है कि "छोटी जोत" कृषि विकास में अवरोध रही है, बावजूद इसके देश में कृषि से होने वाली कमाई में छोटे और सीमांत किसानों का बड़ा योगदान है. कृषि जनगणना 2011 के आंकड़ों के अनुसार देश में कृषि की कमाई का 75 प्रतिशत हिस्सा उस

"जोत" से आता है, जिस पर छोटे और सीमांत किसान खेती करते हैं. मेंथा (पिपरमेंट) एक ऐसी फसल है, जिसका उत्पादन भारत अन्य कई देशों के समान करता है. मेंथा के उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा छोटी जोत वाले किसानों के सूझ-बूझ से किए गए प्रयासों का परिणाम है.

मेंथा के साथ-साथ देश में टमाटर के उत्पादन पर नज़र डालें, तो पाएंगे कि 2011 के आंकड़ों के अनुसार भारत 16826 मीट्रिक टन टमाटर उत्पादन के साथ विश्व का दूसरा सबसे बड़ा टमाटर उत्पादक देश है. टमाटर उत्पादन में भारत को यह सफलता इसलिए मिल पाई, क्योंकि छोटे किसान भी अनाज उगाने की अपनी मजबूरी को पीछे छोड़ अधिक मुनाफा देने वाली फसलों की खेती में कूद पड़े हैं. मेंथा अर्थात पिपरमिंट की खेती की बात करें तो वर्ष 2012 में देश में लगभग 36 हज़ार टन मेंथा का उत्पादन हुआ, जो कई मायनों में एक उपलब्धि कही जा सकती है.

देश में कृषि की धुँधली तस्वीर के लिए कृषि उत्पादकता का निम्न स्तर "छोटी जोत" होना भी एक कारण है. विदित है कि हमारे देश में कृषि की उत्पादकता अन्य देशों की अपेक्षा काफी कम है. उदाहरण के तौर पर देश में चावल की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता जापान की अपेक्षा एक-तिहाई है, जबकि गेहूँ की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता फ्रांस की तुलना में एक-तिहाई है. इसी प्रकार हमारे देश में कृषि क्षेत्र में प्रति श्रमिक उत्पादकता अमेरिका की तुलना में मात्र 23 प्रतिशत तथा जर्मनी की तुलना में 33 प्रतिशत है. यही कारण है कि सकल आय में कृषि का अंश निरंतर कम होता जा रहा है.

छोटी जोत और जलवायु परिवर्तन:

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से पूरा विश्व प्रभावित है, भारत भी इससे अछूता नहीं है. सूखे और बाढ़ के साथ-साथ तटवर्ती तूफानों तथा तापमान में भी वृद्धि हो रही है. यद्यपि, जलवायु में परिवर्तन होने की वजह औद्योगीकृत देशों द्वारा उर्जा के गैर-नवीकरणीय स्वरूपों की अत्यधिक खपत करना है; किन्तु जलवायु परिवर्तन का हानिकारक प्रभाव भारत जैसे गरीब देशों द्वारा अधिक महसूस किया जा रहा है. सूखा और बाढ़ प्रधान क्षेत्रों में खेती को नष्ट होने से बचाने के लिए कोई विशेष उपाय या नीति अभी तक हमारे पास नहीं है. किसान महिलाओं को सूखे, बाढ़ और अनियमित मानसून के प्रबंधन की कला में "जलवायु प्रबंधकों" के रूप में प्रशिक्षित किया जा सकता है, किन्तु हमारे यहाँ इसका कोई भी प्रबंध नहीं है. तापमान, वर्षा और समुद्र स्तर में प्रतिकूल परिवर्तनों के कारण जलवायु परिवर्तन मात्र सैद्धांतिक संभावना नहीं रह गए हैं.

जलवायु परिवर्तन से सबसे अधिक प्रभावित छोटे जोत के किसान होते हैं; क्योंकि जोत छोटी होने के कारण सूखा, बाढ़ और तूफान आदि से इनका सब कुछ तबाह हो

जाता है और ये भूखमरी के कगार पर आ जाते हैं. इससे न केवल किसान का नुकसान होता है; बल्कि समूचे देश की कृषि व्यवस्था प्रभावित होती है.

छोटी जोत और आधुनिक प्रौद्योगिकी:

एक समय था जब हर किसान परिवार के पास कम से कम एक जोड़ी बैल जरूर होते थे, हल से जुताई-बुवाई का काम किया जाता था. कम लागत वाले और ख़ुद के कृषि उपकरण होते थे, पशुधन होता था. केवल परम्परागत उपकरणों से फसलों को उगाकर किसान समृद्ध नहीं हो सकते, बदलती माँग व कीमतों के अनुरूप फसल प्रतिरूप में परिवर्तन भी आवश्यक है. आज कुछ सीमांत और छोटे किसान भी आधुनिक उपकरणों से खेती तो करते हैं; लेकिन वे ट्रैक्टर, थ्रेशिंग मशीन आदि आधुनिक उपकरण ख़रीद नहीं सकते, तो बड़े किसानों से इन्हें किराये पर लेकर प्रयोग करते हैं. यह सच है कि सीमांत और छोटे किसानों की संसाधनों तक सीधी पहुँच बड़ी या मध्यम जोत वाले किसानों की तुलना में कम है. इन्हें संसाधनों को किराये पर लेना होता है, जिसके लिए उन्हें अच्छी-ख़ासी क़ीमत अदा करनी पड़ती है, जो खेती की लागत को बढ़ाता है. इससे किसान को उपज का पूरा लाभ नहीं मिल पाता. छोटी जोत वाले अधिकांश किसान आज भी परंपरागत तरीकों से खेती करने को मजबूर हैं, जिससे कृषि उत्पादन कम होता है.

आज हम 21वीं सदीं में हैं और छोटी जोत वाले किसानों के खेती-बाड़ी के तौर-तरीके अवैज्ञानिक हैं. विज्ञान और प्रौद्योगिकी के द्वारा की जाने वाली खेती और अवैज्ञानिक तरीके से की जाने वाली खेती में जमीन आसमान का अंतर होता है. खेती के वैज्ञानिक तरीके उत्पादन में परिवर्तन के प्रेरक हैं. प्रति इकाई उत्पादन बढ़ाने में नई प्रौद्योगिकी मददगार हो सकती है. उत्तम तकनीकें जैसेकि जैव-प्रौद्योगिकी, सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी), नवीकरणीय उर्जा प्रौद्योगिकि, अंतरिक्ष अनुप्रयोग और नैनो-प्रौद्योगिकी आदि से छोटी जोत हमेशा वंचित रहती है, जिससे कृषि को होने वाले लाभ बाधित होते हैं.

छोटी जोत और कॉर्पोरेट खेती:

यह स्पष्ट है कि छोटी जोत किसानों की समस्याओं की एक बड़ी वजह है. इसका हल यही हो सकता है कि जोत का आकार बड़ा हो और जोत एक ही जगह हो. आज इसके उपाय के रूप में हम एक शब्द को अक्सर सुनते रहे हैं- "कॉर्पोरेट खेती" यह खेती को आधुनिक तरीके करने के साथ-साथ ज़मीन को संगठित कर उस पर खेती करने की अवधारणा तो है, लेकिन इससे लाभ किसानों के बजाय कंपनी मालिक का होगा. शिक्षा के अभाव में छोटी जोत वाला किसान "कॉर्पोरेट खेती" को अपनाने में भयभीत है. इसलिए वह अपनी जमीन पर स्वयं खेती करना चाहता है. चाहे फसल कैसी भी हो, कितनी भी

हो. कॉर्पोरेट खेती के नफा-नुकसान की जानकारी देने के लिए परामर्श केंद्र गांवों मे नहीं हैं. छोटी जोत वालों के लिए कारपोरेट-खेती एक विकल्प हो सकता था, लेकिन हमने इस मौके को खो दिया है; यह अवधारणा कृषि विकास में अवरोध पैदा करती है.

छोटी जोत और स्वयं सहायता समूह:

स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से भी नाबार्ड किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारने हेतु प्रयासरत है. इसी प्रकार ग्राम आधारित विकास फण्ड की स्थापना गाँवों में आधारभूत संरचना को सुदृढ़ करने हेतु की गई है; ताकि किसान वर्ग इससे लाभान्वित हो सके तथा कृषि विकास को सुनिश्चित किया जा सके. ज्ञातव्य है कि वर्ष 2008-09 में कृषि ऋण की राशि 2,87,000 करोड़ रुपए दर्ज की गई. वर्ष 2009-10 के लिए कृषि वित्त हेतु 3,25,000 करोड़ रुपए के ऋण प्रवाह का लक्ष्य रखा गया था, जिसे बढ़ाकर 2010-11 में 3,75,000 करोड़ रुपए किया गया. वर्ष 2014-15 में 8,00,000 करोड़, 2015-16 में 8,50,000 करोड़ एवं 2016-17 के लिए लक्ष्य 9,00,000 करोड़ का निर्धारित किया है. इन सबके कारण किसान महाजनों व साहूकारों के ऋण जाल से कुछ सीमा तक मुक्त हुए हैं तथा कृषि विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है.

गरीबी तथा ऋणग्रस्तता के कारण किसान अपनी उपज कम कीमतों पर बिचौलियों को बेचने के लिए बाध्य हैं. इन बिचौलियों के जाल से किसानों को मुक्त करवाने तथा विपणन व्यवस्था में सुधार लाने हेतु सरकार ने नियन्त्रित मण्डियों के विस्तार, कृषि उपज के श्रेणीकरण व प्रभावीकरण, माल गोदामों की व्यवस्था, बाजार एवं मूल्य सम्बन्धी सूचनाओं का प्रसारण व सहकारी विपणन व्यवस्था का प्रबन्धन जैसे महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं. किन्तु ये सब अभी भी छोटी जोत वाले किसानों की पहुँच से दूर हैं. स्वयं सहायता समूह भी छोटे किसानों की बदहाली और कृषि उपज में गुणात्मक वृद्धि कर पाने में सफल नहीं हुए हैं.

छोटी जोत और किसानों का पलायन:

मनरेगा जैसी सरकारी योजना के अन्तर्गत 100 या 150 दिन की रोजगार गारंटी से छोटी जोत वाले किसानों के विस्थापन में कुछ कमी जरूर आई है, पर वह भी इसे पूर्णतया विस्थापन को न रोक सकी. हमारी कल्याणकारी सरकारों के सामने इस विस्थापन को रोकना एक चुनौती है. एक अध्ययन के अनुसार खेती छोड़ने वाले सर्वेक्षित कुल किसानों में 38.54% सीमांत दर्जे के किसान थे, जबकि 43.40% छोटे दर्जे के. किसानी छोड़ने वाले किसानों में मंझोले दर्जे के किसानों की संख्या 6 प्रतिशत से कम थी और बड़े किसानों में यह तादाद महज 3 फीसदी पायी गई. अध्ययन बताते हैं कि खेती छोड़ने वाले किसानों में मजदूर बनने को मजबूर सर्वाधिक किसान छोटे (23.02 प्रतिशत) और सीमांत दर्जे (39.20 प्रतिशत) के हैं.

छोटे किसानों की दयनीय अवस्था बुन्देलखण्ड, बिहार तथा मध्यप्रदेश के कई रेलवे स्टेशनों पर दिखाई देती है, जब सैंकड़ों, हजारों की संख्या में किसान अपनी पोटलियां बांधे इन स्टेशनों के प्लेटफॉर्मों पर पड़े-पड़े दिल्ली, पंजाब या हरियाणा जाने वाली रेलगाडियों की प्रतीक्षा करते रहते हैं. स्वंयसेवी संगठन या सरकारें इनके विस्थापन की दयनीय अवस्था पर आंसू तो बहाते हैं, पर उनके लिए कोई ठोस उपाय नहीं करते. यहां के किसान प्रतिवर्ष विस्थापन को अपनी नियति मान बैठे हैं. भारत में किसान संगठनों का उदय होना और अस्त हो जाना कोई नई बात नहीं है. किसानों के स्थानीय संगठन तो हैं, लेकिन किसानों का ऐसा कोई राष्ट्रीय स्तर का संगठन नहीं हैं, जिसकी पूरे देश में मान्यता हो और जिसका क्षेत्र संपूर्ण भारत हो. देश में सीमांत व छोटे किसानों की संख्या सबसे अधिक है, जो कि अभी भी असंगठित क्षेत्र में हैं

छोटी जोत और जनजातीय किसान:

देश की कुल आबादी में अनुसूचित जनजातियों का हिस्सा 8.6 प्रतिशत है. देश भर में अधिकांश जनजातीय समुदाय अपनी आजीविका के लिए वनों और पशुपालन पर निर्भर हैं. इनमें खेती करना (बहुत से भागों में झूम खेती), ईंधन, चारा और अनेक प्रकार के गैर-इमारती वन उत्पाद एकत्र करना शामिल है. किसानों की श्रेणी के अन्दर जनजातीय किसान लाभ की स्थिति में नहीं हैं. जनजाति क्षेत्रों में छोटी जोत होने तथा पर्याप्त संसाधन न होने के कारण उनमें असंतोष की स्थिति रहती है.

इन समुदायों के पास वन क्षेत्रों के स्वामित्व के लिए परम्परागत मानदंड हैं और उनके पास संरक्षण व पुनरुद्धार के सम्बन्ध में समुदाय आधारित पद्धतियां भी हैं. इसके साथ ही, वन क्षेत्रों का संरक्षण और परिरक्षण राज्य वन विभागों के नियंत्रण और प्रशासन के तहत है. उन क्षेत्रों का सीमांकन करने के लिए, जिनका उपयोग और प्रबंधन बनवासी समुदायों द्वारा किया जाता है अथवा इन समुदायों को क़ानूनी अधिकार और हक प्रदान करने के लिए कोई व्यवस्थित प्रयास नहीं किये गए हैं, वन विभाग और वनवासी समुदायों के बीच सम्बन्ध मुख्यत: विवादास्पद रहे हैं, भुखमरी के कगार पर पहुँचने से वनवासी समुदाय रोजी-रोटी की जुगाड़ हेतु असामाजिक तत्वों के हाथों की कठपुतली बनकर गैर कानूनी तरीके अपनाने लगते है. जनजाति क्षेत्रों में नक्सलवाद का पैदा होना छोटी जोत, संसाधनों के अभाव और विकास से वंचित रहने का ही प्रतिफल है.

छोटी जोत और वैश्वीकरण व उदारीकरण:

देश में कृषि की विकास दर अस्सी के दशक की अपेक्षा नब्बे के दशक में कम हो गई है. आठवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि की विकास दर 4.7 प्रतिशत दर्ज की गई, जो घटकर नौवीं पंचवर्षीय योजना में मात्र 2.1 प्रतिशत रह गई. वर्ष 2002-03 में कृषि विकास दर

ऋणात्मक रही, जबकि वर्ष 2004-05 में कृषि विकास दर मात्र 1.1 प्रतिशत रही, जो सकल घरेलू उत्पाद की विकास दर 6.9 प्रतिशत से काफी कम थी. वर्ष 2009 के दौरान व्यापक सूखा पड़ने के कारण कृषि विकास दर में 0.2 प्रतिशत गिरावट आ गई. विदित है कि 2010-11 वित्त वर्ष की दूसरी तिमाही में कमजोर मानसून के कारण कृषि उत्पादन में वृद्धि मात्र 0.9 प्रतिशत ही दर्ज की गई है, जिसे बढ़ाने के लिए प्रभावी कदम शीघ्र उठाने की आवश्यकता है. वैश्वीकरण व उदारीकरण की नीतियों के तहत भारतीय बाजार के द्वार विदेशी कृषि उत्पादों के लिए खोल दिए जाने पर देश की कृषि व्यवस्था पर संकट के बादल छा रहे हैं. उच्च लागत व उच्च कीमतों के कारण हमारे कृषि उत्पाद विदेशी प्रतिस्पर्द्धा का सामना नहीं कर पा रहे हैं और इसका सबसे ज्यादा प्रभाव छोटी जोत के किसानों पर पड़ा है. वैश्वीकरण व उदारीकरण के इस दौर में हमारे छोटे किसान लगभग चारों खाने चित्त हो गए है.

छोटी जोत और युवा किसान:

छोटी जोत वाले युवाओं को एक व्यवसाय के रूप में कृषि को अपनाने के लिए तभी आकर्षित किया जा सकता है, जब खेती आर्थिक रूप से लाभप्रद और बौद्धिक रूप से प्रेरणादायक बन जाए. इस दिशा में जैव-प्रौद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी, नवीकरणीय उर्जा प्रौद्योगिकि, अन्तरिक्ष प्रौद्योगिकी जैसी नई प्रौद्योगिकियां मदद कर सकती हैं. इसलिए यह सुनिश्चित करने की जरुरत है कि बड़ी संख्या में शिक्षित युवा पुरुष और महिलाएं अपने व्यवसाय के रूप में खेती और कृषि सम्बद्ध उद्यमों को अपनाएं. यह एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ युवा उद्यमियों और प्राइवेट सेक्टर के बीच सहयोगात्मक भागीदारी लाभप्रद होगी. छोटी जोत वाले युवा किसानों का खेती से मोह भंग हो रहा है. वह खेती न करके नौकरी को वरीयता दे रहा है. इस पर ध्यान देना आवश्यक है; वरना जिन छोटी जोतों को उनके पूर्वजों ने कड़ी मेहनत से उपजाऊ बनाया था, पुनः बंजर हो जाने का खतरा बन सकता है.

छोटी जोत और किसान आत्म-हत्या:

किसानों की आत्म हत्या में छोटी जोत वाले किसानों की संख्या बहुत ज्यादा है. भारतीय किसानों में आत्महत्या की घटनाएं तब और बढ़ जाती हैं, जब सूखा पड़ा हो, बाढ़ आई हो तथा बेमौसम बरसात या ओला वृष्टि हो. विपरीत परिस्थितियों के कारण खेती से आमदनी कम हो जाती है और किसानों को नुकसान होने से उन पर कर्ज का बोझ बढ़ता जाता है. रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों के युग में किसान अपने संसाधनों से खेती नहीं कर सकता.

भारतीय किसान ऋण में पैदा होता है, ऋण में जीता है और ऋणग्रस्त होकर ही मर जाता है. एक सर्वेक्षण के अनुसार, जिन किसानों ने आत्म-हत्याएं कीं, उनमें से

86.5 प्रतिशत ऋणी थे. किसान का औसतन ऋण रू.50,000 था, जबकि 60 प्रतिशत ऋण रू.6600 से रु.33,000 के बीच रहा. इसका अर्थ यह है कि आत्महत्या करने वालों में छोटे तथा मझोले किसान ही अधिक हैं. महाराष्ट्र के विदर्भ में प्रत्येक दिन दो कृषक आत्महत्या कर रहे हैं. यही हाल कमोबेश उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश में बुन्देलखण्ड क्षेत्र के किसानों का है.

छोटी जोत और मनरेगा:

महात्मा गांधी रोजगार गारंटी योजना, भारत सरकार की एक महती योजना है, जिसमें एक सौ या एक सौ पचास दिन की कार्य योजना से छोटी जोत वाले किसानों के लिए रोजगार के अवसर पैदा किए गए हैं; लेकिन इसमें हुई गड़बड़ियों से यह योजना भी विफल ही साबित हुई. इसमें यह भी प्रावधान था कि किसानों की जमीनों को मनरेगा के माध्यम से कृषि योग्य बनाया जाये. उनकी जमीनों पर सिंचाई साधन उपलब्ध हों तथा उन्हें प्रतिवर्ष फसलों पर बैंक ऋण प्राप्त हो. यह आवश्यक है कि किसानों के हित में काम करने वाले तन्त्र में नियुक्त भ्रष्ट एवं उदासीन सरकारी कर्मियों के विरुद्ध कारवाई की जाये. इस दिशा में पंचायतों की भूमिका भी अहम है. वे स्थानीय बैंकों, साहूकरों तथा ऋणदाता किसानों के बीच मध्यस्थता करके इन मामलों को सहजतापूर्वक निबटा सकती हैं तथा किसानों में आत्म-विश्वास का संचार कर सकती हैं, लेकिन ऐसा हो न सका और छोटी जोत कृषि विकास में अपेक्षित योगदान नहीं दे सकी.

छोटी जोत और प्रछन्न बेरोजगारी

देश में बेरोजगारी एक बड़ी समस्या है. छोटे और सीमांत किसानों के पास मात्र एक छोटा-सा जमीन का टुकड़ा होता है तथा उपलब्ध जोत पर एक या दो व्यक्ति ही कृषि कार्य के लिए पर्याप्त हैं. लेकिन जमीन के इस टुकड़े पर उनका पूरा परिवार रोजी रोटी के लिए कार्य करता है और परिवार के सभी सदस्यों को किसान गिना जाता है. परिवार के शेष सदस्य रोजगार न होने के कारण ही कृषि कार्य में संलग्न होते हैं. इस प्रकार यह प्रछन्न बेरोजगारी है, जो सीधे-सीधे दिखायी नहीं देती. इसमें पढ़े-लिखे बेरोजगार युवा भी शामिल हैं. यदि इन बेरोजगारों को भी बेरोजगारों की श्रेणी में शामिल कर लिया गया, तो बेरोजगारों की संख्या भयावह होगी.

सारांश रूप में कहा जा सकता कि छोटी जोत किसानों की मुश्किलों की एक बड़ी वजह है. इसका हल यही हो सकता है कि ज़मीन का आकार बड़ा हो और ज़मीन एक ही जगह हो. ज़मीन को संगठित करना, खेती को आधुनिक और योजनाबद्ध करना तो है ही, किसानों की समस्याओं का हल और उनकी स्थिति में सुधार भी महत्वपूर्ण है. दोषपूर्ण भू-धारण प्रणाली, विभाजन के परिणामस्वरूप अनार्थिक जोतों की संख्या में बढ़ोत्तरी हो

रही है. ज्ञातव्य है कि देश की लगभग 78 प्रतिशत कृषि जोतें 2 हेक्टयर से कम की हैं; जिन्हें छोटी जोत में गिना जाता है.

चौधरी चरण सिंह (पूर्व प्रधान मंत्री) का उल्लेख किए बिना भारतीय किसान के बारे में कुछ भी लिखना या कहना अधूरा ही माना जाएगा. वे किसानों, मजदूरों के नेता थे. उनके द्वारा तैयार किया गया जमींदारी उन्मूलन विधेयक राज्य कल्याणकारी सिद्धांत पर आधारित था. 1952 मे उनकी बदौलत उत्तर प्रदेश में जमींदारी प्रथा का उन्मूलन हुआ और गरीबों को अधिकार मिला. किसान और मंडी के बीच के बिचौलियों को वे किसानों का सबसे बड़ा दुश्मन मानते थे. उन्होंने ही लेखपाल जैसे पद का सृजन भी किया. किसानों के हित में 1954 में उन्होंने भूमि संरक्षण कानून को पारित कराया तथा वित्त मंत्री के रूप में उन्होंने राष्ट्रीय कृषि व ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की स्थापना की.

स्वतन्त्रता के पश्चात कृषि को देश की आत्मा के रूप में स्वीकारते हुए एवं खेती को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान करते हुए देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु ने स्पष्ट किया था कि "सब कुछ इन्तजार कर सकता है, मगर खेती नहीं."

जयप्रकाश चौधरी, मुख्य प्रबंधक (राजभाषा) क्षेत्र महाप्रबंधक कार्यालय, दिल्ली

धनंजय गंधे

ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों के विकास में कृषि की भूमिका

भारत एक कृषि प्रधान देश है और कृषि व कृषि पर आधारित उद्योग हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था के आधार स्तंभ हैं. भारत में कृषि के महत्व का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि हमारे देश की 60% जनसंख्या गावों में निवास करती है तथा जीवनयापन हेतु मूल रूप से कृषि व कृषि संबंधित गतिविधियों पर निर्भर करती है. इन गतिविधियों में प्रत्यक्ष रूप से कृषि के अलावा पशुपालन और ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग शामिल हैं. कुल राष्ट्रीय आय में कृषि क्षेत्र की प्रत्यक्ष रूप से लगभग 15% हिस्सेदारी है.

कृषि के क्षेत्र में हुए आधुनिकीकरण का लाभ छोटे व मझोले किसानों तक नहीं पहुंच सका है; फलस्वरूप इन किसानों की आय अर्जन की क्षमता कृषि के अतिरिक्त पशुपालन, सहायक गतिविधियों एवं ग्रामीण उद्योगों के विकास पर निर्भर करती है. वैसे भी भारत में कृषि को आज भी मानसून का जुआ कहा जाता है, अर्थात कृषि उत्पादन पूरी तरह से मानसून पर निर्भर है. ऐसी परिस्थिति में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास कुटीर व ग्रामीण उद्योगों के विकास से ही संभव है.

ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग मूल रूप से वे उद्योग हैं, जो परम्परागत रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी घर में ही जीविकोपार्जन हेतु किए जाते हैं. इस उद्योगों हेतु आवश्यक कच्चा माल कृषि उत्पाद के रूप में स्थानीय रूप से उपलब्ध होता है. ये उद्योग मुख्यतः उपलब्ध संसाधनों का कुशलता से उपयोग कर चलाए जाते हैं. इस उद्योगों को चलाने के लिए पूंजी की कम और कौशल की ज्यादा आवश्यकता होती है. भारतीय कृषि में छिपी हुई बेरोजगारी एवं मौसमी बेरोजगारी को दूर करने एवं अतिरिक्त आय अर्जन करने में ग्रामीण व कुटीर उद्योग महती भूमिका निभाते हैं.

इन्हीं विशेषताओं के कारण विश्व के कमोबेश हर देश में कृषि के समानांतर ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों का भी विकास हुआ है. चूंकि ये उद्योग अपनी तमाम आवश्यकताओं के लिए कृषि एवं ग्रामीण परिवेश पर निर्भर करते हैं. अतः इन उद्योगों के विकास में कृषि

एवं सहायक गतिविधियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है. जिन देशों में कृषि एवं सहायक गतिविधियों का समुचित विकास हुआ है, वहां इन उद्योगों को फलने-फूलने के लिए उपयुक्त वातावरण मिला है, जिसके परिणामस्वरूप उन राष्ट्रों की प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि के साथ-साथ बेरोजगारी की समस्या भी काफी हद तक दूर हो सकी है.

भारत की अर्थव्यवस्था में प्राचीन काल से ही कुटीर उद्योगों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है. ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों के विकास के लिए कृषि की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि कृषि उद्योगों के लिए केवल कच्चा माल ही उपलब्ध नहीं कराती, वरन यह अधिकांशत: औद्योगिक उत्पादों के लिए मांग का स्त्रोत भी है.

कृषि पर आधारित ग्रामीण उद्योग:

ग्रामीण उद्योगों में पशु-पालन सर्वाधिक महत्वपूर्ण है. पुराने समय से ही पशुपालन को कृषि की सहायक गतिविधि के रूप में देखा जाता रहा है; किन्तु इस क्षेत्र में आय अर्जन की अपार संभावनाओं को देखते हुए पशुपालन अब ग्रामीण उद्योग के रूप में विकसित हो रहा है. पशुपालन के अंतर्गत गाय, भैंस, बकरी, भेड़, मुर्गी, कीट, सुअर एवं मत्स्य पालन आदि शामिल हैं. पशुओं से दूध, मांस, चमड़ा, ऊन, बाल आदि प्रचुर मात्रा में प्राप्त होते हैं, जो अन्य उद्योगों जैसे डेयरी उद्योग, चमड़ा उद्योग, ब्रश आदि बनाने वाले उद्योगों के लिए कच्चे माल की आपूर्ति करते हैं.

पशुपालन से अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए पशुधन को अच्छी खुराक उपलब्ध कराना जरूरी है, जिसके लिए कृषि पर निर्भरता होना स्वाभाविक है. दुधारू पशु जैसे गाय, भैंस, बकरी से प्रचुर मात्रा में दूध प्राप्त करने के लिए पोषक पशु आहार अर्थात अच्छे किस्म के चारे की व्यवस्था कृषि पर ही निर्भर है. मधुमक्खी पालन के लिए जरूरी विशाल प्राकृतिक वनस्पति एवं पुष्प, जो मधुमक्खी द्वारा शहद निर्माण के लिए जरूरी हैं, कृषि द्वारा ही संभव हैं. रेशम के कीड़े के लिए जरूरी मलबरी पेड़, जिस पर रेशम की इल्ली कोकून बनाती है और जिससे रेशम का धागा प्राप्त किया जाता है, कृषि से ही विकसित किए जाते हैं. भेड़, बकरी, ऊँट, सुअर आदि पशुओं के लिए चारे की व्यवस्था कृषि पर ही निर्भर करती है. भारत में बढ़ती जनसंख्या के साथ इन उद्योगों के विकास की अपार संभावनाएँ हैं, जो पूरी तरह से कृषि के विकास पर ही निर्भर है.

पशुपालन के अतिरिक्त जिस ग्रामीण उद्योग ने पिछले कुछ वर्षों में निरंतर एवं उल्लेखनीय प्रगति की है, वह है पुष्प उद्योग. देश में सजावटी फूलों का बहुत बड़ा बाजार विकसित हो चुका है एवं विकसित देशों में भी इन फूलों की बढ़ती माँग को देखते हुए यह उद्योग निर्यात के भी सुनहरे अवसर प्रदान करता है. फूलों का उपयोग इत्र बनाने, गुलकंद निर्माण एवं शर्बत तैयार करने में भी प्रचुरता से किया जाता है, जो घरेलू बाजार में इनकी अच्छी माँग पैदा करता है. यह ग्रामीण क्षेत्रों में अपेक्षाकृत नया, किन्तु तेजी से पनपता उद्योग है, जो पूरी तरह कृषि पर निर्भर है.

ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग-

जिन ग्रामीण उद्योगों की ऊपर चर्चा की गई है, वे प्रत्यक्ष रूप से कृषि पर आधारित हैं. इनके अतिरिक्त कई ऐसे ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग हैं, जो अपनी आवश्यकताओं के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर करते हैं. इन उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार ने सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्योग मंत्रालय के अधीन खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग की स्थापना करने के साथ ही खादी एवं ग्रामोद्योग अधिनियम 1956 (केवीआईसी एक्ट 1956) भी पारित किया, जिससे इन उद्योगों को संरक्षण और बढ़ावा मिल सके. इस अधिनियम को समय-समय पर आवश्यकतानुसार संशोधित भी किया गया है. खादी एवं ग्रामोद्योग संशोधन अधिनियम 1987 के अनुसार ग्रामीण उद्योग वे उद्योग हैं, जो ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित हों एवं किसी भी तरह की सेवाओं या वस्तुओं का उत्पादन बिजली के उपयोग या उसके बिना करते हों और इन उद्योगों में स्थायी पूंजी रु.1 लाख से अधिक न लगी हो.

केवीआईसी द्वारा इन उद्योगों को निम्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है-

क्र	श्रेणी	संबंधित उद्योग
1	खनिज आधारित उद्योग	कुम्हारी (मिट्टी के बर्तन आदि), चूना से संबंधित उद्योग
2	कृषि आधारित खाद्य प्रसंस्करण उद्योग	दाल व अनाज प्रसंस्करण, फल व सब्जी प्रसंस्करण, गुड़ व खांडसारी उद्योग, पाम गुड़ उद्योग, ग्रामीण तेल उद्योग
3	बहुलक एवं रसायन आधारित उद्योग	चर्म उद्योग, अखाद्य तेल व साबुन उद्योग, कुटीर माचिस उद्योग, प्लास्टिक उद्योग
4	वन आधारित उद्योग	औषधीय वनस्पति उद्योग, मधुमक्खी पालन, वन आधारित लघु उद्योग
5	हाथ कागज व रेशा उद्योग	हस्त निर्मित पेपर एवं फाइबर उद्योग
6	ग्रामीण अभियांत्रिकी व जैव प्रौद्योगिकी उद्योग	जैव प्रौद्योगिकी, बढ़ईगिरी, लोहारगिरी, इलेक्ट्रॉनिक्स
7	उत्पादन क्षमता में वृद्धि व सेवा उद्योग	ग्रामोद्योग सेवाएं

कुटीर उद्योगों के विकास में कृषि की भूमिका-

वैसे तो उपयुक्त सातों श्रेणियों में वर्गीकृत उद्योग विकास की दृष्टि से कृषि पर निर्भर हैं; परंतु मुख्य रूप से श्रेणी क्र.2 से 5 तक वर्गीकृत ग्रामीण उद्योगों के विकास में कृषि की भूमिका महत्वपूर्ण है, जिसमें पहले स्थान पर खाद्य प्रसंस्करण उद्योग आता है. इन उद्योगों के फलने-फूलने में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है. ये उद्योग कच्चे माल के लिए पूरी तरह

कृषि पर ही निर्भर करते हैं. इन उद्योगों में कुटीर व ग्रामीण उद्योग की श्रेणी में रखे जा सकने वाले उद्योग जैसे गुड़ व खांडसारी उद्योग, अचार-पापड़ उद्योग, जैम, जेली एवं मुरब्बा उद्योग आदि हैं.

अचार व पापड़ उद्योग, जैम, जेली एवं मुरब्बा उद्योग मूलतः कृषि उत्पादों जैसे दालों, फलों व सब्जियों पर निर्भर करते हैं. गुड़ और खांडसारी उद्योग प्राचीन काल से ग्रामीण क्षेत्रों में लोकप्रिय कुटीर उद्योग रहा है. चूंकि गन्ने की खेती पूरे भारत में की जाती है, इस उद्योग के लिए विशाल क्षेत्र उपलब्ध है. गुड़ एक ऐसा उत्पाद है, जिसका उपयोग न केवल ग्रामीण क्षेत्रों में; बल्कि शहरी क्षेत्रों में भी बहुतायत से किया जाता है. इसे स्थानीय दुकानों, हाट-बाजारों में आसानी से बेचा जा सकता है. बड़े पैमाने पर गन्ने की आपूर्ति इस उद्योग की मुख्य आवश्यकता है.

गन्ने के गुड़ की तरह ही पाम गुड़ उद्योग भी अत्यंत प्राचीन व परम्परागत ग्रामीण उद्योग है, जो समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के हजारों ग्रामीण युवकों को रोजगार प्रदान करता है. पाम गुड का उत्पादन ताड़ या खजूर के वृक्ष से किया जाता है, जो करोड़ों की संख्या में देश के ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध है. इसी वृक्ष से प्राप्त किया जाने वाला अन्य उत्पाद नीरा (ताड़ी) है, जो ग्रामीण ही नहीं, शहरी क्षेत्रों में भी एक लोकप्रिय पेय पदार्थ है. ताड़ के वृक्ष की पत्तियों से सजावटी वस्तुओं व झाड़ू आदि भी बनाए जाते हैं, जिनकी स्थानीय बाजारों में अच्छी माँग है.

ग्रामीण व कुटीर उद्योगों में तेल एवं साबुन उद्योग का भी अपना स्थान है. तिलहन के अलावा नीम, चन्दन एवं अन्य वन उत्पादों से तेल निकाला जाता है, जिसका बाजार में अच्छा मूल्य प्राप्त होता है. इन तेलों का उपयोग साबुन एवं इत्र वगैरह बनाने में भी किया जाता है. एक अन्य लोकप्रिय ग्रामीण उद्योग कुटीर माचिस उद्योग है, जो व्यापक श्रम की आवश्यकता होने के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यधिक लोकप्रिय उद्योग है. इसकी निर्माण प्रक्रिया अत्यंत साधारण होने के कारण महिलाएं, प्रौढ़ एवं विकलांग व्यक्ति भी आसानी से यह कार्य कर सकते हैं. निर्माण हेतु लगने वाला कच्चा माल जैसे लकड़ी, मोम, कागज व उर्वरक ग्रामीण क्षेत्रों में आसानी से उपलब्ध होते हैं.

ग्रामीण कुटीर उद्योगों में हस्त-निर्मित कागज भी एक तेजी से बढ़ता हुआ उद्योग है. कागज एवं गत्ते बनाने के लिए जरूरी बांस, वुडग्रास, चावल या गेहूँ का पुआल, पटसन व रद्दी कागज जैसा कच्चा माल कृषि की सहायता से आसानी से उपलब्ध हो जाता है. यह उद्योग स्थानीय उद्यमिता की मदद से अधिक से अधिक रोजगार उत्पन्न करता है. इस तकनीक में कागज कारखाने की तुलना में कम संसाधनों का उपयोग होता है एवं प्रदूषण भी कम होने से पर्यावरण की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है. भारतीय हस्त निर्मित कागज एवं इससे बने उत्पादों की अमेरिका, यूरोप व आस्ट्रेलिया जैसे विकसित देशों में अच्छी मांग

होने से निर्यात के भी अवसर प्रदान करता है.

ग्रामीण वस्त्र उद्योग एवं हथकरघा उद्योग भी लोकप्रिय ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों की श्रेणी में रखे जा सकते हैं, जो कच्चे माल हेतु कृषि पर निर्भर करते हैं. इनमें कपास से बिनोले निकालना, रूई धुनना, सूत कातना, कपड़े की बुनाई, रेशम के कीड़े पालना एवं रेशम का धागा बनाना, भेड़ों से ऊन उतारना, ऊन कातना, धागों और कपड़ों की रंगाई व छपाई आदि शामिल हैं. हथकरघा उद्योग में साड़ियाँ, कंबल, गलीचे आदि बनाना ग्रामीण क्षेत्रों में बहुतायत से किया जाता है. भारत के विभिन्न राज्यों जैसे उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, गुजरात, तमिलनाडु, कर्नाटक आदि में ये उद्योग अत्यंत लोकप्रिय हैं एवं अपने विशिष्ट उत्पादों के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं.

अन्य ग्रामीण उद्योगों में लकड़ी के फर्नीचर, खिलौने व कलात्मक वस्तुएं बनाना, धातु से चाकू-छुरी, बर्तन व कलात्मक वस्तुएं बनाना, मिट्टी से बर्तन, खपरैल आदि बनाना, चर्म शिल्प उद्योग में मृत पशुओं से चमड़ा उतारना व तैयार करना, चमड़े की रंगाई करना, जूते, बैग व अन्य वस्तुओं का निर्माण करना आदि रोजगारोन्मुखी और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने वाले ऐसे उद्योग हैं, जिनके विकास में कृषि की प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से महत्वपूर्ण भूमिका है. कृषि पर आधारित अन्य ग्रामीण कुटीर उद्योगों में दोने- पत्तल बनाना एवं लाख से चूड़ियाँ बनाना भी लोकप्रिय उद्योग हैं.

उपसंहार

भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है. भारतीय कृषि को देश की रीढ़ माना गया है. भारत की जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि होने एवं कृषि योग्य भूमि के निरंतर कम होने के कारण भूमि पर जनसंख्या का भार बढ़ता जा रहा है. ऐसे में ग्रामीण अर्थव्यवस्था को संबल प्रदान करने एवं रोजगार पैदा करने में ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों का महत्व बढ़ता जा रहा है. इन उद्योगों के विकास से देश की अर्थव्यवस्था को निश्चित ही गति प्रदान की जा सकती है. इसीलिए सरकार द्वारा भी इन उद्योगों के विकास हेतु तरह-तरह की योजनाएं बनाई एवं अमल की जा रही हैं. कृषि उत्पादों का कच्चे माल के रूप में अनेक उद्योगों में उपयोग करके लाखों लोग रोजगार प्राप्त कर रहे हैं. कृषि व पशुपालन अनेक ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों के आधार हैं. ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों का विकास कृषि के समानांतर विकास से ही संभव है. अतः ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों के विकास में कृषि की भूमिका उस मजबूत धुरी के समान है, जो इन उद्योगों के विकास के पहिये को गति प्रदान करती है.

धनंजय गंधे, मुख्य प्रबंधक, (संकाय), स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र, पवई

श्वेता सिंह

कृषि का विकास: बेरोजगारी का निदान

भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है. देश के कुल निर्यात व्यापार में कृषि उत्पादित वस्तुओं का प्रतिशत हमेशा ही अधिक रहा है. भारत में आवश्यक खाद्यान्न की लगभग सभी आपूर्ति कृषि के माध्यम से ही की जाती है. वर्तमान समय में भी एक बहुत बड़ी आबादी को कृषि के माध्यम से रोज़गार प्राप्त है. ऐसे में यह और महत्वपूर्ण हो जाता है, जब देश में बेरोज़गारी की समस्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है. भारतीय कृषि को 'देश की रीढ़' माना गया है, क्योंकि यही वह साधन है, जो देश की खुशहाली के लिए अत्यंत आवश्यक है. भारत प्राचीन काल से ही कृषि प्रधान देश रहा है. वर्तमान समय में यह परिदृश्य बदल चुका है. आज हमारे देश में कृषि को गृहस्थ जीवन, परिवार, युवाओं तथा समाज के लिए बोझ के तौर पर देखा जा रहा है. सभी कृषि से दूर होते जा रहे हैं. कृषि से दूर जाते युवाओं के शहरों की तरफ आने से शहरों में झोपड़-पट्टियों में बढ़ती जनसंख्या और ढांचागत दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है.

कृषि उद्योग भारत की अधिकांश जनता को रोज़गार प्रदान करता है. इस देश की 52% आबादी प्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है. कृषि उत्पादों को कच्चे माल के रूप में अनेक उद्योगों में प्रयोग करके लाखों व्यक्तियों को रोज़गार प्राप्त होता है. इसके अतिरिक्त परिवहन कम्पनियों को कृषि पदार्थों, जैसे- खाद्यान्न, कपास, जूट, गन्ना, तिलहन आदि को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में भी भारी आय होती है. इस प्रकार भारतीय कृषि देश के निवासियों के लिये जीवन-निर्वाह का सबसे महत्वपूर्ण साधन है.

कृषि में बेरोजगारी की समस्या- जब देश में कार्य करने वाली जनशक्ति अधिक होती है; किन्तु काम करने के लिए राजी होते हुए भी बहुतों को प्रचलित मजदूरी पर कार्य नहीं मिलता, तो उस विशेष अवस्था को "बेरोजगारी" की संज्ञा दी जाती है. बेरोजगारी का अस्तित्व श्रम की मांग और उसकी आपूर्ति के बीच स्थित अनुपात

पर निर्भर करता है. कृषि में मुख्य रूप से दो प्रकार की बेरोजगारी पाई जाती हैं- असंतुलनात्मक (फ्रिक्शनल) तथा ऐच्छिक. असंतुलनात्मक बेरोजगारी श्रम की मांग में परिवर्तन के कारण होती है. ऐच्छिक बेरोजगारी का प्रभाव उस समय होता है, जब मजदूर अपनी वास्तविक मजदूरी में कटौती को स्वीकार नहीं करता. कृषि में असंतुलनात्मक तथा ऐच्छिक बेरोजगारी द्रष्टव्य होती है. इसके अलावा कृषि क्षेत्र में संरचनात्मक, अल्प, दृश्य अल्प, अदृश्य अल्प, खुली, मौसमी, चक्रीय, छिपी बेरोजगारी भी देखने को मिलती है.

बेरोजगारी से बचने के लिए नौकरियों की चाह को छोड़कर उन धंधों को अपनाना चाहिए, जिनमें श्रम की आवश्यकता होती है. इस अर्थ में घरेलू उद्योग-धंधों को पुनर्जीवित करना तथा उन्हें विकसित करना आवश्यक है. शिक्षा-नीति में परिवर्तन लाकर इसे रोजगारोन्मुखी बनाने की भी आवश्यकता है. केवल डिग्री ले लेना ही महत्वपूर्ण नहीं, अधिक महत्वपूर्ण है योग्यता और कार्यकुशलता प्राप्त करना. आज आवश्यकता इस बात की है कि बेरोजगारी के मूलभूत कारणों की खोज के पश्चात् इसके निदान हेतु कुछ सार्थक उपाय किए जाएं. इसके लिए सर्वप्रथम हमें अपने छात्र-छात्राओं तथा युवक-युवतियों की मानसिकता में परिवर्तन लाना होगा. यह तभी प्रभावी हो सकता है, जब हम अपनी शिक्षा पद्धति में सकारात्मक परिवर्तन लाएँ. उन्हें आवश्यक व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करें, जिससे वे शिक्षा का समुचित उपयोग कर सकें. विद्यालयों में तकनीकी एवं कार्य पर आधारित शिक्षा दें, जिससे उनकी शिक्षा का उपयोग उद्योगों व कारखानों में हो सके और वे आसानी से नौकरी पा सकें.

सभी सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों में तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा को प्रोत्साहन दिया जा रहा है. बढ़ती जनसंख्या को नियंत्रित करने हेतु विभिन्न परिवार कल्याण योजनाओं को लागू किया गया है. सभी बड़े शहरों में रोजगार कार्यालय खोले गए हैं, जिनके माध्यम से युवाओं को रोजगार की सुविधा प्रदान की जाती है. समय की भी मांग है कि युवा वर्ग को स्वरोजगार के लिए प्रोत्साहित किया जाए. इसमें न केवल उनका, अपितु देश का हित भी जुड़ा हुआ है. सफलता और दौलत के लिए कृषि उद्यमी बनें.

यदि ध्यान दिया जाए, तो कृषि में स्व-रोजगार स्थापित करने का क्षेत्र इतना व्यापक है कि आकाश भी छोटा पड़ जाए. कृषि क्षेत्र में स्वरोजगार स्थापित करने के निम्न आयाम हैं:

बागवानी और संबद्ध क्षेत्र- बागवानी में रोजगार के अपार अवसर हैं; विशेषकर बेरोजगार युवाओं और महिलाओं के लिए स्वरोजगार सृजन की बागवानी में व्यापक संभावनाएं हैं. बहुत से कृषि उत्पादनों में भारत विश्व का नेतृत्व करते आ रहा है जैसे आम, केला, नींबू, नारियल, काजू, अदरक, हल्दी और काली

मिर्च. वर्तमान में भारत, विश्व में फल और सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है. भारत का सब्जी उत्पादन चीन के बाद दूसरे स्थान पर है और फूल गोभी के उत्पादन में पहला स्थान है. प्याज में दूसरा और बंद गोभी में तीसरा स्थान है. इसके अतिरिक्त हमारा देश मसालों का सबसे बड़ा उपभोक्ता, उत्पादक और निर्यातक है. भारत के सभी प्रदेशों में सब्जियों व मसालेदार फसलों जैसे आलू, अरबी, शकरकंद, जमीकंद, भिण्डी, गोभी, सेम, मटर, टमाटर, बैंगन, मिर्ची, हल्दी, धनियां, अदरक, लहसुन, मेथी, पालक आदि की खेती की अपार संभावनाएं विद्यमान हैं. इनकी खेती आर्थिक रूप से लाभदायक भी है. फल, फूल एवं सब्जी की खेती को बढ़ावा देने के लिए केन्द्र सरकार विभिन्न राज्यों में हार्टीकल्चर मिशन चला रही है. इसके तहत किसानों को आर्थिक सहायता प्रदान की जा रही है.

पुष्प कृषि- वाणिज्यिक पुष्प कृषि हाल में ही शुरू हुई है; यद्यपि पुष्पों की पारंपरिक खेती भारत में सदियों से हो रही है; किन्तु वर्तमान में पुष्प कृषि एक व्यवसाय के रूप में की जाने लगी है; क्योंकि भगवान की पूजा हो, विवाह हो, त्योहार हो या किसी का स्वागत सम्मान हो अथवा किसी को श्रद्धांजलि अर्पित करनी हो, फूलों के बिना संपन्न नहीं हो सकती है. समकालिक कटे फूलों जैसे गुलाब, ग्लेडियोलस, टयूबरोस, कार्नेशन इत्यादि का वर्धित उत्पादन पुष्प गुच्छ तथा साथ ही घर तथा कार्यस्थल के अलंकरण हेतु इनकी मांग में निरंतर वृद्धि हो रही है. फूलों से आप गुलदस्ता, कट फ्लावर, माला, स्टेज सज्जा, बुके आदि बना कर बाजार में बेच सकते हैं. अनेक फूलों जैसे गुलाब, चमेली, मोगरा आदि से इत्र/ फ्रेशनर तैयार किए जाते हैं. फूलों के राजा गुलाब का कहना ही क्या है, इसका फूल किसी का भी मन मोह लेता है. वेलेंटाइन डे के समय तो गुलाब का एक पुष्प 15-20 रुपये में बिकता है. गुलाब के फूलों से गुलकंद और गुलाब जल भी बनाया जाता है. इस प्रकार रोजगार सृजन के लिए पुष्पीय पौधों की खेती एक महत्वपूर्ण उद्यम बन सकता है, जिसमें पैसे के साथ-साथ फूलों की खुशबू और अपार खुशियां भी आपको मिल सकती है.

औषधीय एवं सुगंधित पादप खेती एवं प्रसंस्करण- भारत को मूल्यवान औषधीय और सुरभित पादप किस्मों का भंडार माना जाता है. चिकित्सा की भारतीय प्रणालियों अर्थात आयुर्वेद, यूनानी तथा सिद्ध औषधियों की देश-विदेश में बहुत मांग है. बहुमूल्य दवाइयां बनाने में प्रयुक्त 80 प्रतिशत कच्ची सामग्री औषधीय पौधों से प्राप्त होती है. हमारे देश में उगाये जाने वाले प्रमुख औषधीय पौधों में आंवला, चिरायता, कालमेघ, सफेद मूसली, दारूहल्दी, सर्पगंधा, अश्वगंधा, गिलोय, सेन्ना, अतीस, गुडमार कुटकी, शतावरी, बेल गुग्गल, तुलसी, ईसबगोल, मुलेठी, वैविडंग, ब्राह्मी, जटामांसी, पथरचूर कोलियस, कलीहारी आदि प्राकृतिक रूप से उगते हैं; जिनके कृषिकरण, प्रसंस्करण एवं विपणन में

ग्रामीण युवाओं के लिए रोजगार के पर्याप्त अवसर विद्यमान हैं. सगंध फसलों में पामारोशा, नींबू घास, सिट्रोनेला, मेंथा आदि की उद्योग जगत में भारी मांग है.

पशुपालन और डेयरी- पशुपालन और डेयरी विकास भारत के सामाजिक आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है. पशुपालन सदैव से ही मानव संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है. सुरक्षा, शौक, परिवहन एवं आजीविका के लिए तथा अपनी पोषण सम्बन्धी जरूरतों की पूर्ति सहित अनेक अन्य कार्यों के लिए हम अपने इन वफादार सहचरों पर आज भी आश्रित हैं. विश्व के अनेक देशों की भांति हमारे यहां भी गौवंशीय पशु पालन, बकरी, भेड़, कुक्कुट, अश्व, ऊंट, बतख, खरगोश आदि के पालन-पोषण से छोटी-बड़ी आय अर्जन की अनेक गतिविधियां प्रचलित हैं. संसार में भैंसों के संदर्भ में भारत का पहला स्थान है, पशुओं तथा बकरियों में दूसरा, भेड़ों में तीसरा, बतखों में चौथा, मुर्गियों में पांचवां और ऊंटों की संख्या में छठा. पशुधन क्षेत्र न केवल दूध, अंडे, मांस आदि के रूप में आवश्यक प्रोटीन तथा पोषक मानव आहार उपलब्ध कराता है, बल्कि पशुधन कच्ची सामग्री के उपोत्पाद यथा खाल तथा चमड़ा, रक्त, अस्थि, वसा आदि उपलब्ध कराता है. दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में भारत का योगदान निर्विवादित रूप से सर्वश्रेष्ठ है. जनसंख्या वृद्धि को ध्यान में रखते हुए देश में पशुपालन व्यवसाय को विकसित करने की असीम संभावनाएं हैं. किसानों द्वारा वर्तमान में पाली जा रही गाय व भैंस की नस्लों की उत्पादन क्षमता बहुत कम है. नस्ल सुधार तथा उत्तम नस्ल की गाय-भैंस पालने से ग्रामीण अंचल की अर्थव्यवस्था काफी हद तक सुधरने की संभावना है. दुग्ध एक ऐसा उत्पाद है, जिसकी मांग निरन्तर बनी रहती है. इस डेयरी उद्योग को बढ़ावा देने से हमारे नौजवानों एवं ग्रामीण महिलाओं को वर्ष पर्यन्त रोजगार प्राप्त होगा, साथ ही पशुओं से प्राप्त गोबर बहुमूल्य जैविक खाद के रूप में प्रयोग करने से हमारी कृषि भूमि की उर्वरित शक्ति भी बढ़ेगी, जिससे फसल उत्पादन में सतत बढ़ोत्तरी होगी. पशुपालन में दाना-खली का महत्वपूर्ण योगदान होता है. इनके निर्माण की इकाइयाँ स्थापित की जा सकती हैं. लाखों लोगों के लिए सस्ता पोषक आहार उपलब्ध कराने के अतिरिक्त यह ग्रामीण क्षेत्र में लाभकारी रोजगार पैदा करने में मदद करता है, विशेष रूप से भूमिहीन मजदूरों, छोटे तथा सीमांत किसानों तथा महिलाओं के लिए. इस प्रकार उनके परिवार की आय बढ़ाता है. सूखा, अकाल तथा अन्य प्राकृतिक आपदाओं जैसी प्राकृतिक विभीषिकाओं के प्रति पशुधन सर्वोत्तम बीमा है. भारत के पास पशुधन तथा कुक्कुट के विशाल संसाधन हैं, जो ग्रामीण लोगों की सामाजिक आर्थिक दशा सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं.

मत्स्य पालन- भारत, संसार में मछली का तीसरा सबसे बड़ा उत्पादक है और स्वच्छ

जल के मत्स्य का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक. अपनी लंबी समुद्री तट सीमा, विशाल जलाशयों आदि के कारण भारत के पास अंतर्देशीय तथा समुद्री दोनों संसाधनों से मत्स्य पालन के लिए व्यापक संभावनाएं हैं. मत्स्य क्षेत्र को एक शाक्तिशाली आय एवं रोजगार जनक माना जाता है.

बकरी पालन- बकरी को गरीब और छोटे किसानों की गाय भी माना जाता है. देश के ग्रामीण क्षेत्रों में बकरी पालन पारम्परिक रूप से एक बड़ा व्यवसाय रहा है. बकरी पालन गाँवों के नौजवानोंके लिए एक फायदे का पेशा हो सकताहै. आजकल बकरी के दूध की मांग भी बढ़ रही है.

जैविक खेती- जैविक खेती आज कृषि व्यवसाय का नया मंत्र बन रहा है. रसायन रहित भोजन की चाहत बढ़ने से किसानों, खासकर छोटे उत्पादकों के लिए संभावनाओं के नए दरवाजे खुल रहे हैं. जिससे वे कीटनाशकों एवं रासायनिक उर्वरकों पर होने वाले खर्च बचाकर शुद्ध खाद्य वस्तुएं उत्पादित कर अच्छा मूल्य पा सकते हैं. लोगों में बढ़ती स्वास्थ्य जागरूकता के चलते पूरे विश्व में आर्गेनिक खाद्य पदार्थों की मांग तेजी से बढ़ी है. इस क्षेत्र में भी रोजगार की बेहतर संभावनाएं हैं.

कृषि प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन उद्योग- कृषि प्रसंस्करण विविधताओं से भरा उद्योग है, जिसमें कृषि, बागवानी एवं वानिकी उत्पादों के अलावा डेयरी, बकरी पालन, भेड़ पालन,पोल्ट्री, मछली आदि से उत्पन्न कच्चे माल का प्रंसस्करण, पैकिंग और विपणन किया जा सकता है.

(i) **खाद्य प्रसंस्करण:** खाद्य प्रसंस्करण में खाद्यान्न, दलहन एवं तिलहन उद्योग स्थापित किये जा सकते हैं. खाद्यान्न फसलों जैसे गेंहू से दलिया, आटा, मैदा, सिवई, नूडल्स आदि निर्मित करने की इकाई प्रारंभ की जा सकती है. जई और जौ के दलिया/ ओट्स की आज बाजार में अधिक मांग है; क्योंकि इनमें रेशे की अधिक मात्रा होने के कारण यह मधुमेह रोगियों के लिए पौष्टिक एवं लाभदायक होता है. इसी प्रकार चावल से विभिन्न उत्पाद यथा मुरमुरे, खील, पोहा आदि तैयार किये जा सकते हैं. मक्का की विभिन्न किस्में जैसे स्वीट कॉर्न से सूप व स्नेक्स, पॉपकॉर्न, बेबी कॉर्न, मक्का से कॉर्न फ्लेक्स, दलिया, आटा तैयार करने की इकाई शुरू की जा सकती है. दलहनों से दाल, बेसन तथा तिलहनों से तेल निर्माण की विविध इकाइयां स्थापित कर स्वरोजगार प्राप्त किया जा सकता है. इन खाद्यान्नों के प्रसंस्करण पश्चात उत्पन्न चोकर, चुन्नी, खली आदि को पशु आहार के रूप में बेचकर अतिरिक्त मुनाफा कमाया जा सकता है.

(ii) **फल एवं सब्जी प्रसंस्करण उद्योग:** सौभाग्य से हमारे देश में जलवायु और मिट्टियों की जितनी विविधता है वो अन्य किसी देश में शायद ही हो. इसलिए हमारे देश में नाना प्रकार के फल एवं सब्जियां वर्ष पर्यन्त उगाई जा रही हैं. विश्व में चीन के बाद भारत सबसे बड़ा फल और सब्जी उत्पादक देश है. फल एवं सब्जियों में पानी की अधिक मात्रा होने के कारण ये शीघ्र ख़राब होने लगती हैं. मौसमी फलों में आम, अमरुद, अनार, केला, बेर, पपीता आदि तथा सब्जियों में टमाटर, आलू, मिर्च, गाजर आदि बहुतायत में पैदा किये जाते हैं. बागवानों के लिए इन फलों एवं सब्जियों से अधिक मुनाफा प्राप्त करने का विकल्प हमेशा खुला रहता है. फलों एवं सब्जियों का प्रसंस्करण करके किसान और बागवान कई तरह के उत्पाद बनाकर बाजार में बेच सकते हैं. इससे इन्हें खासा मुनाफा प्राप्त हो सकता है. टमाटर से लेकर मिर्च तक और आम से लेकर आवलां तक का जैम, जेली, अचार, मुरब्बा आदि तैयार किये जा सकते हैं. किसान और युवा अपना उद्यम भी इन क्षेत्रों में स्थापित कर सकते हैं.

(iii) **रेशम कीट एवं मधुमक्खी पालन:** रेशम अद्वितीय शान वाला एक प्राकृतिक रूप से उत्पादित रेशा है. छत्तीसगढ़ में टस्सर रेशम व शहतूत रेशम का उत्पादन करने की अच्छी संभावनाएं है. टस्सर रेशम का प्रयोग मुख्यतः फर्निशिंग्स तथा इंटीरियर के लिए किया जाता है. यह बहुत से लोगों को रोजगार उपलब्ध कराता है, जिनमें से अधिकांश लघु तथा सीमांत किसान अथवा अति लघु तथा घरेलू उद्योग हैं, जो मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्रों में हैं. रेशम उद्योग में निम्न निवेश से अधिक आमदनी प्राप्त होती है. पूरे वर्ष परिवार के सभी सदस्यों को रोजगार प्राप्त होता है. रेशम-उद्योग में शामिल कार्य जैसे पत्तों की कटाई, सिल्कवॉर्म का पालन, रेशम के धागे की स्पिनिंग अथवा रीलिंग तथा बुनाई का कार्य महिलाएं करती हैं. यह एक उच्च आय सृजन उद्योग है, जिसे देश के आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण साधन माना जाता है. मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ दोनों राज्यों में मधुमक्खी पालन की अपार संभावनाएं हैं. प्राकृतिक रूप से भी हमारे वनों में मधुमक्खियों द्वारा उत्पादित शहद का संकलन एवं प्रसंस्करण किया जाता है.

लघु वनोपज आधारित स्वरोजगार- भारत के अनेक राज्यों में लघु वनोपजों की पर्याप्तता एवं उनके उपयोगों को ध्यान में रखते हुए स्वरोजगार के लिए यह अत्यंत ही लाभदायक क्षेत्र हो सकता है. इस क्षेत्र में मुख्य रूप से करंज, सवाई घास, गोंद राल, महुवा फूल, आम, इमली, चिरोंजी, लाख, हर्रा, साल बीज, कुशुम, तेंदू पत्ता, पलास, ओषधि एवं सगंध पौधों का संकलन इत्यादि है. इन उपलब्ध वनोपजों से निर्मित उत्पादों के प्रसंस्करण एवं विक्रय अधिक लाभदायक होता है.

बेरोजगार कृषि स्नातकों के लिए प्रशिक्षण- बेरोजगार कृषि स्नातकों को कृषि क्षेत्र में उद्यम प्रारंभ करने के लिए प्रशिक्षत करने के लिए भारत सरकार द्वारा 'कृषि चिकित्सालय एवं कृषि व्यवसाय केंद्र' नामक महत्वाकांक्षी योजना देश के सभी राज्यों में संचालित की जा रही है. किसानों को खेती, फसलों के प्रकार, तकनीकी प्रसार, कीड़ों और बीमारियों से फसलों की सुरक्षा, बाजार की स्थिति, बाजार में फसलों की कीमत और पशुओं के स्वास्थ्य संबंधी विषयों पर विशेषज्ञ सेवाएं उपलब्ध कराने के उद्देश्य से कृषि क्लीनिक की परिकल्पना की गयी है, जिससे फसलों या पशुओं की उत्पादकता बढ़ सके. कृषि व्यापार केंद्र की परिकल्पना आवश्यक सामग्री की आपूर्ति, किराये पर कृषि उपकरणों और अन्य सेवाओं की आपूर्ति के लिए की गयी है.

इनके अलावा ग्रामीण क्षेत्रों में मशरूम की खेती, बकरी पालन,खरगोश पालन, बटेर पालन, बत्तख पालन के अलावा कृषि उपकरण निर्माण एवं मरम्मत के क्षेत्र में भी उद्यम स्थापित करने की भी अपार संभावनाएं है.

मौजूदा समय में भारत दुनिया के सबसे युवा देशों में से एक है. भारत की कुल आबादी में 25 साल से कम आयु के युवाओं की संख्या 50% और 35 साल से कम आयु के युवाओं की संख्या लगभग 65% के आसपास है, जिसका यह अर्थ है कि देश की कुल आबादी में काम करने वालों की कुल संख्या बहुत ज्यादा और निर्भर लोगों की संख्या कम होगी. अर्थशास्त्रियों की मानें तो पिछले कुछ वर्षों में भारत की तेज विकास दर में यह एक प्रमुख कारण रहा है. श्रम शक्ति में शामिल होने वाली युवा आबादी को बेहतर शिक्षा, प्रशिक्षण प्रदान कर कृषि क्षेत्र में अनेक रोजगार के अवसर प्रदान कर देश की उन्नति में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया जा सकता है. 1960 के बाद उच्च उपज बीज का प्रयोग शुरू हुआ. इससे सिंचाई और रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग बढ़ गया. इसके साथ ही कृषि उत्पाद काफी बढ़ गया.

इसके फलस्वरूप भारतीय कृषि उत्पाद तत्कालीन वाणिज्य व्यवस्था के द्वारा विश्व बाजार में पहुँचना शुरू हो गया. दूसरे देशों से भी कुछ फसलें भारत में आयीं. कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है. वैश्वीकरण के इस युग में कृषि को प्रतियोगी बनाकर ही इनके सम्भावित खतरों से बचते हुए कृषि को लाभदायक क्षेत्र के रूप में परिवर्तित करना सम्भव है. परिवर्तन व प्रतियोगिता समय की माँग है, इसी तथ्य का अनुसरण करते हुए कृषि व्यवस्था में सुधार करने, कृषि तकनीक व्यवस्था में परिवर्तन करने तथा जलवायु परिवर्तन के कहर से बचने के लिए प्रभावी व्यूह-रचना का क्रियान्वयन जरूरी है. कृषि को विकास पथ पर अग्रसर करने एवं प्रतियोगी बनाने हेतु निम्न बिन्दुओं पर क्रियान्वयन जरूरी है: - केवल परम्परागत फसलों को उगाकर ही किसान समृद्ध नहीं हो सकते, बदलती माँग व कीमतों के अनुरूप फसल प्रतिरूप में परिवर्तन भी आवश्यक है. प्राकृतिक विधि व जैविक

खाद के उपयोग से उगाए गए खाद्य पदार्थों की माँग अमेरिका, यूरोप व जापान में तेजी से बढ़ रही है. इस बढ़ती माँग के अनुरूप उत्पादन करके किसानों को लाभ उठाने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए. शुष्क खेती, जल-संरक्षण, कुशल व दक्ष सिंचाई व्यवस्था, जैविक खेती व कृषि शोध एवं विस्तार पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है. किसानों को छिड़काव सिंचाई विधि का प्रयोग बढ़ाने के लिए प्रेरित करना चाहिए.

चूँकि विकास दर बढ़ाने का मूल मन्त्र कृषि ही है; अतएव इस क्षेत्र के लिए ठोस व प्रभावी नीतियों के क्रियान्वयन से ही सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की धुँधली होती तस्वीर को उजला बनाना सम्भव है. हमें विश्व व्यापार संगठन के तहत किए गए समझौतों, वैश्वीकरण व उदारीकरण की प्रक्रियाओं का कृषि व ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर प्रभाव का बारीकी से विश्लेषण करना होगा, तभी हम इन्हें लागू कर सकते हैं. हमें विकसित देशों के द्वारा दिखाए गए दिवा-स्वप्नों से दिग्भ्रमित न होते हुए यथार्थ व व्यावहारिक नीतियों को प्राथमिकता देनी चाहिए.

श्वेता सिंह, प्रबंधक, (राजभाषा), क्षेत्रीय कार्यालय, हावड़ा

प्रियंका शर्मा

भारतीय कृषि एवं हरित क्रांति

'हरित क्रांति ने मनुष्य के भूखमरी एवं वंचना के विरुद्ध युद्ध में अस्थायी सफलता प्राप्त की है. इसने मनुष्य को सांस लेने हेतु स्थान प्रदान किया है.' डॉ नारमन ई. बोरलाग (नोबल भाषण, दिनांक 11 दिसम्बर, 1970).

1943 की बंगाल भूखमरी की भयावह स्मृतियों के पश्चात खाद्य सुरक्षा भारत के नीति निर्धारिकों के लिए प्रमुख मुद्दा बन गया. एक राष्ट्र, जो हरित क्रांति से पूर्व अनेक बार भूखमरी एवं भीषण खाद्य अपर्याप्तता से ग्रस्त था, वह आज खाद्य आधिक्य से परिपूर्ण है. हरित क्रांति ने भारतीय कृषि को आकर्षक एवं जीवन शैली को जीवन निर्वाहक के स्थान पर व्यावसायिक आयाम प्रदान किया है. भारत आज आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी एवं तकनीक व भौतिक एवं जैविक विज्ञान पर निर्भर है. स्वतंत्रता प्राप्ति के समय 51 मिलियन टन के खाद्य उत्पादन से आज हम अवर्णनीय प्रगति करते हुये 257 मिलियन टन के खाद्य उत्पादन पर हैं. भारत आज विश्व के 15 अग्रणी कृषि उत्पादक निर्यातकों में से एक है. इस आलेख द्वारा भारत में हरित क्रांति युग से पूर्व एवं पश्चात कृषि उत्पादकता का समीक्षात्मक एवं विश्लेषणात्मक मूल्यांकन करने का एक प्रयास किया गया है.

प्रस्तावना:-

'कहीं भी होने वाली खाद्य असुरक्षा, सर्वव्यापी शांति के लिए खतरा है.'भारत सदैव से अकाल एवं सूखे का देश रहा है. भारत में ग्यारहवीं से सत्रहवीं शताब्दी के मध्य 14 अभिलेखित अकाल हुए है. अंतिम प्रमुख अकाल भारत की स्वतंतत्रता प्राप्ति से ठीक चार वर्ष पूर्व 1943 में बंगाल में हुआ. इसके उपरांत 1966 में बिहार का अकाल, 1970-73 में महाराष्ट्र, 1979-80 में पश्चिम बंगाल व 2013 में पुनः महाराष्ट्र का अकाल रहा. भारत को जब स्वतंत्रता प्राप्त हुई, उस समय भारतीय कृषि अपने सबसे खराब दौर से गुजर रही थी. अतः यह स्वाभाविक रहा कि खाद्य सुरक्षा स्वतंत्र भारत की कार्यसूची में प्रमुख मुद्दा बन गई. खाद्य सुरक्षा से अभिप्राय समस्त व्यक्तियों की हर समय पर्याप्त, सुरक्षित

एवं पौष्टिक आहार के प्रति भौतिक एवं आर्थिक पहुँच से है, जिसके माध्यम से वे एक सक्रिय एवं स्वस्थ जीवन निर्वाह के लिए अपनी आहार संबंधी आवश्यकताओं एवं खाद्य प्राथमिकताकओं को पूरा कर सकें (वर्ल्ड फूड समिट, 1996). खाद्य सुरक्षा के तीन स्तंभ हैं- खाद्यान्न की भौतिक उपलब्धता, खाद्यान्न के प्रति सामाजिक एवं आर्थिक पहल तथा खाद्य उपभोग.

खाद्य सुरक्षा के प्रति जागरूकता एवं प्राथमिकता के कारण 70 के दशक के मध्य में हरित क्रांति की शुरूआत हुई, जिससे खाद्यान्न में न केवल आत्मनिर्भरता आयी, बल्कि देश में उसकी अधिकता भी हुई. दूसरी ओर सरकार ने व्यापारियों द्वारा अपने लाभ के लिए खाद्य संचय किये जाने पर रोक लगाने के लिए अधिनियमों द्वारा नकेल लगाने का प्रयास किया. धीरे-धीरे भारतीय कृषि परंपरागत जीवन निर्वाहक क्रिया से परिवर्तित होकर आधुनिक बहु-आयामी उद्यम बन गई. पूर्ण खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने के लिए सरकार ने हरित क्रांति की तकनीक का तीव्रता से प्रसार किया. सौभाग्यवश, आज देश में इस प्रकार की खाद्य असुरक्षा नहीं है. भारत उन कुछ राष्ट्रों में से एक है, जहाँ हरित क्रांति सबसे अधिक सफल रही है. भारत में हरित क्रांति की सफलतम यात्रा के कुछ तथ्य इस प्रकार हैं.

- भारत विश्व के 15 अग्रणी कृषि उत्पाद निर्यातकों में से एक है. कुछ विशिष्ट उत्पादों जैसे तिलहन, चावल (विशेषकर बासमती चावल), कपास इत्यादि में भारत की निर्यातक क्षमता प्रशंसनीय है.
- भारत का कृषि निर्यात संपूर्ण विश्व के व्यापार का 2.6 प्रतिशत है (डब्ल्यूटीओ, 2012). सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में कृषि निर्यात 2008-09 के 9.10 प्रतिशत से बढ़कर 2012-13 में 14.10 प्रतिशत हो गया है.
- प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता 1951 में 349.9 ग्राम से बढ़कर 2011 में 462.9 ग्राम हो गई. औद्योगिक क्षेत्र में हुई अभूतपूर्व प्रगति के बाद भी कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख अंग है. भारतीय कृषि नवीन युग में अनेक क्षेत्रों में विविधीकृत हो गई है, जैसे बागवानी, फूलबानी, मत्स्यपालन, मधुमक्खी पालन इत्यादि.

भारत में कृषि का स्थान एवं महत्व :

भारत में ब्रिटिश शासन से पूर्व, कृषि जीवन-शैली का परंपरागत अभिन्न अंग थी. पशुपालन, किसानों की प्रमुख सहायक क्रिया थी. उस समय कृषि स्वतंत्र एवं जीवन निर्वाहक प्रकृति की थी. कृषक स्वतंत्र थे एवं ग्रामीण समुदाय अपनी

आवश्यकताओं के लिए काफी हद तक आत्म-निर्भर था. जब अंग्रेज़ 17वीं शताब्दी में भारत आए, उन्होंने कृषि का प्रयोग भारतीयों पर नियंत्रण प्राप्त करने के लिए एवं उनसे राजस्व वसूलने के लिए किया. कृषक राजस्व प्राप्ति एवं इंग्लैंड की औद्योगिक क्रांति की गति बढ़ाने का साधन मात्र रह गए. प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व, जब बाजार समस्त खाद्यान्नों के लिए अनुकूल था, भारतीय कृषि ने अभूतपूर्व प्रगति की. प्रथम विश्व युद्ध, 1930 की वैश्विक मंदी एवं द्वितीय विश्व युद्ध ने निर्यात बाजार का संकुचन कर दिया. बंगाल के अकाल ने स्थिति को और अधिक भयावह बना दिया.

इस काल के दौरान भारत के पक्ष में मात्र एक अनुकूल घटना घटित हुई और वह थी लंबे काल से आकांक्षित स्वतंत्रता. परंतु स्वतंत्र भारत अनेक आर्थिक समस्याओं से जूझ रहा था; जैसे बंगाल अकाल के पश्चात के प्रभाव, निम्न कृषि उत्पादकता, अत्यंत निम्न प्रति व्यक्ति खाद्य उपलब्धता, ग्रामीण ऋणग्रस्तता और बढ़ती हुई भूमिहीन श्रमिकों की संख्या. अतः कृषि की स्थिति को सुधारने के लिए शीघ्रतम प्रयास जरूरी थे. इस प्रकार भारतीय कृषि में हरित क्रांति के आगमन की पृष्ठभूमि तैयार हुई. यह क्रांति एचवाईवी, बीज, रसायन, कीटनाशकों एवं भू-मशीनीकरण पर आधारित थी. इस क्रांति ने भारतीय कृषि की कला को परिवर्तित कर दिया (सारिणी-1) :

सारिणी 1 भारतीय कृषि कला में परिवर्तन

घटक	1950 में	आज
बीज	कृषक खाद्य उत्पादन का निश्चित भाग बीज के रूप में प्रयुक्त करते थे.	एचवाईवी बीजों का प्रयोग.
भूपोषक आवश्यकता	एफवाईएम एवं कम्पोस्ट द्वारा	उर्वरक + एफवाईएम + जैविक उर्वरक
कीटनाशक	डीडीटी का विस्तृत प्रयोग	इंटीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेंट का प्रयोग
पर्यावरणीय जागरूकता	रसायनों का अनावश्यक एवं अन्यायपूर्ण प्रयोग.	मृदा आवश्यकताओं के अनुसार उर्वरकों का प्रयोग.
सूचना तंत्र	कृषकों को कृषि की आधुनिक कलाओं का ज्ञान न होना.	सूचना तकनीक का विस्तृत प्रयोग.
कृषि सहयोगी सेवायें	सरकार पर निर्भरता	निजी क्षेत्रों का बढ़ता महत्व
श्रमिक	घर के सदस्यों का प्रयोग	किराए का श्रम
मशीनों का प्रयोग	अत्यंत निम्न प्रयोग	कृषि मशीनीकरण का प्रभुत्व

उत्पादन	पण्य आधिक्य का कम होना	अधिकतम पण्य आधिक्य
उद्देश्य	पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति	अत्यधिक लाभार्जन
दृष्टिकोण	जीवन निर्वाहक	व्यावसायिक

भारत में हरित क्रांति :

'हरित क्रांति का अर्थ वरीयता प्राप्त विश्व के सम्पन्न राष्ट्रों के निवासियों के लिए एवं भूले हुए विश्व के विकासशील राष्ट्रों के निवासियों के लिए पूर्णतया भिन्न है.' - डॉ नॉरमन बोरलाग

हरित क्रांति शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग डॉ.विलियम गैड ने किया था. परंतु जिस व्यक्ति ने इस शब्द को एक शाब्दिक अर्थ प्रदान किया, वे थे डॉ नॉरमन बोरलाग हैं. उन्हें विश्व में 'हरित क्रांति के जनक' के रूप में जाना जाता है. हरित क्रांति से अभिप्राय शोध एवं विकास, तकनीकी स्थानांतरण, एचवाईवी बीजों के प्रयोग, सिंचाई सुविधाओं के विस्तार, प्रबंधकीय तकनीकों के आधुनिकीकरण एवं कृषकों को हाइब्रिड बीजों, सिंथेटिक उर्वरकों व कीटनाशकों के वितरण की पहल की शृंखला से है. यह शृंखला 40 के दशक से 60 के दशक के अंत तक प्रभावी हुई, जिसके माध्यम से विश्व की, विशेषकर विकासशील राष्ट्रों की कृषि उत्पादकता में अभूतपूर्व वृद्धि हुई. इन तकनीकों का सर्वप्रथम प्रयोग मैक्सिको में रोग प्रतिरोधक उच्च प्रजनन क्षमता के हाइब्रिड बीजों को बनाकर किया गया. इस कारण मैक्सिकों में गेहूं के उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई. 60 के दशक के प्रारंभ के अकाल एवं तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या के दबाव ने भारत सरकार को बोरलॉग को आमंत्रित करने के लिए विवश किया.

एम एस स्वामीनाथन, जिनके सुझावों पर यह आमंत्रण प्रेषित हुआ, को 'भारत में हरित क्रांति के जनक' के रूप में जाना जाता है. बोरलॉग समूह ने भारत में आईआर 8 नाम के चावल की बौनी प्रजाति को निर्मित किया, जिससे आज भारत विश्व के प्रमुख चावल निर्यातकों में स्थान पा सका है. गेहूं के एचवाईवी बीजों जैसे- के 68, मैक्सिकण प्रजाति (लर्मा, रोजो, सोनारा-64, कल्याण एवं पीवी 18) तथा चावल के बीजों की विभिन्न प्रजातियों (टीएन-1, टिनिन-3 इत्यादि) का प्रयोग भी उल्लेखनीय है. 60 के दशक के मध्य से 80 के दशक के मध्य तक हरित क्रांति उत्तर पश्चिम राज्यों (पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी यूपी) से लेकर दक्षिण भारतीय राज्यों तक फैल गई. हरित क्रांति तकनीकों की सफलता निम्नलिखित समस्त घटकों के उपयुक्त मिश्रण पर निर्भर करती है.

- ज्वार, बाजरा, मक्का विशेषकर चावल एवं गेंहू के एचवाईवी बीजों के प्रयोग ने कृषि उत्पादकता को पर्याप्त तेज़ी प्रदान की है. ये बीज उर्वरकों के प्रति अधिक सक्रिय,

दोहरी फसल में सहायक, अल्प परिपक्वता काल की विशेषताओं से परिपूर्ण थे.

- भारतीय मानसून अत्यधिक अनिश्चित, अनियमित एवं मौसम आधारित है. एचवाईवी बीजों को सिंचाई एवं उर्वरकों की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है. अतः सिंचाई साधनों के लिए पंप सेट, ट्यूब वेल, ड्रिप सिंचाई, रेनफेड एरिया डेवलप्मेंट, वाटरशेड फंड इत्यादि को प्रोत्साहित किया गया. कृत्रिम मानसून, डैम परियोजनाओं द्वारा जल रोकने जैसे उपाय भी उल्लेखनीय हैं. भारत में खाद्यान्नों का कुल सिंचित क्षेत्र 1970-71 में मात्र 24.1 प्रतिशत था, जो अब बढ़कर 48.3 प्रतिशत हो गया है.

- उर्वरकों की आवश्यकताओं को मृदा की गुणवत्ता एवं आवश्यकताओं तथा नाइट्रोजन, फास्फेट व पोटाश की उपलब्धता के आधार पर निर्धारित किया गया है. 2000-01 से 2012-13 में यूरिया, डी अमोनियम फास्फेट, म्यूरियट ऑफ पोटाश, मिश्रित उर्वरक एवं एनपीके के उपभोग में क्रमशः 56.37 प्रतिशत, 55.57 प्रतिशत, 20.89 प्रतिशत, 57.47 प्रतिशत एवं 52.89 प्रतिशत की वृद्धि हुई है.

- हरित क्रांति को और प्रभावी बनाने के लिए उच्च क्षमता, विश्वसनीय और कम ऊर्जा उपभोग करने वाले उपकरणों एवं मशीनों की आवश्यकता अनुभव की गई. कृषि मशीनीकरण से न केवल उत्पादकता बढ़ी; अपितु मानवीय श्रम एवं लागत मूल्य में भी कमी आयी.

- सिंचाई साधनों के लिए ऊर्जा स्त्रोतों की महत्ता को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण विद्युतीकरण पर ज़ोर दिया जा रहा है. कृषि क्षेत्र द्वारा 1950-51 में मात्र 3.9 प्रतिशत ऊर्जा उपभोग की जा रही थी, जो 2009-10 में बढ़कर 20.98 प्रतिशत हो गई. इसके अतिरिक्त ग्रामीण यातायात की सुविधाओं में भी सुधार किया जा रहा है.

- छोटे अनुपजाऊ व छितरे हुए भू-खण्डों को एकत्रित करके सरकार ने चकबंदी की व्यवस्था प्रारंभ की.

इसके अतिरिक्त गहन कृषि जिला कार्यक्रम, बहुफ़सली कार्यक्रम इत्यादि को भी लागू किया गया है. हरित क्रांति युग के दौरान विभिन्न प्रकार की फसलों की उत्पादकता का भी विश्लेषण किया गया है. नियोजन काल से हरित क्रांति आगमन तक सबसे अधिक उत्पादकता गेहूं की फसल में 47 प्रतिशत की थी. हरित क्रांति के प्रारंभिक दौर में भी गेहूं की उत्पादकता में 75 प्रतिशत की उल्लेखनीय बढ़त थी.

भारत में हरित क्रांति की सीमाएं व चुनौतियां :-

- हरित क्रांति 'माल्थस के जनसंख्या सिद्धांत' के आधार पर समीक्षित की जा सकती है. इस सिद्धांत के अनुसार कृषि उत्पादकता बढ़ तो रही है, परंतु जनसंख्या वृद्धि की दर से कम; जिससे आत्म पर्याप्तता की स्थिति प्राप्त नहीं की जा सकती है. भारत के कृषि क्षेत्र का उत्पादन भी अक्सर मांग से कम हो जाता है. इसीलिए भारत अभी पूर्ण व स्थायी आत्म पर्याप्तता प्राप्त नहीं कर सका है.
- सिंचाई की विभिन्न तकनीकों के बाद भी, भारतीय कृषि आज भी मानसून पर निर्भर है.
- हानिकारक उर्वरकों (यूरिया) व कीटनाशकों (डीडीटी, सल्फेट इत्यादि) ने पर्यावरण को दूषित किया है एवं कृषि श्रमिकों के स्वास्थ्य को प्रभावित किया है.
- ट्यूबवेल के अत्यधिक प्रयोग ने भूमिगत जल के प्राकृतिक संसाधन को भी प्रभावित किया है. भूमिगत जल का स्तर 30-40 फीट से 300-400 फीट नीचे पहुँच गया है.

सुझाव व उपाय :-

- जैविक कृषि, जैविक व पर्यावरणपरक तकनीकों का प्रयोग.
- वर्षाजल सरंक्षण एवं मृदा गुणवत्ता व नमी को बनाए रखने के प्रयासों को बड़े स्तर पर करना.
- ऐसी विकसित तकनीकों का प्रयोग करना, जो न केवल लागत कम करें; अपितु प्राकृतिक वातावरण को भी हानि न पहुंचाएं.
- हरित क्रांति का समस्त खाद्यान्नों व समस्त क्षेत्रों में प्रयोग.
- शोध व विकास के निष्कर्षों को कृषकों तक पहुंचाना (विशेषकर निर्धन कृषकों तक).
- सहकारी एवं सामूहिक कृषि को प्रोत्साहन व वृहद स्तर पर कृषकों के लिए शिक्षा, जारूकता एवं प्रशिक्षण अभियान चलाना.

निष्कर्ष :-

संपूर्ण अध्ययन व विश्लेषण के पश्चात यह कहा जा सकता है कि भारत को पूर्ण खाद्य सुरक्षा व खाद्य आत्म-पर्याप्तता प्राप्त करने के लिए कृषि के

और अधिक आधुनिकीकरण व विविधीकरण करने की आवश्यकता है. भारतीय कृषि में व्यावसायिक फसलों के विविधीकरण, वर्षाजल संरक्षण, एग्रो प्रोसेसिंग उद्योगों को प्रोत्साहन, वन संरक्षण, बेकार पड़ी भूमि के प्रयोग व निर्यात संवर्धन के साथ-साथ एक और उत्पादकता क्रांति की आवश्यकता है. भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने भी भारत के पूर्वी राज्यों में हरित क्रांति की दूसरी पारी को लाने के लिए अपनी प्रतिबद्धता सुनिश्चित की है. हरित क्रांति ने हमें यह सीख भी प्रदान की है कि तकनीकों के प्रयोग के माध्यम से शीघ्रातिशीघ्र उत्पादकता तो बढ़ायी जा सकती है; परंतु इस वृद्धि को दीर्घकाल तक सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त संस्थागत एवं सार्वजनिक नीतियों का क्रियान्वयन अति आवश्यक है. इसके अतिरिक्त भारतीय कृषि की सफलता का अन्य सहायक क्षेत्रों (फूलबानी, बागवानी, मत्स्यपालन, सेरीकल्चर, पशुपालन, दुग्धपालन, मुर्गीपालन इत्यादि) में भी दृष्टिगत होना आवश्यक है.

प्रियंका शर्मा, सहायक प्रबंधक, (राजभाषा), केन्द्रीय कार्यालय, मुंबई.

विजय कुमार पाण्डेय

भारतीय कृषि एवं मानसून

भारत एक कृषि प्रधान देश है. भारत की कुल जनसंख्या का दो तिहाई हिस्सा अपने जीवनयापन हेतु कृषि पर ही आश्रित है. इस तरह हम कह सकते हैं कि कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है. यदि हम भारत के विकास में कृषि के योगदान की बात करें या फिर भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की सहभागिता की बात करें, तो हम यह भी जानते हैं कि भारत में कृषि सिंधु घाटी सभ्यता के दौर से की जाती रही है. स्वतंत्र भारत में सन् 1960 के पश्चात कृषि के क्षेत्र में हरित क्रांति के साथ नए युग की शुरुआत हुई. आज भी यदि देखा जाए, तो भारतीय अर्थव्यवस्था में भारतीय कृषि का योगदान लगभग 17 प्रतिशत है. परंतु भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की अहम भूमिका के बावजूद भी भारतीय कृषि आज भी पूरी तरह से मानसून पर निर्भर है. भारत में मानसून का प्रभाव जिस तरह होता है, भारतीय कृषि उसी तरह प्रभावित होती है. यदि मानसून सामान्य रहा, तो कृषि की उपज भी आशातीत होती है. अगर मानसून सामान्य से कम रहा, तो यह भारतीय कृषि को नकारात्मक परिणाम की तरफ प्रवृत्त कर देता है. भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है. देश के कुल निर्यात व्यापार में कृषि उत्पादित वस्तुओं का प्रतिशत काफ़ी अधिक रहता है. भारत में आवश्यक खाद्यान्न की लगभग सभी पूर्ति कृषि के माध्यम से ही की जाती है. वर्तमान समय में भी एक बहुत बड़ी आबादी को कृषि के माध्यम से रोज़गार प्राप्त है. भारतीय कृषि को 'देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़' माना गया है.

भारत में मानसून हिन्द महासागर व अरब सागर की ओर से हिमालय की ओर आने वाली हवाओं पर निर्भर करता है. जब ये हवाएं भारत के दक्षिण पश्चिम तट पर पश्चिमी घाट से टकराती हैं, तो भारत तथा आसपास के देशों में भारी वर्षा होती है. ये हवाएं दक्षिण एशिया में जून से सितंबर तक सक्रिय रहती हैं. वैसे किसी भी क्षेत्र का मानसून उसकी जलवायु पर निर्भर करता है. भारत के संबंध में यहां की जलवायु ऊष्ण

कटिबंधीय है और यहां अधिकांश वर्षा दक्षिण पश्चिम मानसून से होती है. कर्क रेखा भारत के मध्य भाग से पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर से निकलती है. इसका देश की जलवायु पर सीधा प्रभाव पड़ता है.

मानसून की परिकल्पना:

अंग्रेजी शब्द मानसून पुर्तगाली शब्द "moncao(मॉन्सैओ)" से निकला है, जिसका मूल उद्गम अरबी शब्द मॉवसिम(मौसम) से आया है. यह शब्द हिन्दी, उर्दू एवं विभिन्न उत्तर भारतीय भाषाओं में भी प्रयोग किया जाता है. जिसकी एक कड़ी आरंभिक आधुनिक डच शब्द मॉनसन से भी मिलती है.

विख्यात वैज्ञानिक एडमंड हैली उन प्रथम वैज्ञानिकों में थे, जिन्होंने सन् 1686 में मानसून की प्रक्रिया की एक वैज्ञानिक परिकल्पना प्रस्तुत की. उनके अनुसार गर्मी के समय जब महाद्वीप खूब तप जाता है, तो वायु गरम होकर फैलती है और ऊपर उठती है. परिणामस्वरूप पूरे इलाके में हवा का दबाव घटता है और समुद्र की शीतल, नमी प्रधान वायु तेजी से इन निम्न दबाव वाले क्षेत्रों में घुसकर सूखे मैदानी इलाके में बारिश लाती है, पुराने समय में लोगों को यह मालूम नहीं था कि मानसून साल-दर-साल क्यों आता है, किन्तु उन्होंने इन हवाओं का फायदा जरूर उठाया. शीतकाल में सामान्यतः उत्तर-पूर्वी व्यापारी हवाओं के सहारे भारत से अफ्रीका- अरब देशों तक व्यापारी जलयानों से जाते थे और जून-जुलाई की मानसूनी हवाओं पर लौटते थे. व्यापार और कृषि के सन्दर्भ में मानसून के आवागमन का पता लगाना लोगों के लिए जरूरी था. इसका अन्दाजा वे विभिन्न पौधों, जानवरों एवं पक्षियों के व्यवहार में अन्तर से लगाते थे. सोलहवीं शताब्दी में अरब ने वैज्ञानिक तरीके से इसके आगमन का अनुमान लगाने की कोशिश की थी. 'मानसून' शब्द का उद्गम भी अरबी लफ्ज़ मौसम से हुआ है.

मानसून का प्रभाव

भारत में मानसून वर्षा का सबसे विचित्र पहलू यह है कि किसी इलाके में भले ही पिछले साल की अपेक्षा कम या ज्यादा बारिश हो, किन्तु पूरे देश में मानसूनी वर्षा की कुल जलराशि प्रायः एक-सी रहती है. इसका अर्थ यह है कि एक क्षेत्र में कम वर्षा का कारण दूसरे क्षेत्र में अधिक जल वर्षा का होना है. मानसून के इस रहस्य का पता आँकड़ों के निरन्तर विश्लेषण के बाद मिला है. भारत में सूखा और बाढ़ दोनों स्थितियों को लाने वाला यह मानसून ही है. ऐसी विचित्रता के कारण ही प्रत्येक वर्ष बरसात के मौसम में किसी हिस्से में वर्षा की कमी के कारण सूखे की स्थिति पैदा होने से हाहाकार मच जाता है, सारा कृषि कार्य रुक जाता है तो दूसरी ओर अधिक वर्षा से नदियों में भयंकर बाढ़

आ जाती है, खेत में खड़ी फसलें बह जाती हैं और जन-धन की अपार क्षति होती है. अतिवृष्टि और अनावृष्टि का यह मानसूनी खेल कृषकों के लिए विकट संकट उत्पन्न कर देता है. आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति के बावजूद भारत के किसानों को मानसूनी बरसात की ऐसी अनिश्चित स्थिति का कोई समाधान नहीं मिल पाया है. अपनी मस्ती और मतवाली चाल के लिए मानसून काफी बदनाम है. मानसूनी वर्षा की अनिश्चितता के कारण ही कृषि प्रधान देश भारत में खेती-बाड़ी के काम में उतार-चढ़ाव होता रहता है. मानसून पर अधिक निर्भर होने के कारण देश की आर्थिक स्थिति मानसून से प्रभावित हुआ करती है. इसीलिए एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री ने आर्थिक समीक्षा करते हुए कहा है कि "भारतीय कृषि मानसून में जुए का खेल है."

कृषि उपज बढाने के लिए उर्वरकों तथा देसी खाद के इस्तेमाल पर जोर देने की बात कही गई है. इस सुझाव से सहमत होते हुए कृषि वैज्ञानिकों ने जल प्रबंधन के महत्व पर भी विचार किया है. उचित जल प्रबंधन के द्वारा कृषि-उत्पादन में 15 से 20 प्रतिशत वृद्धि की जा सकती है. मानसूनी वर्षा के अनियमित और असमय होने पर किसानों को लाभ की जगह हानि होती है. कृषि में वर्षा की मात्रा के साथ ही उसका वितरण काफी महत्वपूर्ण है. किसी साल की थोड़ी वर्षा भी भली प्रकार से वितरित होने पर अन्य साल की दुगुनी, किन्तु अनियमित रूप से हुई वर्षा से अच्छी रहती है. असमय हुई वर्षा से कृषि को बहुत हानि पहुँचती है. इससे कृषि के कार्य सुचारू रूप से नहीं हो पाते हैं.

मूलतः कृषि प्रधान देश होने के कारण भारत की आर्थिक गतिविधियाँ कृषि-उत्पादन से जुड़ी हैं. विकासशील आर्थिक व्यवस्था में प्रति व्यक्ति आय के बढ़ने के साथ ही अच्छे जीवनयापन की लालसा में खाद्य सामग्री की माँग भी बढ़ती जाती है, जिससे कृषि पर उत्तरोत्तर दबाव पड़ता है. स्वतन्त्रता के 70 वर्षों बाद भी कृषि-उत्पादन की बढ़ोत्तरी की दर तीन से चार प्रतिशत के करीब है, जबकि आर्थिक विश्लेषण तथा अनुमान के आधार पर पाँच प्रतिशत की सालाना दर होनी चाहिए.

कृषि उत्पादन में बढ़ोत्तरी के लिए किए जा रहे अनेक उपायों से अच्छे परिणाम मिलने की सम्भावना है. लेकिन इस सन्दर्भ में यह तथ्य भी उजागर है कि जल प्रबन्धन, उर्वरकों का उपयोग तथा कृषि कार्य के नित नई तकनीकों के अपनाए जाने के बावजूद भारतीय कृषि की मानसून पर निर्भरता बनी रहेगी. वैज्ञानिकों के द्वारा किए जा रहे अथक प्रयासों के अच्छे परिणाम मिलते रहे हैं. फिर भी भारतीय कृषि की मानसूनी जल वर्षा पर निर्भरता को समाप्त नहीं किया जा सकता है. पिछले दशकों में भारतीय कृषि की पूर्ण निर्भरता को कम करने के प्रयास में कुछ सफलता मिली है. यह कार्य मौसम विज्ञान के द्वारा जल वर्षा के पूर्वानुमान से सम्भव हो सका है.

भारतीय कृषि से संबंधित महत्वपूर्ण तथ्य:

देश की उन्नति तथा उसके समग्र विकास के लिए कृषि का महत्त्व कितना अधिक है, इस बात की निम्नलिखित तथ्यों से पुष्टि की जा सकती है-

1. कृषि उद्योग भारत की अधिकांश जनता को रोज़गार प्रदान करता है. भारत की दो तिहाई आबादी प्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है. कृषि उत्पादों को कच्चे माल के रूप में अनेक उद्योगों में प्रयोग करके लाखों व्यक्तियों को रोज़गार प्राप्त होता है. इसके अतिरिक्त परिवहन कम्पनियों को कृषि पदार्थ, जैसे-खाद्यान्न, कपास, जूट, गन्ना, तिलहन आदि एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में भी भारी आय होती है. इस प्रकार भारतीय कृषि देश के निवासियों के लिये जीवन-निर्वाह का सबसे महत्त्वपूर्ण साधन है.

2. भारत की खाद्यान्न आवश्यकता की लगभग शत-प्रतिशत पूर्ति भारतीय कृषि द्वारा ही की जाती है. इसके अतिरिक्त चीनी, वस्त्र, पटसन, तेल आदि उद्योग प्राय: पूरी तरह भारतीय कृषि पर ही निर्भर करते हैं. क्योंकि इनकी आवश्यकता के कच्चे माल की पूर्ति मुख्यत: घरेलू उत्पादन द्वारा ही होती है.

3. विश्व की सबसे बड़ी कृषि संबंधी अर्थव्यवस्थाओं में से एक भारत में कृषि क्षेत्र का योगदान वर्ष 2008-2009 में सकल घरेलू उत्पाद (2004-2005 की स्थिर कीमतों पर) का 15.7 प्रतिशत रहा, जबकि 2004-2005 में यह 18.9 प्रतिशत था.

4. भारतीय कृषि मानसून पर निर्भर है. इसी कारण भारतीय कृषि को 'मानसून का जुआ' कहा गया है. यदि मानसून यथा-समय एवं यथेष्ट मात्रा में आ जाता है, तो कृषि उत्पादन भी ठीक हो जाता है, जिससे देश में खाद्यान्नों की आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है और उद्योंगों को भी यथेष्ट कच्चा माल प्राप्त हो जाता है.

5. भारत के कुल निर्यात व्यापार में कृषि वस्तुओं का प्रतिशत काफ़ी रहता है. वर्ष1960-1961 में कुल 642 करोड़ रुपये का निर्यात हुआ, जिसमें से कृषि वस्तुओं तथा कृषि कच्चे पदार्थों पर आधारित उद्योग का निर्यात 284 करोड़ रुपये था. कृषि एवं सम्बद्ध उत्पादों का निर्यात वर्ष 2008-2009 में बढ़कर 77,783 करोड़ रुपये हो गया, जो देश के कुल निर्यात का 9.1 प्रतिशत है.

भारतीय अर्थव्यवस्था के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान:

वर्ष 2013-14 के आंकड़ों के अनुसार भारत का सकल घरेलू उत्पाद रु.113550.73 अरब था.

आंकड़ा श्रेणियां	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14
जीडीपी (रु.करोड़) (वर्तमान बाजार मूल्य)	6477827	7784115	9009722	10113281	11355073
वृद्धि दर (%)	15.1	20.2	15.7	12.2	12.3
जीडीपी (रु.करोड़) (घटक लागत 2004-05 के मूल्य पर)	4516071	4918533	5247530	5482111	5741791
वृद्धि दर (%)	8.6	8.9	6.7	4.5	4.7
प्रति व्यक्ति निवल राष्ट्रीय आय (मौजूदा कीमतों पर उपादान लागत)	46249	54021	61855	67839	4380

यदि हम इस सकल घरेलू उत्पादन में विभिन्न क्षेत्रों के योगदान को देखते हैं, तो वह उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर निम्नानुसार परिलक्षित होता है.

किसी समय में भारत कृषि प्रधान देश था; किंतु नए आँकड़े बताते हैं कि यह देश अपनी विकास की यात्रा में काफी आगे निकल गया है तथा विकसित देशों के इतिहास को दोहराते हुए द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्रों का योगदान जीडीपी में बढ़ोतरी का रुझान दर्शा रहा है.

आंकड़ा श्रेणियां	1999-2000	2007-08	2012-13	2013-14
प्राथमिक क्षेत्र (कृषि और सम्बद्ध)	23.2	16.8	13.9	13.9
द्वितीयक क्षेत्र (उद्योग, खनन, विनिर्माण)	26.8	28.7	27.3	26.1
तृतीयक क्षेत्र(सेवाएं- व्यापार, होटल, परिवहन, संचार, वित्त बीमा आदि)	50.00	54.4	58.8	59.9

जलवायु में हो रहे बदलाव तथा मानसून एवं भारतीय कृषि पर इसका प्रभाव.

वर्तमान विश्व में मानव जनित और भौगोलिक कारणों के चलते इस समय जलवायु अनिश्चित सी हो गयी है. यह अनिश्चितता आने वाले कई सालों तक देखने को मिल सकती है. गर्मी बढ़ती जा रही है और सर्दी कम होती जा रही है. बरसात समय से पहले दस्तक दे रही है और पूर्व तय मानसून के समय सूखे की स्थिति उत्पन्न होती जा रही है. एक तरफ बारिश से बाढ़ की स्थिति बन रही है, तो दूसरी तरफ किसान आसमान की

तरफ टकटकी लगाये बारिश की बूंदों का इंतजार करता रह जा रहा है और उसकी खेत में खड़ी फसल सूख जा रही है. मौसम में बदलाव का दौर जारी है.

एक वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार वर्ष 1971-81 के दशक के बाद वर्षा के औसत में गिरावट आई है. मानसून की वर्षा में अनियमितता बढ़ रही है, खंड वृष्टि भी बढ़ रही है. मानसून वर्षा का आगमन सुनिश्चित समय से कभी पहले कभी बाद में होता जा रहा है. साथ इसकी सक्रिय समयावधि भी अव्यवस्थित हो रही है. शीतकालीन वर्षा के औसत में कमी आई है, जबकि मानसून पूर्व की वर्षा का औसत बढ़ रहा है. पिछले कई वर्षों से मौसम की असामान्य परिस्थितियां बढ़ गई हैं. जैसे एक ही दिन में अत्यधिक वर्षा, पाला, सूखे का अंतराल, फरवरी, मार्च माह में तापमान में अप्रत्याशित वृद्धि, मार्च-अप्रैल माह में तेज बारिश, ओला वृष्टि होने लगी है. इस कारण भारतीय कृषि एवं जनजीवन पर भी प्रभाव पड़ रहा है.

अत: आज आवश्यकता है कि बदलते जलवायु एवं अनिश्चित तथा अस्वाभाविक मानसून के माहौल में भारतीय कृषि को व्यवस्थित रखने हेतु जल प्रबंधन को महत्व दिया जाए; ताकि सिंचाई के अभाव में फसल बर्बाद न हो. अधिक तापमान व वर्षा की कमी से सिंचाई हेतु भू-जल संसाधनों के अधिक दोहन से बचने के लिए जमीन में नमी का संरक्षण व वर्षा जल को एकत्रित करके सिंचाई हेतु प्रयोग में लाना एक उपयोगी एवं सहयोगी कदम हो सकता है. इसके लिए किसान भाई वाटरशेड प्रबंधन के माध्यम से वर्षा के पानी को संचित कर सिंचाई के रूप में प्रयोग कर सकते हैं. इससे सिंचाई की सुविधा तथा भूजल पूनर्भरण दोनों में सहायता मिलेगी. ऐसा करने से बाढ़ की स्थिति में भी काफी हद तक लगाम लगेगी और मिट्टी के क्षरण को भी रोका जा सकेगा. सूखे की वजह से बंजर बन रहे क्षेत्रों पर भी लगाम लगेगी. नाबार्ड तथा कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय आज भारतीय कृषि को मानसून के कुप्रभाव तथा असमय आगमन से होने वाले नुकसान से बचाने हेतु निरंतर प्रयासरत है. हमें उम्मीद है कि इससे भारतीय कृषि की मानसून के ऊपर निर्भरता में कमी आएगी तथा कृषि व्यवस्था बिना मानसून की अनिश्चितता के उस पर विजय पाने में सफल होगी.

विजय कुमार पाण्डेय, प्रबंधक (राजभाषा), क्षेत्रीय कार्यालय, पटना.

रामजीत सिंह

खेतिहर मजदूर- समस्याएं एवं समाधान

भारत में लगभग साढ़े पाँच लाख गाँव हैं, जिनमें देश की लगभग 70% जनसंख्या रहती है. यह जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से खेती अर्थात कृषि, पशुपालन और इससे संबंधित व्यवसायों पर निर्भर है. यह स्वाभाविक है कि इतनी बड़ी जनसंख्या के खुशहाल हुए बिना देश का विकास सम्भव नहीं है. जब तक गाँव समृद्ध नहीं होगा, तब तक भारत समृद्ध नहीं होगा. हकीकत यह है कि गावों में गरीब खेतिहर- मजदूर आज भी बदहाल हैं और आत्म हत्या जैसे बड़े कदम उठाने के लिए मजबूर हैं. यहां की खेती मानसून आधारित होने के कारण हमेशा से संकटग्रस्त रही है, जिससे यहां पर एक बात ज़्यादातर देखी जाती है कि मानसून अच्छा और मजबूत होगा, तो सेंसेक्स और सत्ता दोनों मजबूत रहेंगे, अन्यथा भारत का बाज़ार कमज़ोर हो जाता है.

हालत यह है कि खेती करने वाले लाखों किसान अब मजदूर बन कर रह गये हैं. 2001 की जनगणना में जहां कुल कामकाजी लोगों में किसानों की जनसंख्या 44.54 प्रतिशत थी, वह 2011 में घट कर 32.88 प्रतिशत रह गई. इसके विपरीत खेतिहर मजदूरों की जनसंख्या आश्चर्यजनक रुप से बढ़ गई है. 2001 में 31.94 प्रतिशत जनसंख्या खेतिहर मजदूरों की थी. 2011 में इसमें बहुत बढ़ोत्तरी हुई है और यह 41.80 प्रतिशत तक जा पहुंची है. घटते किसान और खेतिहर मजदूर व भूमिहीन किसानों की बढ़ती संख्या एक गंभीर चिंता का विषय है.

हाल के वर्षों में सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण करने के कारण ग्रामीण क्षेत्रों की कृषि योग्य निजी और सार्वजनिक जमीन निरन्तर संकुचित होती जा रही है. शहरों के विस्तार से जुड़ी विभिन्न योजनाओं, औद्योगिकीरण और विशेष आर्थिक क्षेत्रों (SEZs) के नाम पर सरकार अधिग्रहण कर देश को जाने-अनजाने में एक बड़े संकट की ओर धकेल रही है. इसमें आने वाले समय में देश की जरूरत के लिए खाद्यान्न और कृषि उत्पादों का संकट पैदा होने की आशंका है.

भारत में विकास का जो प्रारूप विकसित हुआ, उसमें मनुष्य के साथ प्रत्येक जीव व जड़ प्रकृति की आवश्यकताओं का ध्यान रखा गया था. मनुष्य के केवल भौतिक पक्ष की ही चिंता करने की बजाए उसके सामाजिक, मानसिक और आध्यात्मिक पक्षों की भी चिंता की गई थी. केवल मनुष्य को सुख- सुविधाओं से लैस करने की कभी कोई योजना अपने यहां नहीं बनाई गई, इसलिए देश में एक मुहावरा प्रचलित हुआ "उत्तम खेती, मध्यम बान; निकृष्ट चाकरी, भीख निदान, इसका अर्थ बहुत साफ़ है कि नौकरी को कभी महत्ता नहीं दी गई. पशु, भूमि और मनुष्य इस प्रकार पूरी प्रकृति मात्र का पोषण करने वाली खेती को ही सर्वोत्तम माना गया. खेती की इस भारतीय व्यवस्था में पशु सहायक हुआ करते थे, बोझ नहीं.

आज भारत खाद्यान्न में तो आत्मनिर्भर है, किन्तु खाद्यान्न पैदा करने वाला किसान मुश्किल में है. महाराष्ट्र में ही किसान आत्महत्या नहीं कर रहे हैं. विदर्भ जैसे ही हालात उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के बुन्देलखण्ड के हैं. पूँजीवाद और उदारवाद के प्रभाव में देश के लाखों उद्योगपति- व्यवसायी, राजनीतिक, प्रशासक और दलाल रातों-रात अरबपति बन जाते हैं. देखा गया है कि तीन-चार वर्ष के अन्तर पर अतिवृष्टि और अनावृष्टि होती रहती है. ऐसी विपदा में किसानों को थोड़ा-बहुत मुआवजा देकर कोई खास राहत नहीं मिलती है. मुआवजा बाँटने में भी पारदर्शिता नहीं बरती जाती है. मुआवजे की राशि न तो पर्याप्त होती है और न सही हाथों तक पहुँचती है. परिणामस्वरूप हताश होकर खेतिहर मजदूर आत्महत्या करता है. आलू की फसल को लेकर किसान सरकारी खरीद की बाट जोहते हैं तथा गेहूँ की फसल को लेकर भी यही हालात होते हैं. उत्तर प्रदेश में गन्ना किसानों की हालत भी कमोबेश ऐसी ही होती है. गन्ना मिल मालिकों ने पहले ही किसानों का कई हजार करोड़ रुपया दबाकर रखा हुआ है. अब उनकी गन्ना खरीद में टालमटोल हो रही है. अब हमें ऐसे प्रयास करने होंगे, जिससे खेती करना घाटे का सौदा न रहे. खेतिहर मजदूरों की मुश्किलें दूर करने के लिए सरकारी तन्त्र को चुस्त-दुरुस्त बनाना होगा. इसके लिए जरूरी है कि सरकारी नीतियों में परिवर्तन कर उन्हें किसान समर्थित बनाया जाना चाहिए. मौसमी प्रभाव को दूर करने या कम करने के लिए पहले से सरकार को तैयार रहना चाहिए और जरूरी उपाय करने चाहिए. इतिहास गवाह है कि मुगल काल के अन्तिम दौर में जब भारत में अंग्रेज सत्ता स्थापित करने के लिए प्रत्यनशील थे, भारत की अर्थव्यवस्था उस दौर की सबसे समृद्ध और शक्तिशाली अर्थव्यवस्था थी. एक अनुमान के मुताबिक औरंगजेब के अन्तिम दिनों में भारत की जीडीपी वैश्विक जीडीपी की करीब 33.1 फीसदी थी. सन् 1947 में जब अंग्रेजों ने भारत छोड़ा, तब भारत की जीडीपी विश्व की जीडीपी की महज 0.1 फीसदी रह गई थी. हमें सोचना चाहिए कि अंग्रेजों ने कौन-सी ऐसी नीतियां बनाई थीं, जिनसे भारत की यह दुर्दशा हुई. अंग्रेजों से पूर्व भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर होती थी.

समस्याएं एवं समाधान :

कृषि शिक्षा: भारत की 125 करोड़ जनसंख्या में 70 प्रतिशत कृषि पर आधारित आबादी के अनुरूप कृषि शिक्षा के विद्यालय व विश्वविद्यालय कम होने के कारण गुणवत्तापूर्ण कृषि शिक्षा की काफी कमी है. खेतिहर मजदूर आज भी खेती में ईश्वरीय कृपा पर आश्रित है. ग्रामीण क्षेत्रों में कम से कम 10वीं कक्षा तक कृषि एक विषय के रूप में अनिवार्य रूप से पढ़ाया जाना चाहिए, इसका लाभ खाद्यान्न उत्पादन में मिलेगा.

भूमि प्रबंधन: फसल बोने के लिए जलवायु, पानी, भूमि आदि कैसी होनी चाहिए, इसके परीक्षण की जानकारी से किसानों को शिक्षित किया जाना चाहिए तथा सुझाव के अनुसार अच्छी प्रजाति के बीज उपलब्ध कराये जाने चाहिए. फसल की बुवाई तथा होने वाली बीमारियों, खाद, सिंचाई, निराई, गुड़ाई आदि से संबंधित जानकारी कृषि विशेषज्ञों द्वारा किसानों को उपलब्ध करायी जानी चाहिए. इससे कृषि का उत्पादन बढ़ेगा.

भूमि अधिग्रहण: केंद्र व राज्य सरकारों को औद्योगिक विकास, आधारभूत संरचना विकास व आवासीय योजनाओं हेतु ऐसी भूमि का अधिग्रहण करना चाहिए, जो ऊसर, बंजर व कम पैदावार वाली भूमि हो. अधिग्रहित भूमि के प्रोजेक्ट में एक अंशधारक के रूप में किसानों को भी रखना चाहिए, जिससे प्रोजेक्ट के लाभ में हिस्सेदारी मिलती रहे.

साख प्रबंधन: ग्राम पंचायत/ ग्राम सभा स्तर पर कृषि ज्ञान केंद्र, कृषि सहकारी समिति व विक्रय केंद्र के माध्यम से कृषि मानकों के अनुसार बीज, खाद, कीटनाशक आदि की व्यवस्था हो. खेती से संबंधित यंत्र/ उपकरण निर्धारित किराए पर उपलब्ध रहने चाहिए; ताकि किसान बिना किसी रुकावट के खेती कर सके. खेती की उपज प्रबंधन के लिए बीमा बहुत महत्वपूर्ण व उपयोगी है. इससे किसानों को ऋणग्रस्तता से बचाया जा सकता है. फसल बीमा के अतिरिक्त खेतिहर मजदूर का भी बीमा कराया जाना चाहिए. किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से सस्ती ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराया जाना चाहिए.

क्रय- विक्रय व्यवस्था: खेतिहर मजदूर जब अपना उत्पाद बाजार में ले जाता है, तो दाम गिरने लगते हैं और बिचौलिये सस्ती दर पर माल को खरीद लेते हैं; जिसके कारण खेती घाटे का सौदा साबित हो जाती है. अत: क्रय- विक्रय व्यवस्था को मजबूत और पारदर्शी बनाया जाना चाहिए और किसान के माल के

मूल्य की मांग, पूर्ति और लागत के आधार पर निर्धारित कर देना चाहिए. मंडी में गोदामों में सहकारी समितियों के माध्यम से यह व्यवस्था की जानी चाहिए कि यदि किसी दिन उसे सही मूल्य नहीं मिले; तो वह उत्पादित फसल को गोदाम में रख सके.

प्रोसेसिंग यूनिट की स्थापना: प्रत्येक वर्ष बहुत-सी फसलें खेतों में ही नष्ट हो जाती हैं. कहीं-कहीं आलू गोदामों में छोड़ देते हैं या मिट्टी में दबा देते हैं, लहसुन व प्याज की उपज लागत न मिलने के कारण खेतों में दबा देते हैं और आम, अंगूर जैसे अनेक फल सस्ती दरों पर बिक्री करने हेतु किसान मजबूर होता है. इन क्षेत्रों में प्रोसेसिंग यूनिट लगाए जाने से उत्पाद को खराब होने से बचाया जा सकता है और किसानों को अपने उत्पादन का उचित मूल्य मिल सकता है.

भंडारण व्यवस्था: किसान के उत्पाद को गोदाम/कोल्ड स्टोरेज में रखने की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए, ताकि उसे उचित समय पर बिक्री करने पर सही दाम मिल सके.

कृषि आधारित उद्योग-धंधे: ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि पर आधारित उद्योग-धंधे स्थापित किए जाने चाहिए, जिनमें स्थानीय लोगों को रोजगार मिल सके तथा किसानों के उत्पाद की खपत हो सके. फ्लोर मिल, राइस मिल, तेल कोल्हू, फलों से बनने वाले विभिन्न सामान, पापड़, बड़ियाँ, चिप्स एवं आचार आदि के उद्योग लगाने चाहिए.

कुल मिलाकर वर्तमान सरकार द्वारा समस्या की जड़ को पहचान कर उसका निदान करने का प्रयास किया जा रहा है. चालू वित्त वर्ष 2016-17 का बजट पूरी तरह से किसान एवं ग्रामीण क्षेत्रों के विकास पर आधारित है. सस्ते दर पर ऋण उपलब्ध कराने हेतु सब्सिडी के लिए बजट में रु.15,000 करोड़ का प्रावधान किया गया है, जिसे स्थानीय आढ़तियों की मनमानी से किसानों को अपने अनाज का सही दाम नहीं मिल पाने से देश की 585 मंडियों को ई-प्लेटफार्म योजना के तहत जोड़ने की पहल की गई है. प्रधान मंत्री फसल बीमा योजना के तहत किसानों की समस्याओं के समाधान के लिए बनाई गई योजना में किसानों के नुकसान के लिए ऐसी तकनीक का प्रयोग किया गया है कि फसल नष्ट होने पर सैटेलाइट आदि के माध्यम से जिलावार निष्पक्ष आकलन करके बीमा राशि किसानों के जन-धन खाते में जमा कर दी जाएगी. सरकार ने प्रीमियम राशि में भी कटौती की है और उसे काफी कम रखा है तथा नुकसान की भरपाई की राशि पर अधिकतम कैप हटा दिया गया है. उक्त के अलावा जन-धन खाते के द्वारा किसान

अटल बीमा योजना, प्रधान मंत्री सुरक्षा बीमा योजना, प्रधान मंत्री स्वास्थ्य बीमा योजना जैसी सभी योजनाओं का लाभ उठा सकेंगे. किसान टी वी चैनल के माध्यम से किसानों तक कृषि से जुड़ी हर महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराई जा रही है. सरकार का यह संकल्प है कि वर्ष 2022 तक किसानों की आमदनी को दोगुनी कर देंगे. सरकार का प्रयास है कि ग्रामीण क्षेत्रों में नए रोजगार लगें, लघु एवं घरेलू उद्योगों से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के नए-नए अवसर मिलें, मुद्रा बैंक के तहत छोटे-छोटे ऋण उपलब्ध कराए जाएं, पशुपालन उद्योग भी तेजी से आगे बढ़े. सरकार का लक्ष्य है -'**सक्षम किसान, समृद्ध भारत'.**

रामजीत सिंह, मुख्य प्रबंधक (राजभाषा), क्षेत्रीय कार्यालय, लखनऊ

देवाशीष मजुमदार

परंपरागत एवं आधुनिक कृषि

भारत एक कृषि प्रधान देश है. प्राचीन काल से लेकर वर्तमान युग तक विभिन्न संस्कृतियों एवं सभ्यताओं में कृषि ने आर्थिक, व्यावसायिक एवं सामाजिक परिदृश्य में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है. भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है. देश के कुल निर्यात व्यापार में कृषि उत्पादित वस्तुओं का प्रतिशत काफी अधिक रहता है. प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से भारत में अधिकांश रोजगार कृषि से संबन्धित हैं. अनेक उद्योगों में कृषि उत्पादित कच्चे मालों का प्रयोग कर अनेक व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त होता है. भारतीय अर्थव्यवस्था के तीन मुख्य क्षेत्र कृषि, उद्योग एवं सेवा क्षेत्र हैं. जैसाकि हम सभी जानते हैं कि परिवर्तन ही संसार का नियम है तथा संसार में निहित सभी चीजें समय के साथ परिवर्तित होती रहती हैं. हमारे देश में भी कृषि व्यवस्था भी पुराने समय की तुलना में आज काफी बदल चुकी है. प्रस्तुत लेख में हम कृषि के परंपरागत एवं आधुनिक तरीकों के विभिन्न आयामों पर विस्तार से चर्चा करेंगे-

परंपरागत कृषि:

परंपरागत कृषि से आशय मुख्यतः हरित क्रांति से पूर्व कृषि हेतु अपनाए जाने वाले विभिन्न तरीकों एवं तकनीकों से है. परंपरागत कृषि में कृषकों द्वारा फसल हेतु पारंपरिक बीजों तथा उर्वरक हेतु जैविक खाद जैसे गाय-भैंस के गोबर का प्रयोग किया जाता था. चूंकि परंपरागत खेती प्राकृतिक रूप से होती थी तथा इनमें किसी भी प्रकार के रसायनों का उपयोग नहीं किया जाता था तथा इनमें सिंचाई के लिए भी कम पानी की आवश्यकता होती थी. अतः उत्पादन भी कम होता था. इसी प्रकार की खेती में कृषि में कृषकों द्वारा मुख्यतः खुरपी, हंसिया, कुदाल, फावड़ा एवं जुताई के लिए देशी हल व बैलों का प्रयोग किया जाता था. परंपरागत खेती में साधनों के अभाव की वजह से किसान को सिंचाई हेतु मुख्य रूप से मानसून पर निर्भर रहना पड़ता था.

आधुनिक खेती:

भारत में आधुनिक खेती का आरंभ हरित क्रांति से हुआ. आधुनिक कृषि से तात्पर्य कृषि

हेतु प्रयोग किए जाने वाले नए तकनीक, उपकरणों एवं आविष्कारों से है. आधुनिक खेती में परंपरागत खेती की तुलना में नए एवं आधुनिक कृषि यंत्रों का उपयोग किया जाता है, जिससे कम समय में अधिक फसल का उत्पादन सुनिश्चित किया जा सके. वर्तमान में भारत की बढ़ती जनसंख्या तथा साथ ही अंतर्राष्ट्रीय बाजार में भी कृषि आयातों से होने वाले व्यय की वजह से भारतीय कृषकों पर अधिक से अधिक उत्पादन का दबाव है. रसायनों एवं उन्नत क़िस्मों के बीज द्वारा यह संभव हो सका है कि कम समय में आधुनिक यंत्रों के उपयोग से अधिकाधिक फसल का उत्पादन कर कृषि की सभी जरूरतों को पूरा किया जा सके. जनसंख्या की दृष्टि से भारत विश्व का दूसरा बड़ा देश है. हमारे देश की जनसंख्या लगभग 125 करोड़ है. इतनी जनसंख्या के लिए खाद्य वस्तुओं का उत्पादन सिर्फ आधुनिक कृषि से ही संभव हो पाया है. पहले की तुलना में आज कृषि के लिए हमारे देश के किसानों के लिए कम भूमि का हिस्सा बचा है, फिर भी विज्ञान के उन्नत आविष्कारों और हमारे देश में किसानों को दिए जाने वालों लाभों के परिणामस्वरूप आज कृषि फसलों का उत्पादन पहले के मुताबिक कहीं ज्यादा है.

विभिन्न कालों में कृषि के विभिन्न चरण:

चरण	लक्षण
ब्रिटिश काल से पूर्व	कृषि मात्र एक आर्थिक क्रिया नहीं थी. यह एक परंपरा थी. कृषि सहायक क्रिया के रूप में पशुपालन भी मुख्य कार्यों में से एक था.
ब्रिटिश काल	कृषि जीवन-शैली एवं परंपरा का हिस्सा न बनकर मात्र एक आर्थिक क्रिया बन गई. कृषि जीवन साधन से बदलकर प्रगति साधन व ब्रिटिश शासकों के राजस्व का स्रोत बन गई.
स्वतंत्रता प्राप्ति बाद	यह भारतीय कृषि का सबसे बुरा काल था. निम्नतम उत्पादकता, कृषकों की ऋणग्रस्त स्थिति, विभाजन व भू-श्रमिकों की दयनीय स्थिति इस काल के कृषि में सामान्य थे.
हरित क्रांति का प्रारम्भिक काल	कृषि, शोध विकास एवं अन्य सहायक सेवाओं के माध्यम से गेहूं व चावल के उत्पादन में वृद्धि
विस्तृत प्रचार काल	आधुनिक तकनीकी शोध ,विकास, शिक्षा एवं जागरूकता, सिंचाई में विनियोग, इंफ्रास्ट्रक्चर, गोदाम, बाजार इत्यादि का विकास.
सुधार काल	रसायनों व श्रम के प्रयोग से कृषि उत्पादकता में निरंतर वृद्धि
आधुनिक काल	कृषि व्यवसायीकरण, फसल के पैर्टन में विविधीकरण, फलों, सब्जियों, फूलों की खेतियों पर ज़ोर, निर्यात में वृद्धि.

आर्थिक स्वरूप:

परंपरागत कृषि के दौरान कृषि का मुख्य उद्देश्य जीविकोपार्जन होता था. किसान अपने एवं अपने परिवार के पालन-पोषण के लिए कृषि करता था, जबकि

आधुनिक कृषि का मुख्य उद्देश्य व्यवसाय है. पूर्व में किसानों द्वारा कृषि के दौरान होने वाले पूर्ण व्यय का भार उन्हीं के द्वारा वहन किया जाता था. किसानों को अपनी फसल के उत्पादन से लेकर उनकी बुवाई, कटाई व बाजार में फसल ले जाकर बेचने तक के खर्चों को वहन करने के लिए उच्च ब्याज दरों पर साहूकारों एवं सूदखोरों से ऋण लेना पड़ता था, जिससे उन पर कर्ज का बोझ बढ़ जाता था. पुराने जमाने में साहूकारों एवं सूदखोरों की ब्याज दरें इतनी अधिक होती थीं कि गरीब किसान के लिए उसके द्वारा लिए गए मूलधन की राशि अपने जीवनकाल में चुकाना असंभव हो जाता था. आज के दौर में किसानों के हितों को देखते हुए सरकार द्वारा उनके लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाएँ चलायी गयी हैं. किसान क्रेडिट कार्ड, कम ब्याज दर में किसान ऋण, फसलों का बीमा एवं अन्य लाभकारी योजनाओं द्वारा न सिर्फ किसानों को आर्थिक रूप से सहायता प्रदान की जा रही है; बल्कि सरकार द्वारा ही उनकी उत्पादित फसलों को उचित मूल्य पर खरीदा भी जा रहा है.

संसाधन:

परंपरागत कृषि में फसल के चयन से लेकर बाजार में उसे बेचने तक की सभी गतिविधियों का निर्धारण किसान अपनी सूझ-बूझ तथा अनुभव के आधार पर करता था. पुराने समय में किसी भी प्रकार के संसाधन उपलब्ध न होने की वजह से किसानों को फसल के दौरान हमेशा अनिश्चितताओं का खतरा बना रहता था. खेतों की सिंचाई के लिए उन्हें मानसून, खेतों की जुताई के लिए पशुधन, फसल बीज एवं बाजार तक फसल ले जाने हेतु साहूकारों एवं सूदखोरों से ऋण आदि पर परंपरागत कृषि में निर्भर रहना पड़ता था. प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़ व सूखा पड़ने का सीधा प्रभाव कृषि पर पड़ता है. फसल बर्बाद होने का सीधा प्रभाव किसानों की आर्थिक स्थिति पर पड़ता है एवं वे ऋण के बोझ तले दबते चले जाते हैं. चूंकि पुराने समय में संसाधनों के अभाव में किसानों के पास उत्पादित फसलों के लिए भंडारण की व्यवस्था नहीं होती थी. अतः उन्हें बाजार में अपनी फसल को कम दर पर भी मजबूरन बेचना पड़ता था.

आधुनिक कृषि में संसाधनों की प्रचुर उपलब्धता व तकनीकी सुगमता की वजह से ही आधुनिक कृषि इतनी विकसित व समृद्ध है. कृषि विश्वविद्यालय, किसान कॉल सेंटर एवं अन्य तरीकों से किसानों को फसल व फसल से जुड़े सभी तथ्यों की जानकारी प्राप्त हो जाती है. प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा आदि एवं अन्य कारक जिनका सीधा असर कृषि को प्रभावित करता है, से कृषि को संरक्षण प्रदान करने के लिए कृषि बीमा का प्रावधान है. सरकार द्वारा चलाई गई अनेक कृषि बीमा योजनाएं जैसे- प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, व्यापक फसल बीमा योजना, प्रायोगिक फसल बीमा, कृषि आय बीमा योजना, राष्ट्रीय कृषि आय बीमा योजना के अंतर्गत फसल का बीमा कराकर किसान अपने आपको कृषि से संबन्धित जोखिमों से भयमुक्त कर सकता है. नई तकनीकों की

सुगमता की वजह से न सिर्फ हमारा देश फसलों के अधिक उत्पादन द्वारा खाद्य पदार्थों के निर्यात में सक्षम है, बल्कि दूसरे देशों में उगाई जाने वाली विदेशी फसलों की भी खेती आज हमारे देश में की जा रही है.

परंपरागत व आधुनिक कृषि की तुलनात्मक सारणी:

घटक	**परंपरागत कृषि**	**आधुनिक कृषि**
बीज	कृषक खाद्य उत्पादन का एक भाग बीज के रूप में प्रयोग करते थे.	एचआईवी बीजों का प्रयोग
भू-पोषक आवश्यकता	कम्पोस्ट एवं जैविक खाद द्वारा	उर्वरक, जैविक उर्वरक, रासायनिक खाद
कीटनाशक	डीडीटी का विस्तृत उपयोग	इंट्रीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेंट का प्रयोग
पर्यावरणीय जागरूकता	रसायनों का अनावश्यक एवं अन्यायपूर्ण प्रयोग	मृदा आवश्यकताओं के अनुसार उर्वरकों का प्रयोग
सूचना तंत्र	कृषकों को कृषि की आधुनिक कलाओं का ज्ञान न होना	सूचना तकनीक का विस्तृत प्रयोग
सहयोगी सेवाएं	पशुधन व प्राकृतिक संसाधन	विज्ञान के नवीन आविष्कार
श्रमिक	घर के सदस्यों का प्रयोग	किराए का श्रम
मशीनों का प्रयोग	अत्यंत निम्न प्रयोग	कृषि मशीनीकरण का प्रभुत्व
उत्पादन	भूमि के अनुरूप कम उत्पादन	अधिक उत्पादन
उद्देश्य	पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति	लाभार्जन
दृष्टिकोण	जीवन निर्वाहक	व्यापारिक

उपयुक्त सभी बिन्दुओं पर विचार करने से स्पष्ट है कि परंपरागत कृषि की तुलना में आधुनिक कृषि में उपज अधिक होती है. संसाधनों का इष्टतम उपयोग, सरकार द्वारा प्रदत्त योजनाओं का लाभ, कृषि फसलों की अधिक जानकारी न सिर्फ किसानों को कम भू-भाग में अधिक उपज का अवसर प्रदान करते हैं; बल्कि हर प्रकार की अनिश्चितताओं से भी सुरक्षा प्रदान करते हैं. प्रकृति की रक्षा के साथ-साथ अधिक फसल उत्पादन हेतु किसानों का यह उत्तरदायित्व है कि आधुनिक कृषि में प्रचलित उर्वरकों और आधुनिक यंत्रों के उपयोग से होने वाली वृद्धि को दीर्घकालिक अवधि तक सुनिश्चित करने के लिए इन संसाधनों का विवेकशील प्रयोग करें.

देवाशीष मजुमदार, सहायक प्रबंधक, (राजभाषा), के.का. मुंबई

सपन कुमार चौधरी

कृषि निर्यात- संभावनाएं एवं विस्तार

आजादी के बाद से ही भारत ने कृषि के अंतर्गत उत्पादन एवं क्षेत्र के मामलों में काफी प्रगति की है. यह हरित क्रांति (खाद्यान्न), श्वेत क्रांति (दुग्ध), पीत क्रांति (तिलहन) तथा नील क्रांति (जल कृषि) से होकर गुजरा है. आज भारत विश्व में दुग्ध, मछली, तम्बाकू, नारियल तथा चाय के सबसे बड़े उत्पादकों में से एक है. यह गेहूं, सब्जी, चीनी तथा चावल के उत्पादन के लिए भी प्रसिद्ध है.

बागवानी, जैव कृषि, जेनेटिक इंजीनियरिंग, पैकेजिंग एवं खाद्य प्रसंस्करण जैसे कई प्रकार के कृषि उत्पादों में निर्यात के माध्यम से राजस्व में वृद्धि देखने को मिली है. कुछ वर्षों के दौरान सरकार ने शीत भंडार, परिवहन, पैकेजिंग, प्रसंस्करण तथा गुणवत्ता नियंत्रण के लिए महत्वपूर्ण अवसंरचना सृजित करके बागवानी एवं फूलों की खेती के विकास पर जोर दिया है. यदि भारत इन वस्तुओं की निर्यात संभावनाओं का अधिकाधिक इस्तेमाल करने का इच्छुक है, तो सुविधा, विपणन तथा निर्यात नेटवर्क में ज्यादा से ज्यादा सुधार करना अनिवार्य है. हाल के वर्षों में केंद्र सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में भंडारण सुविधाओं को बेहतर बनाने के लिए विभिन्न राजकोषीय प्रोत्साहन का प्रस्ताव किया है. यह कम दरों पर खाद्यान्न प्राप्त करने तथा वितरित करने के लिए राज्य सरकारों को वित्तीय सहायता भी प्रदान करता है. आज प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र में ऋण प्रदान करने के जरिए बैंक क्रेडिट की बेहतर उपलब्धता से व्यापार की अनुकूल शर्तों एवं कृषि के लिए उदारीकृत तथा घरेलू एवं विदेशी व्यापार ने निजी खिलाड़ियों को कृषि में निवेश करने के लिए प्रोत्साहित किया है.

पशुधन एवं मत्स्य पालन से संबंधित भारत सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों का प्रमुख बल दूध देने वाले पशुओं के विकास, पशु बीमारियों पर नियंत्रण, रोगमुक्त क्षेत्रों के सृजन, पोषक चारा की बेहतर उपलब्धता, डेयरी कार्यकलापों का विकास, बैकयार्ड मत्स्य पालन प्रसंस्करण एवं विपणन सुविधाओं का विकास तथा पशुधन के उत्पादन एवं

लाभप्रदता में वृद्धि के त्वरित जेनेटिक उन्नयन पर है.

कृषि निर्यात में सन् 1990 के लगभग रु.60 बिलियन की तुलना में वर्ष 2005-06 में रु.398 बिलियन की वृद्धि दर्शाई गई है. हाल के वर्षों में विश्व व्यापार संगठन अथवा डब्ल्यू. टी.ओ संगत सब्सिडी के माध्यम से खाद्यान्न के निर्यात को बढ़ावा देने के लिए सरकार के विशेष प्रयासों के फलस्वरुप भारत अंतर्राष्ट्रीय बाजार में खाद्यान्न के प्रमुख निर्यातकों में से एक हो गया है. कृषि उत्पादों के आयात में वर्ष 1990-91 के 12 बिलियन की तुलना में वर्ष 2005-06 में रु.220 बिलियन तक की वृद्धि हुई है. वर्ष 2005-06 में कुल माल का कृषि आयात हिस्सा लगभग 4.59 प्रतिशत था. खाद्य तेल एक सबसे बड़ा कृषि उत्पाद है, जिसका देश में आयात किया जाता है और कुल कृषि आयातों का लगभग दो तिहाई बैठता है.

आयात-निर्यात नीति सरकार की वह नीति है, जिसकी घोषणा प्रत्येक पांच वर्षो में की जाती है. इस नीति में निर्यात और आयात, संवर्धनात्मक उपायों, शुल्क छूट योजनाओं, निर्यात संवर्धन योजनाओं, विशेष आर्थिक क्षेत्र कार्यक्रमों और विभिन्न क्षेत्रों के लिए अन्य ब्यौरों के संबंध में सामान्य प्रावधान शामिल होते हैं. प्रत्येक वर्ष सरकार इस नीति की पूरक नीति की भी घोषणा करती है.

हाल के वर्षों की आयात-निर्यात नीति कृषि संबंधी निर्यातों के महत्वों पर जोर देती है और कृषि निर्यात क्षेत्रों की स्थापना करने, प्रतिक्रियात्मक बाधाओं को दूर करने और विपणन लागत सहायता जैसे उपायों की इसमें घोषणा की गई है. कृषि निर्यात क्षेत्र इस नीति का अति महत्वपूर्ण सृजन माना जाता है.

कृषि निर्यात क्षेत्र का गठन इस नीति के परिणाम स्वरुप किया गया है. इन नीतियों का उद्देश्य देश से कृषि निर्यात का संवर्धन करना और कृषक समुदाय को नियमित रुप परिलब्धि संबंधी प्रतिलाभ प्रदान करना है. उन्हें राज्य सरकारों द्वारा अभिचिह्नित किया जाना है, जिसमें सभी राज्य सरकार की एजेंसियों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों और इन क्षेत्रों में गहन परिणाम के लिए संघ सरकार की एजेंसियों और संस्थाओं द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवा के व्यापक पैकेज का विकास करेंगी. कार्पोरेट क्षेत्र की कंपनियां, जिनकी विश्वसनीयता प्रमाणित हो, को नए कृषि निर्यात क्षेत्रों को प्रायोजित करने के लिए यह पहले से अधिसूचित निर्यात क्षेत्रों को अपने अधिकार में लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा.

इस योजना के माध्यम से प्रबंधित और समन्वित सेवाओं में कटाई पूर्व/ कटाई पश्चात कार्य, पौध संरक्षण, प्रसंस्करण, पैकेजिंग, भंडारण और संबंधित अनुसंधान तथा विकास के प्रावधान शामिल है. कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण

(APEDA) अपनी योजनाओं और प्रावधानों के भीतर निर्यात सूचक बनाने के लिए राज्य सरकारों के प्रयासों की पूरक होगी.

नई कृषि आयात एवं निर्यात नीति में निर्यात के लिए कई संवर्धनात्मक उपाय किए गए हैं, जैसे निर्यात उत्कृष्टता के बाहर टार्गेट प्लस मुक्त व्यापार और भंडारण क्षेत्र तथा विदेश कृषि उपज योजना प्रमुख हैं. इन योजनाओं का ब्यौरा निम्नानुसार है:-

(क) निर्यात उत्कृष्टता का शहर:

यहां रु.250 करोड़ और उससे अधिक का माल उत्पादन हस्तकरघा, कृषि, हस्तशिल्प और मात्स्यिकी क्षेत्र में होता है. निर्यात में विकास की अपनी क्षमता के आधार पर अधिसूचित किया जाएगा. उन्हें अपनी क्षमता बढ़ाने के लिए यह मान्यता दी जाएगी. उन्हें मूल्य श्रृंखला में अधिक प्रगति करने एवं नए बाजारों का दोहन करने में समर्थ माना जाएगा.

(ख) टारगेट प्लस:

इस योजना में जिन निर्यातकों ने निर्यात के विकास में बड़ी वृद्धि हासिल की है, उन्हें निर्धारित सामान्य वास्तविक निर्यात लक्ष्य से स्थायी रुप से अधिक वृद्धितर निर्यात लक्ष्य के आधार पर शुल्क मुक्त क्रेडिट की अनुमति दी जाएगी. पुरस्कार टियर के तरीके के अनुसार प्रदान किया जाएगा. 20, 25 और 100 प्रतिशत वृद्धितर विकास के लिए शुल्क मुक्त क्रेडिट वृद्धितर निर्यातों के फ्री ऑन बोर्ड का 5,10 और 15 प्रतिशत होगा.

(ग) विदेश कृषि ग्राम उद्योग योजना:

इसका उद्देश्य फलों, सब्जियों, फूलों और अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों के निर्यात का संवर्धन करना है. इस वर्ष सोयाबीन और नारियल तेल तथा तैयार खाद्य जैसे कि सूप को शामिल करने के लिए इसका विस्तार किया गया है. इसके साथ- साथ योजना का लाभ 100 प्रतिशत निर्यातोन्मुखी यूनिटों तक बढ़ाया गया है.

कृषि, निर्यात के परिप्रेक्ष्य में गिरावट की ओर जा रही है और पांच साल में अपने निचले स्तर पर है. कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (APEDA) द्वारा जारी किए गए आंकड़ों के अनुसार कृषि निर्यात गिरकर वर्ष 2015-16 में पांच साल के निचले स्तर पर आ गया है. वित्त वर्ष 2014 में 42.84 अरब डॉलर की ऊंचाई से कृषि निर्यात में बड़ी गिरावट आई. वित्त वर्ष 2016 में कृषि निर्यात में 17 प्रतिशत की भारी गिरावट दर्ज की गई. वित्त वर्ष 2013 में ग्वारगम कृषि श्रेणी में राजस्व प्राप्त करने वाले शीर्ष निर्यात उत्पादों में शामिल रहा. हालांकि 3.9 अरब डॉलर के आंकड़े के साथ यह फिलहाल शीर्ष 10 की सूची में शामिल नहीं है.

सपन कुमार चौधरी, प्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय, पटना

सविता शर्मा

कृषि वानिकी

"कृषि वानिकी" दो शब्दों के मेल से बना है- कृषि + वानिकी. कृषि से तात्पर्य है- उन वस्तुओं का उत्पादन करना जो मानव जीवन के लिए उपयोगी हों जैसे भोजन, रेशा, जैव-इंर्धन, औषधीय पौधों की खेती. मानवीय श्रम हॉलांकि कृषि से सीधे-सीधे जुड़ा है, तथापि इसके कुछ अपवाद भी हैं, जैसे दीमक, चींटी और खटमल- जो स्वयं प्राकृतिक तरीके से अपनी प्रजाति को आगे बढ़ाते हैं फिर भी इनसे संबंधित क्रिया-कलाप (कीट-नाशक का उत्पादन) कृषि कार्यों में ही शामिल किए जाते हैं. कृषि और वानिकी- दोनों ही हरियाली और वनस्पतियों के रोपण-संरक्षण से जुड़े हैं, तथापि दोनों में कुछ अंतर हैं, जो मानवीय श्रम बनाम प्राकृतिक संवर्धन; विस्तृत बनाम सीमित और वनस्पतियों के प्रबंधन-चक्र की अवधि कम या अधिक होने से संबंधित हैं. कृषि कार्य सीमित भू-खंड में होता है, तो वानिकी विस्तृत भू-भाग में होती है. कृषि में मानवीय प्रयास शामिल होते हैं, जबकि वानिकी प्राकृतिक रूप से फलती-फूलती है. कृषि में फसल छोटी अवधि में ही परिपक्व होकर भू-खंड से हटा दी जाती है, जबकि वन संपदा दशकों तक एक भू-भाग पर अवस्थित रहती है.

यह तो था अंतर कृषि और वानिकी में. आधुनिक युग में नया शब्द अस्तित्व में आया है कृषि वानिकी. देखा जाए तो कृषि और वानिकी एक ही प्रकार की गतिविधियाँ होते हुए भी कुछ मौलिक और महत्वपूर्ण अंतरों के कारण विरोधाभासी हैं. नवोन्मेषण के युग में इन दोनों विरोधाभासी गतिविधियों को एक साथ जोड़कर एक नई विधा का निर्माण किया गया है, जो किसी भू-खंड के अधिकतम उपयोग हेतु कृषि और वानिकी के मिले-जुले प्रयोग से संबंधित है. इसे अंग्रेज़ी में Agroforestry या Agro-Sylviculture के नाम से जाना जाता है. इसके अंतर्गत एक भू-भाग में वृक्षों, पौधों और फसलों को इस प्रकार उगाया जाता है कि पारस्परिक समन्वय से दोनों प्रकार की वनस्पतियाँ अपनी-अपनी सुविधानुसार फलें-फूलें तथा अधिकतम उत्पादन दें. इस प्रकार हम कह सकते हैं कि "कृषि वानिकी" भू-प्रबंधन का एक ऐसा तरीका है, जिसमें भूखंड के

उत्पादन की मात्रा तथा गुणवत्ता दोनों में वैविध्य, लाभप्रदता, स्थायित्व तथा पर्यावरणीय-अनुकूलता शामिल होते हैं. पारिभाषिक दृष्टि से देखा जाए तो "कृषि वानिकी" भूमि के प्रयोग हेतु बताए गए विज्ञान की तीन शाखाओं- पारिस्थतिकी, कृषि तथा वानिकी में से ही एक है. यह बहुफसली कृषि से मिलता-जुलता है. दोनों में ही दो या दो से अधिक प्रकार की वनस्पतियाँ (जैसे नाइट्रोजन भंडारक पौधे) किसी एक फसल के साथ-साथ ही बोये जाते हैं. दोनों प्रकार के पौधे भिन्न-भिन्न उत्पाद देते हैं, जिससे उपज अधिक होती है तथा लागत कम आती है, क्योंकि दोनों को एक साथ बोने के लिए एक ही बार श्रम लगता है, एक बार बुआई की प्रक्रिया की जाती है, किंतु उत्पाद भिन्न प्रकार के होते हैं. इसके अलावा पारंपरिक कृषि की तुलना में "कृषि वानिकी" में अपेक्षाकृत अधिक प्रकार की कीट-प्रजातियों, पक्षियों तथा कृमियों को आश्रय मिलता है, जो अलग-अलग प्रकार के लाभ कृषि उपज को प्रदान करती है.

कृषि वानिकी के विभिन्न प्रकार हैं और इन्हीं प्रकारों पर ही इसके लाभ भी निर्भर करते हैं:-

- ❖ मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाकर भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करना
- ❖ विभिन्न प्रकार के उपयोगी वृक्षों को लगाकर वृक्षों के उत्पादों का घरेलू तथा वाणिज्यिक एवं उससे प्राप्त होने वाली लकड़ी का घरेलू उपयोग
- ❖ मिट्टी के क्षरण को रोकना तथा इससे पानी में घुलने वाले तत्वों को रोककर अपेक्षाकृत साफ पानी प्राप्त करना
- ❖ औषधीय पौधों का रोपण एवं संवर्धन करके औषधियों की प्राप्ति
- ❖ वैविध्यपूर्ण उपज से मानवीय उपयोग हेतु अपेक्षाकृत अधिक पोषक तत्वों की प्राप्ति और परिणामस्वरूप बेहतर स्वास्थ्य
- ❖ पौधों के साथ-साथ अनुकूल वृक्षारोपण के द्वारा ग्लोबल वार्मिंग में कमी लाना
- ❖ खेतों में जलावन की लकड़ी प्रदान करने वाले वृक्षों का रोपण करके वनों की कटाई को रोकना
- ❖ बहुफसली खेती में भिन्न पौधों द्वारा प्राकृतिक पोषक तत्वों के पारस्परिक लेन-देन के कारण कीटनाशक तथा खर-पतवारनाशक तत्वों की आवश्यकता में कमी लाना, जो अंततः औद्योगीकरण संबंधी क्रिया-कलापों में कमी लाते हैं.
- ❖ सूखे की स्थितियों को जन्म देने वाली परिस्थितियों में कमी
- ❖ कार्बन-डाई-ऑक्साइड के उत्सर्जन, धूल, दुर्गंध-ध्वनि जैसे प्रदूषकों का नियंत्रण

- ❖ हरीतिमा में वृद्धि तथा सौन्दर्यानुभूति में वृद्धि से मानवीय जीवन में आह्लाद, फलतः प्रसन्न वातावरण का निर्माण
- ❖ जलवायु परिवर्तन से होने वाले मृदा-क्षरण जैसे कारकों पर नियंत्रण

कृषि वानिकी के विभिन्न प्रकार हैं:-

- **उद्यान बनाना (Parkland)-** उद्यानों में एक ही प्रकार के स्थानीय वृक्षों का झुरमुट लगाकर साथ में लगी उपज को तेज़ हवा के झोंकों से सुरक्षित करना उद्यानीकरण कहलाता है. इस संरक्षण के अलावा ये वृक्ष पशुओं को छाया व चारा भी प्रदान करते हैं. कुछ वृक्षों की पत्तियाँ नाइट्रोजन की प्रचुर मात्रा वाली होती हैं, जो नीचे की भूमि पर गिरकर भू-खंड की मिट्टी को उपजाऊ बनाती हैं.
- **कुंज बनाना (Shade Systems)-** इस विधा में ऐसे छायादार वृक्ष लगाये जाते हैं, जो एक विरल छतरी का काम करते हैं, जिनमें से कुछ मात्रा में धूप छनकर नीचे की फसल पर पड़ती है तथा आवश्यक फोटोसिन्थेसिस प्रक्रिया को संभव बनाती है. इस विधा में वे ही फसलें उगाई जाती हैं, जिन्हें अपेक्षाकृत कम धूप चाहिए होती है और कम मात्रा में फोटोसिन्थेसिस की आवश्यकता होती है. कड़ी धूप इन फसलों के लिए हानिकारक होती है. कुंजों में विरल छतरी वाले वृक्ष तथा छायादार वातावरण में फलने फूलने वाली फसलें लगाई जाती हैं.
- **वृक्षों के साथ उपज (Crop Over Tree Systems)-** इस विधा का उपयोग कम ही होता है तथापि इसमें छोटे-छोटे झाड़ीनुमा पौधों की छत पर इस प्रकार के पौधें लगाए और लतायें चढ़ाई जाती हैं, जो नीचे मिट्टी के पोषक तत्वों को बनाये रखने के साथ बाद में जलावन की लकड़ी के रूप में काम में लाई जाती हैं. भारत में हमें गिलोय और स्वर्णलता आदि बेलें वृक्षों के ऊपर प्राकृतिक रूप से बढ़ती-चढ़ती नज़र आती हैं. स्वर्णलता तो जिस वृक्ष पर चढ़ती है, उसे पूरी तरह से आच्छादित कर लेती है. Crop Over Trees pattern में बेलें उन वृक्षों पर चढ़ाई जाती हैं, जिन्हें अपेक्षाकृत कम धूप की आवश्यकता होती है. उदाहरण के तौर पर, पान की खेती छायादार भू-खंडों में की जाती है. बड़े पैमाने पर पान की खेती के लिए वृक्ष नहीं लगाये जाते, बल्कि फूस/ पुआल से अर्धगोलाकार कई मीटर लंबी मेहराबें तैयार की जाती हैं और उनके नीचे पान की खेती की जाती हैं. धूप को सोखने के लिए इन मेहराबों पर तुरई, लौकी तथा खीरे आदि की बेले चढ़ा दी जाती हैं. किंतु यदि बहुत छोटे पैमाने पर पान की खेती करनी हो तो घनी छाया वाले वृक्षों के नीचे भी खेती की जा सकती है.

- **फसल की कृषि-वीथिका (Alley Cropping)-** इसमें फसल की पट्टियों के बीच-बीच में थोड़ी पारस्परिक दूरी पर वृक्ष लगाये जाते हैं. चूँकि वृक्ष पुराने होते हैं, अत: फसल की बुआई से पहले सामान्यत: वृक्षों की कटाई-छँटाई कर दी जाती है और कटी हुई पत्तियों को बोई जाने वाली फसल के थानों पर फैला दिया जाता है, जो मिट्टी में मिलकर खाद का काम करती हैं. किनारे खड़े वृक्ष या ऊँचे घुराननुमा पौधे तेज़ हवा से उपज की रक्षा करते हैं और मिट्टी के कटाव/ बहाव को भी रोकने में सहायक होते हैं.

- **वृक्षों की कृषि वीथिका (Strip Cropping)-** यह विधा उपरोक्त कृषि वीथिका की तर्ज पर ही होती है. अंतर सिर्फ इतना ही होता है कि फसल की कृषि वीथिका में अधिक भू-भाग फसल को दिया जाता है और वृक्षों की कृषि वीथिका में वृक्ष अधिक संख्या में लगाये जाते हैं तथा वृक्षों के बीच बीच पट्टियों के आकार की भूमि में फसल उगाई जाती है. फसली कृषि वीथिका में फसल मुख्य और वृक्ष गौण होते हैं, किंतु इसके विपरीत वृक्षों की कृषि वीथिका में वृक्ष मुख्य और फसल गौण हो जाती है. वृक्षों का उद्देश्य पूर्णतया उत्पाद से संबंधित होता है, जिसमें फलदार और गिरिदार वृक्ष, जैसे अखरोट, बादाम आदि शामिल होते हैं. इसके साथ ही ये वृक्ष साथ की फसल को हानिकारक तेज़ हवाओं से बचाते हैं और मिट्टी के कटाव-बहाव को रोकते हैं.

- **पशुओं की आवश्यकता पर आधारित प्रणाली (Fauna Based Systems)-** कुछ स्थानों पर नीचे की भूमि को चारागाह के रूप में प्रयोग करने हेतु पशुओं के आहार से संबंधित वनस्पतियाँ उगाई जाती हैं और आसपास इस प्रकार के वृक्ष लगाये जाते हैं, जो पशुओं के भोजन और छाया के स्त्रोत साबित हों.

- **घुरान बनाना (Boundry Systems)-** इस विधा में भू-खंड के चारों ओर घनी झाड़ियाँ या सब्जियों, फलों की लताएँ लगा दी जाती हैं, जो उक्त भू-खंड पर लगी फसल की पशुओं/ तेज हवाओं से रक्षा भी करती हैं तथा फल/ उपज भी प्रदान करती हैं. बिहार/ झारखंड प्रांत के साथ-साथ देश के कई प्रांतों में इस विधा का बखूबी प्रयोग होता है.

हालाँकि 'कृषि वानिकी' की किसी न किसी विधा का प्रयोग विश्व के सभी देशों में आवश्यकतानुसार होता आया है, तथापि परंपरागत कृषि की तुलना में इसकी नई विधाओं के संबंध में आम लोगों को जानकारी और जागरुकता दोनों ही पर्याप्त नहीं हैं. कुछ चुनौतियाँ प्राकृतिक रूप से आती हैं जैसे पशुओं, फसलों और वृक्षों के मध्य प्रतिस्पर्धा होना या इस विधा का कठिन प्रतीत होना. इसके अलावा इसके संबंध में

प्रशिक्षण के अवसर पर्याप्त न होना भी इसके प्रचार-प्रसार में बाधक साबित होता है. उपकरणों, बीजों तथा वैज्ञानिक अनुसंधानों की कमी भी इसके प्रचार-प्रसार में बाधक तत्वों में से एक है. कृषि वानिकी से प्राप्त उत्पादों के विपणन हेतु स्थान तथा तकनीकी सहयोग की कमी भी खलती है.

फिर भी, भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, यह तो कहना पड़ेगा कि किसी नई या वैज्ञानिक विधा के रूप में न सही, परंपरागत रूप से भी कृषि- वानिकी का मिला-जुला प्रयोग सदियों से चला आ रहा है और इतने बड़े भारतीय प्रायद्वीप के अधिकांश किसान स्थानीय जलवायु, मिट्टी, संसाधनों की उप्लब्धता तथा स्थानीय आवश्यकता के अनुसार इसका बहुतायत से प्रयोग करते आए हैं. भारतीय खेतों में दलहन के साथ पशुओं के चारे को बोये जाने का चलन है. पशुओं का चारा बहुत जल्दी लंबाई में बढ़ जाता है और दलहन (अरहर की दाल) के पौधे छोटे रह जाते हैं. लंबाई में अंतर चारे की फसल को ऊपर-ऊपर से काटने में सरल होता है तथा खेत में अरहर दाल के पौधे परिपक्व होने के लिए छोड़ दिए जाते हैं. मकई के खेतों के चारों ओर घुरान के रूप में खीरे और तुरई की बेलें अक्सर देखने को मिल जाती हैं. हो सकता है कि वे किसान इसे कृषि वानिकी के स्वरूप में न जानते हों, फिर भी वे इससे अनभिज्ञ नहीं हैं. हाँ! तकनीक तथा वैज्ञानिक शोधों के ज्ञान की बात दीगर है.

नाइट्रोजन पौधों के विकास के लिए अत्यावश्यक है. इसके बिना हरियाली की कल्पना भी नहीं की जा सकती. किंतु नाइट्रोजन की उपलब्धता वायुमंडल में गैस के रूप में है, जिसे पौधे सीधे वायु से सोख नहीं सकते. पौधों के लिए नाइट्रोजन तभी उपयोगी होती है, जब वह किसी न किसी रूप में मिट्टी में समा जाए. नाइट्रोजन भंडारक पौधे वे होते हैं, जो राइज़ोबियम तथा इस जैसे अन्य बैक्टीरिया की सहायता से वायु की नाइट्रोजन को सोख कर अपनी जड़ों में एक छोटे बैलून के रूप में संचित करते हैं जैसे मटर, बनमेथी (तिपतिया). जब ये पौधे परिपक्व होने के उपरांत समाप्त होते हैं, तो इनका पंचांग विघटित हो जाता है तथा जड़ों में गुब्बारों के रूप में संचित नाइट्रोजन मिट्टी में मिल जाता है. मिट्टी में मिला हुआ यह नाइट्रोजन पौधों/ फसलों के लिए बड़ा उपयोगी होता है, जो अंततः मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाता है. विघटित होने से पहले भी इनकी बैलून रूपी जड़ों से नाइट्रोजन आस-पास की मिट्टी में मिलता रहता है, जो पौधों के काम आता है.

सविता शर्मा, संपादक, यूनियन धारा, कें.का., मुंबई

मोहन बोधनकर

बागवानी : असीम संभावनाएं

फूलः

सुबह की कच्ची गुनगुनी धूप में टहलते-टहलते मैं अपने घर की बगिया को देख रहा था. इस बगिया में गुलाब, मोगरा, शेवंती के फूल व आम, अमरूद के पेड़ थे. यह बगिया मेरे पिताजी ने बनाई थी. साथ ही घर के एक कोने में छोटी सी जगह में पालक, धनिया, भिंडी, टमाटर लगे हुए थे. अपनी बगिया को देखते-देखते मुझे अपना बचपन याद आने लगा, साथ ही गुप्ता दादाजी का बगीचा, जहां आम, अमरुद खाने हम दोस्तों की मंडली पहुंच जाया करती थी. आम के पेडों पर लगे झूले, अमराई में छुप-छुप कर आम तोड़ना, फिर पकड़े जाना.... वाह क्या दिन थे !

घर की बगिया में मेरी रुचि बचपन से ही थी. बड़े होने पर यही रुचि अच्छे खासे शौक में बदल गई. अब मैं कौन सा पौधा कैसे लगाना है, इसे कितनी खाद देनी है, मिट्टी कैसी होगी, यह सीख गया था. एक प्रश्न मन में आया कि पौधों के लगाने की कोई तकनीक तो होगी. उत्तर मिलाः बागवानी.

बागवानी पौधों की खेती का विज्ञान है. यह फलों, वनस्पतियों, फूलों, मसालों और सजावटी पौधों के उत्पादन से संबंधित है. कार्बनिक उत्पाद, सजावटी फूलों और उपहार में दिये जाने वाले पौधों की मांग के साथ आज बागवानी क्षेत्र एक लाभप्रद एवं आकर्षक कैरियर के रुप में उभर रहा है.

बागवानी में फूलों का अपना अलग महत्व है. फूलों का उपयोग प्राचीन काल से उत्सवों में, श्रृंगार के साधनों एवं पूजा के रूप में किया जाता रहा है.

यदि आपके जन्मदिन पर फूलों के पौधे का उपहार मिल जाये, तो आप बहुत खुश और साथ ही आश्चर्य में भी पड़ जाते हैं. इस पौधे को आप हमेशा सहेज कर रखना चाहेंगे और आपके आंगन में हमेशा दोस्ती की सुगंध फैलती रहेगी. उपहार में फूलों के

पौधे देने से पहले उन्हें तैयार करना पडता है. यह काम वही कर सकता है, जो फूलों में रुचि रखता हो और साथ ही उसे पौधों की पूरी जानकारी हो. गुलाब, मोगरा, रजनीगंधा, चमेली, शेवंती जैसे सुगंधित फूल और गेंदा, गुलमोहर, झरोखा जैसे चटखदार रंगों के फूल वास्तव में मन को सुकून देते हैं.

उदाहरणार्थ, धार्मिक कार्यों एवं धार्मिक स्थानों पर फूलों का उपयोग किया जाता है. व्यवसाय की दृष्टि से, अर्थशास्त्र के मांग एवं पूर्ति का नियम सार्थक प्रतीत होता है. जहां जैसी मांग होगी, वहां उन फूलों का उत्पादन होगा. शिरडी के आसपास के क्षेत्रों में गुलाब की खेती करने वाले बहुतायात से हैं. दक्षिण भारत के तिरुपति क्षेत्र के मंदिर में चढाने के लिए कुंदा, चमेली, गुलाब, मोगरा, रजनीगंधा की मांग ज्यादा है. इसीलिए वहां इन फूलों की खेती की जाती है.

फूलों की खेती में सूरजमुखी की खेती ऐसी खेती है, जिसका प्रयोग तेल बनाने में किया जाता है. गुलाब, चमेली आदि फूलों द्वारा निर्मित तेल, इत्र एवं सौन्दर्य प्रसाधनों के निर्माण में किया जाता है. टेसू जैसे फूलों का उपयोग रंग बनाने में भी किया जाता है. भारतीय फूलों की मांग विदेशों में भी की जाने लगी है. इस मांग के कारण भारत ने पुष्प निर्यात के क्षेत्र में भी अच्छी जड़ें जमा ली हैं. बड़े पैमाने पर खेती को हर प्राकृतिक आपदा से बचाने के लिए पॉली हाउस एवं ग्रीन हाउस में संरक्षित खेती का प्रचलन भी अब बढ़ गया है.

फूलों के व्यवसाय में लाभ के अवसर देख कर कई युवा इस व्यवसाय की ओर आकर्षित हो रहे हैं. राष्ट्रीय कृषि बोर्ड ने कई सर्टिफिकेट कोर्स भी आरंभ किये हैं, जिनमें जमीन खरीदने से लेकर बीजों की जानकारी एवं फूलों की प्रजातियों के संबंध में प्रशिक्षण दिया जाता है. तकनीकी रूप से प्रशिक्षित युवा अगर इस व्यवसाय को अपनाते हैं, तो उनका भविष्य निश्चित रूप से उज्ज्वल होगा.

फल :

बागवानी का दूसरा महत्वपूर्ण अंग है फलों का बगीचा. फलों की खेती जलवायु पर निर्भर है. कुछ फल केवल शीत प्रदेशों में ही लगते हैं, तो कुछ ग्रीष्म में. परन्तु आम और अमरूद जैसे मौसमी फल भारत के हर प्रदेश में पैदा होते हैं. कहा जाता है कि भारतवर्ष में केवल आम की लगभग एक हजार प्रजातियां पाई जाती हैं. लंगडा, दशहरी, चौसा, हापुस, नीलम, तोतापुरी इत्यादि. पके फलों से गुठलियां निकाल कर क्यारियों में बोए जाते हैं एवं बीज से पौधा तैयार किया जाता है. आम की खेती में अलफांसो (हापुस) का निर्यात बहुत से देशों में होता है. अमरूद में पोषक तत्व बहुत होते हैं एवं पाचन के लिए भी यह अच्छा माना जाता है. साधारणतः अमरूद का पौधा चार वर्ष पश्चात फल देना शुरू करता है.

महाराष्ट्र के नासिक एवं उसके आसपास के क्षेत्रों में अंगूर की खेती बडे पैमाने पर की जाती है. पिछले तीन दशकों में पंजाब, हरियाणा, राजस्थान एवं दिल्ली के आसपास के क्षेत्रों में भी अंगूर की खेती ने प्रगति की है. हिमालय की सर्द हवाओं में सेव और स्ट्राबेरी की खेती की जाती है. हिमालयीन प्रदेशों में मिट्टी को ध्यान में रखकर बगीचे बनाये जाते हैं. महाराष्ट्र के भुसावल के केले, नागपुर के संतरे, बिहार की लीची, गुजरात के चीकू, देश के अनेक भागों में भेजे जाते हैं.

गर्मी के मौसम में आजकल सबसे ज्यादा प्रचलित होने वाला फल है, तरबूज. इसकी खेती का भी अलग विज्ञान है. यह नदियों के आसपास ही पैदा किया जाता है. इस फल की मजेदार बात यह है कि यह फल मूलतः दक्षिण अफ्रीका से सातवीं शताब्दी में भारत आया था और तब से उसे यहां उगाया जाने लगा है. पपीता एवं अनार भी स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यंत लाभकारी फल हैं. फलों को पौष्टिक आहार के रूप में खाने के अलावा भी अन्यत्र प्रयोग किया जाता हैं. सौन्दर्य प्रसाधनों के उत्पाद, फलों के रस जूस बनाने वाली कम्पनियां फलों का उपयोग करती हैं, जिनकी वजह से फलों की मांग लगातार बढ़ रही है और तदनुसार उतना ही उत्पादन भी बढ़ रहा है. इसमें कुछ नये प्रयोग भी लगातार किये जा रहे हैं. जैसे अचार बनाने वाली कम्पनी अगर एक आम के बगीचे को गोद ले ले, तो उस आम वाले की वार्षिक आय पहले से सुनिश्चित हो जाती है.

गिरीदार फल जैसे काजू, अखरोट, बादाम, चिलगोजे, चिरोंजी-ये सब स्वास्थ्य के लिए अत्यंत फायदेमंद हैं, जिनका विक्रय मूल्य भी बहुत अधिक होता है. अतः इनकी खेती करने वालों को लागत से कई गुना ज्यादा फायदा होता है. केसर, बादाम, चिलगोजे हिमालय में की जाने वाली खेती हैं और काजू तो गोवा की देन है.

सब्जियां :

साग-सब्जियों का हमारे दैनिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है. सब्जियों का उत्पादन छोटी सी जगह में भी आसानी से किया जा सकता है. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा राष्ट्रीय कृषि नवोन्मेषी परियोजना चलाई जा रही है. इसमें वैज्ञानिक सब्जी उत्पादन की उन्नत तकनीकों का सहारा लिया जाता है. सब्जी की आधुनिक खेती का एक मुख्य अंग है मचान विधि से खेती. लौकी, खीरा, सेम करेला जैसी बेलदार सब्जियाँ इस विधि से सीमित स्थान पर उगाई जाती हैं.

मसाले

मसालों की खेती बागवानी का एक अतिरिक्त पहलू है. राष्ट्रीय बीज मसाला अनुसंधान केन्द्र, भारतीय मसाला बोर्ड जैसे संस्थानों ने मसाला-खेती के नये तरीके इजाद किये

हैं. इसमें अल्पावधि में गुणवत्ता वाले मसालों का उत्पादन किया जा सकता है. कहा जाता है कि भारत में फ्रांसीसी एवं पुर्तगाली लोग मसालों की खोज में आए थे. इतिहास से यह भी ज्ञात होता है कि दक्षिण भारत के स्वर्णिम वैभव के पीछे रोमनों के साथ हुआ यहाँ का मसाला व्यवसाय ही था; क्योंकि रोमन व्यापारी सोने के बदले भारतीय मसाले ले जाया करते थे. दालचीनी, इलायची, लौंग, जायफल, काली मिर्च, जीरा और अनेक मसाले कभी स्वाद के लिए, तो कभी स्वास्थ्य के लिए उपयोग में लाये जाते हैं. इस खेती को सब्जियों की अगैती खेती कहा जाता है .

कृत्रिम रसायनों का उपयोग न कर जमीन की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के लिए सही तकनीकों का उपयोग करना चाहिए. जैविक खेती भूमि की उर्वरा शक्ति बढाने का एक अच्छा तरीका है. इसी कड़ी का एक पहलू है पॉली हाउस/ग्रीन हाउस.

पॉली हाउस:

क) पॉली हाउस की अवधारणा : पॉली हाउस खेती में प्रतिकूल वातावरण में फूल एवं सब्जियां उगाई जाती हैं. यह किसी भी मौसम में, वातावरण-नियंत्रित पॉली हाउस में किसी भी सब्जी को उगाने के लिए सुविधाजनक है. एक तरफ ककड़ी, लौकी, शिमला मिर्च और टमाटर कम लागत वाली पॉली हाउस में सर्दियों के दौरान काफी लाभकारी पैदावार दे सकते हैं, वहीं दूसरी तरफ उचित वेंटीलेशन के साथ, उष्णकटिबंधीय फूलगोभी और धनिया की किस्मों को सफलतापूर्वक पैदा किया जा सकता है. जरबेरा, कारनेशन, गुलाब, अन्थूरियम आदि फूलों को भी फसलों की तरह पाली हाउस में बोया- उगाया जा सकता है.

पॉली हाउस की लागत और फायदे

पॉली हाउस के जरिए अब भारत के किसान अधिक गुणवत्ता वाली खेती और अधिक मुनाफा कमा रहे हैं. पॉली हाउस जैविक खेती का हिस्सा है, जिससे सब्जियों की गुणवत्ता बहुत अच्छी होती है. साथ ही आप बेमौसम सब्जियों को भी उगा

सकते हैं. आइये, जानते हैं कैसे होती है पॉली हाउस खेती.

ख) पॉली हाउस बनाने का तरीका: पॉली हाउस का निर्माण स्टील, लकड़ी, एवं अल्युम्युनियम के ढांचे द्वारा किया जाता है. इस ढांचे को पॉलिथीन से अर्ध गोलाकार के स्वरूप में ढ़ंक दिया जाता है. पॉली हाउस में सिंचाई की व्यवस्था ड्रिप इरीगेशन पद्धति से की जाती है. इस माध्यम से पानी की बचत होती है तथा पौधों को जरूरत के अनुसार लगातार पानी मिलता रहता है. इस पद्धति को एक बड़ी मशीन के द्वारा नियंत्रित किया जाता है. जब पॉली हाउस में ड्रिप इरीगेशन के माध्यम से उर्वरक पहुंचाया जाता है, तो उस प्रक्रिया को fertigation कहते हैं .

ग) पॉली हाउस में खेती करने की विधि : अपनी भूमि के हिसाब से पॉली हाउस तैयार किए जा सकते हैं. इस भूमि पर अधिक से अधिक जैविक खाद डाल कर जमीन की गुणवत्ता बढ़ाई जा सकती है. फिर पौधों के लिए मेड़ तैयार किए जाते हैं. साथ ही आपको इसकी चौड़ाई का भी ध्यान रखना चाहिए, जिससे आप आसानी से क्यारियों में जाकर तुड़ाई व कटाई कर सकते हैं. अत: फलों व सब्जियों की मांग को देखते हुए पॉली हाउस को बढ़ाने की अपार संभावनाए हैं. पॉली हाउस के विकास एवं देखरेख हेतु उचित प्रशिक्षण, परिश्रम एवं व्यक्तिगत निगरानी अति आवश्यक है.

उतक संवर्धन (प्लांट टिशू कल्चर)

उतक संवर्धन का अर्थ है अच्छा फूल, फल या अन्य वांछनीय पौधों की हूबहू नकल कर उत्पादन, जल्दी परिपक्व संयंत्रों का उत्पादन, बीज या बीज के उत्पादन के लिए आवश्यक परागण के अभाव में पौधों के गुणकों का उत्पादन.

प्लांट टिशू कल्चर कई संयंत्र कोशिकाओं को एक पूरे संयंत्र (totipotency) को पुनर्जीवित करने की क्षमता है. एकल कक्षों, सेल दीवारों (मूल तत्त्वों) के बिना संयंत्र कोशिकाओं, पत्तियों के टुकड़े, उपज या जड़ों का नया संयंत्र उत्पन्न करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है.

टिशू कल्चर तकनीक के लिए वित्तीय सहायता बैंक के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है. इन बढ़ती हुई संभावनाओं का लाभ उठाने के लिए यूनियन बैंक ने "यूनियन बायो टेक" योजना लागू की है .

यूनियन बायोटेक योजना के अंतर्गत एकल व्यक्ति या संयुक्त रूप से टिशू कल्चर इकाई स्थापित करने के लिए ऐसे उद्यमी, जिनके पास अपनी 3 एकड़ से अधिक जमीन है, वित्तीय सहायता दी जा सकती है. इकाई स्थापित होने तक सावधि ऋण और उसके बाद इकाई चलाने के लिए कार्यशील पूंजी दी जाती है, जिसमें न्यूनतम मार्जिन 25% होता है.

टीशू कल्चर की सफलता हेतु आवश्यक शर्तें

- लंबी अवधि तक उत्पाद के बाजार की उपलब्धता होना
- जल, मृदा, जलवायु, विद्युत प्रदाय की अनवरत उपलब्धता होना
- हानि एवं विस्तार की स्थिति में शासकीय सहायता उपलब्ध होना
- कृषि एवं बागवानी के नवीनतम एवं उन्नत ज्ञान की जानकारी होना

खाद

केंचुआ खाद बनाना (वर्मी कम्पोस्टिंग)

केंचुआ द्वारा जैव विघटनशील व्यर्थ पदार्थों के भक्षण तथा उत्सर्जन से उत्कृष्ट कोटि की कम्पोस्ट (खाद) बनाने को वर्मीकम्पोस्टिंग कहते हैं. वर्मी कम्पोस्ट को मिट्टी में मिलाने से मिट्टी की उर्वरा शक्ति तो बढ़ती ही है, साथ ही साथ फसलों की पैदावार व गुणवत्ता में भी बढ़ोत्तरी होती है. रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक इस्तेमाल से मृदा पर होने वाले दुष्प्रभावों का वर्मी कम्पोस्ट के उपयोग से सुधार होता है.

कम्पोस्ट के लाभ:

- वर्मी कम्पोस्ट, सामान्य कम्पोस्टिंग विधि से एक तिहाई समय (2 से 3 माह) में ही तैयार हो जाता है.
- वर्मी कम्पोस्ट में गोबर की खाद (एफ.वाई.एम.) की अपेक्षा नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश तथा अन्य सूक्ष्म तत्व अधिक मात्रा में पाये जाते हैं.
- वर्मी कम्पोस्ट के सूक्ष्म जीव, एन्जाइम्स, विटामिन तथा वृद्धिवर्धक हार्मोन प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं.
- केंचुआ द्वारा निर्मित खाद को मिट्टी में मिलाने से मिट्टी की उपजाऊ एवं उर्वरा शक्ति बढ़ती है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव पौधों की वृद्धि पर पड़ता है.
- वर्मी कम्पोस्ट वाली मिट्टी में भू-क्षरण कम होता है तथा मिट्टी की जलधारण क्षमता में सुधार होता है.
- खेतों में केंचुओं द्वारा निर्मित खाद के उपयोग से खर-पतवार व कीड़ों का प्रकोप कम होता है तथा पौधों की रोग रोधक क्षमता भी बढ़ती है.
- वर्मी कम्पोस्ट के उपयोग से फसलों पर रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों की मांग कम होती है, जिससे किसानों का इन पर व्यय कम होता है.
- वर्मी कम्पोस्ट से प्राकृतिक संतुलन बना रहता है, साथ ही भूमि, पौधों या अन्य प्राणियों पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता.

निर्यात संभाव्यता:

भारत विश्व का फल एवं वनस्पति भंडार है. भारत के उत्पादों का 90 प्रतिशत से अधिक निर्यात पश्चिमी एशिया तथा पूर्वी यूरोपीय बाजारों को किया जाता है. फिर भी एक कृषि परामर्श दाता के अनुसार इसे भारी पैमाने पर अपने खाद्य एवं प्रसंस्करण उद्योग को बढ़ाने की आवश्यकता है.

सितंबर 2016 में भारत का कुल कृषि उत्पादों का निर्यात लगभग रु.168.84 बिलियन रहा. भारत का ताजे फलों का निर्यात वर्ष 2005-06 में रु.225 करोड़ था, जो अब बढ़कर इससे डेढ़ गुना हो चुका है, जो लगभग सौ मिलियन अमेरिकन डालर होता है. भारत का बागवानी उत्पाद निर्यात जिन प्रमुख देशों में होता है वे हैं - नीदरलैंड, यूएई, रूस, बांग्लादेश, नेपाल, इंग्लैंड इत्यादि. वनस्पति फसलों के क्षेत्र में किये गये अनुसंधान एवं नीतिगत उपायों के कारण संवृद्धि दर लगभग 3.50 से 4.00 प्रतिशत हो गयी है. उन्नत प्रौद्योगिकी की सहायता से संवृद्धि दर लगभग 6.00 प्रतिशत तक हो सकती है. भारत के मुख्य निर्यातकारी फल में सबसे बड़ा नाम है आम का. इसके अतिरिक्त अंगूर एवं मशरूम इत्यादि का निर्यात भी यूनाइटेड किंगडम, मध्य एशिया, सिंगापुर तथा हांगकांग को किया जाना आरंभ हो गया है. साथ ही सब्जियों में प्याज का स्थान प्रथम है. भारत विश्व में प्याज का दूसरा सबसे अधिक उत्पादन करने वाला देश है. भारतीय प्याज अपने तीखेपन के लिए विश्वभर में प्रसिद्ध हैं.

सारांश :

हमारे देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या आज भी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है, जिसके कारण प्रच्छन्न बेरोजगारी एवं पलायन समस्या से आज भी हमारे अर्थशास्त्री जूझ रहे हैं. ऐसे में बागवानी देश में रोजगार निर्माण एवं कृषि सह उद्योगों के विकास में महती भूमिका निभा सकने का सामर्थ्य रखती है. बागवानी में रोजगार एवं कारोबार और इससे आगे नवीन अनुसंधान की असीम संभावनाएं नव युवकों की मुंह बाए प्रतीक्षा कर रही है. प्रगतिशील किसानों को चाहिए कि उपलब्ध जानकारियों की मदद से देश और स्वयं के विकास के लिए नये आयाम छूने के लिए प्रयास करें. इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था में उनका सहयोग देश कभी नहीं भूलेगा और विपरीत पलायन अर्थात शहरों से गाँवों की ओर व्यवसाय हेतु आगमन संभव होगा, जो गाँवों की समृद्धि में मददगार होगा.

मोहन बोधनकर, (संकाय), एसटीसी, भोपाल

अर्पित जैन

संविदा खेती: एक विकल्प

- उचित मूल्य न मिलने के कारण मंडी के बाहर फेंका गया प्याज.
- राज्य में विगत 1 वर्ष में 200 किसानों ने की आत्महत्या.

प्राय: ऐसी सुर्खियाँ अखबारों एवं समाचार चैनलों पर देखने को मिल जाती हैं. भारतीय कृषक के विषय में कहा जाता है कि हमारा परिश्रमी किसान कर्ज लेता है और उसकी पीढ़ियाँ कर्ज भरती रहती हैं. यह स्थिति कमोबेश प्रत्येक राज्य की है. संविदा खेती वह माध्यम है, जिसके द्वारा हमारे कृषकों तथा उनकी जोतों की स्थिति में व्यापक सुधार किया जा सकता है. संविदा कृषि को अनुबंध कृषि भी कहा जाता है. यह कृषि उपज उत्पादन की वह पद्धति है, जिसमें निजी क्षेत्र की कंपनियां कृषकों के साथ करार करती हैं तथा फसल उत्पादन हेतु उन्हें उत्तम बीज, खाद, अच्छी सिंचाई व्यवस्था उपलब्ध कराकर उनकी फसल को उचित दामों पर बाजार में बेचने में उनकी सहायता करती है. इस अनुबंध में गुणवत्ता की शर्त भी होती है. पारिभाषिक शब्दों में हम कह सकते हैं कि संविदा खेती किसान एवं कम्पनी के मध्य पूर्व निर्धारित आधार पर निर्धारित मूल्य तथा तय मानक गुणवत्ता के आधार पर कृषि उत्पादों के उत्पादन एवं आपूर्ति हेतु किया गया समझौता है. इस व्यवस्था से किसानों तथा कम्पनी दोनों को ही लाभ होता है. इस लिहाज से संविदा खेती को लाभ की खेती भी कहा जा सकता है. इस खेती को अपनाने से किसानों का ध्यान केवल फसल उत्पादन पर केन्द्रित हो जाता है, परिणामत: फसल की गुणवत्ता एवं मात्रा दोनों में ही वृद्धि होती है.

देश की खाद्यान आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए खाद्य प्रसंस्करण की आवश्यकता है. आज कृषि उत्पादों का 2 प्रतिशत ही प्रसंस्कृत किया जा रहा है, जिसे इस दशक के अंत तक 10 प्रतिशत किये जाने की आवश्यकता है. इस हेतु 1.4 लाख करोड़ रुपयों के निवेश की आवश्यकता है, जो हमारे कर्मशील किसानों की जीवटता,

निजी कंपनियों की भागीदारी एवं बैंक की सक्रिय भूमिका के साथ संविदा खेती से ही संभव हो सकेगा. राष्ट्रीय कृषि नीति में यह संकल्प किया गया है कि संविदा खेती को बढ़ावा दिया जाएगा. आज हम देख रहे हैं कि बहुत सी कार्पोरेट जगत की नामी कंपनियां खाद्य प्रसंस्करण तथा सुपर बाजार में निवेश कर रही हैं. ऐसे में कच्चा माल प्राप्त करने के लिए उनकी कृषकों पर निर्भरता स्वाभाविक है तथा इस निर्भरता का विधिक पक्ष, जो सब की जीत को सुनिश्चित करेगा, वह है संविदा आधार पर की गयी खेती. आधुनिक संविदा खेती की कुछ विशेषताएं इस प्रकार है-

- कारोबारी स्वामित्व एवं इससे संबंधित निर्णय कम्पनी के होते हैं, जबकि भूमि का स्वामित्व किसान का होता है.
- जोखिम में साझेदारी होती है. उत्पादन जोखिम किसान का, जबकि विपणन एवं उत्पादन पश्चात मूल्य प्राप्ति का जोखिम कम्पनी का होता है.
- किसानों को पूर्व निर्धारित मूल्य प्रदान किया जाता है.

संविदा खेती के प्रकार

संविदा करार कार्पोरेट द्वारा किसी एक किसान अथवा किसानों के संघों से किये जाते हैं. कभी-कभी ये करार सरकारों के साथ भी हो सकते हैं. बैंकों द्वारा ऋण प्रदान कर संविदा खेती को प्रोत्साहन दिया जा सकता है. ऐसे करारों पर दिये गये ऋण सुरक्षित होंगे. वैधानिक संविदा स्वामित्व के 3 प्रकार हैं जो हैं-

1. **एक पक्षीय संविदा:** यह कृषि उपज की प्राप्ति हेतु बिक्री के पूर्व आपसी सहमति के आधार पर होती है, जिसमें उत्पाद विक्रय/ क्रय पर पूर्व सहमति होती है.
2. **सीमित संविदा:** इसके अंतर्गत कृषक को उत्पादन में सहायक सामग्री संविदा करने वाली फर्म द्वारा प्रदान की जाती है तथा कृषि उत्पाद पूर्व निर्धारित मूल्य पर खरीदे जाते हैं.
3. **पूर्ण संविदा:** इसमें संविदा करने वाली कम्पनी कृषिगत आवश्यकताओं की आपूर्ति करती है तथा किसान भूमि, सिंचाई एवं समय-समय पर श्रमिकों की व्यवस्था करता है.

इस तरह किसान, निजी कम्पनी तथा बैंक मिलकर संविदा खेती को प्रभावी बना सकते हैं. संविदा खेती के करार 1 से 5 वर्ष के हो सकते हैं. लाभप्रदता एवं अच्छे संबंधों के चलते संविदा दीर्घावधि की भी की जा सकती है.

अन्य कानूनी प्रावधान

वैसे तो संविदा खेती किसानों एवं कंपनियों के मध्य होने वाले पारस्परिक करार पर निर्भर है तथा यह करार करने तथा इससे मुक्त होने के लिए पर्याप्त स्वतंत्रता है, किंतु इस संबंध में एक अधिनियम भी बनाया गया है- कृषि उत्पाद विपणन कमेटी अधिनियम (APMC Act). वर्ष 2003 से लागू इस अधिनियम द्वारा केन्द्र सरकार की ओर से राज्य सरकारों को संविदा खेती के करारों को पंजीकृत करने के निर्देश दिये गये हैं. किसानों के हित संरक्षण हेतु इस अधिनियम में उनके अधिकार, संविदा संबंधी नियम एवं शर्तें तथा मतभेद निराकरण की प्रक्रिया उल्लिखित है.

लाभ

चूँकि संविदा कृषि बहुपक्षीय करार है, अत: इसका लाभ किसान, निवेशक कम्पनी, ऋण प्रदाता बैंक सभी को होगा. गुणवत्ता में सुधार एवं तकनीक के प्रयोग से उपभोक्ता को भी इसका प्रत्यक्ष लाभ पहुंचेगा. हालांकि इसे एक नवीन अवधारणा के रूप में अपनाया जाने लगा है और इससे होने वाले लाभ भी दिखाई देने लगे हैं. संविदा खेती से विभिन्न पक्षों को होने वाले लाभ को इस प्रकार देखा जा सकता है-

किसानों को लाभ

- पूर्व निर्धारित दाम एवं निश्चित लाभ प्राप्ति.
- उन्नत प्रौद्योगिकी की सुलभता.
- आसान तकनीकी सलाह.
- बाजार के मांग आधारित उत्पादन करने से अच्छे दामों की प्राप्ति.
- किसान का ध्यान केवल उत्पादन पर, गुणवत्ता में सुधार.
- गाँवों से पलायन में रोक.
- पढ़े-लिखे युवा कृषकों अपने स्थान पर काम के अवसर.

कंपनियों को लाभ

- सतत कच्चे माल की आपूर्ति.
- बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप माल आपूर्ति संभव.
- लंबी अवधि के करार द्वारा एक से माल की प्राप्ति.

- उच्च गुणवत्ता का बनाए रखना संभव.
- प्रौद्योगिकी एवं भंडारण की उच्च तकनीक द्वारा बाजार के उतार-चढ़ावों से बचाव संभव.
- कृषि उत्पादों की आसान प्राप्ति एवं कृषि सह उद्योगों की स्थापना संभव.
- उत्पादन हेतु सस्ते श्रमिकों की उपलब्धता संभव.
- उत्पादन का पूर्वानुमान लगाना संभव, विपणन में सहायक.

बैंकों को लाभ

- एनपीए होने की बहुत कम संभावना.
- करार पर ऋण देना आसान.
- नियमित चुकौती में कठिनाई नहीं.
- प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को दिये जाने वाले ऋण के लक्ष्यों की प्राप्ति आसान.
- कंपनियों को ऋण प्रदान करना तथा उसकी वसूली आसान होगी.

उपभोक्ता को लाभ

- उच्च गुणवत्ता वाली उपभोक्ता वस्तुओं की प्राप्ति.
- वर्ष भर किसानों द्वारा उत्पादित एवं उद्योगों द्वारा प्रसंस्कृत वस्तुओं की उपलब्धता संभव.
- जैविक कृषि द्वारा स्वास्थकर उत्पादों का उत्पादन होने से स्वास्थ्यप्रद उपभोक्ता वस्तुओं की प्राप्ति.

सरकार को लाभ

- उद्योगों का विकास होने से रोजगार गारंटी योजना के स्थान पर अन्य कल्याणकारी कार्यों में पूंजी लगाए जाने की संभावना.
- ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत ढाँचा स्थापित करने के अवसर.
- उद्यमशीलता के विकास से राजस्व में वृद्धि.
- नकदी फसलों को प्रोत्साहन, जिससे विदेश व्यापार में वृद्धि की संभावना.

संविदा कृषि में सफलता की कहानियां

स्वयं में एक नवीन अवधारणा होते हुए भी संविदा कृषि देश में स्वीकार्यता प्राप्त कर चुकी है. पुरानी बटाई कृषि से यह अवधारणा एकदम उलट है; क्योंकि बटाई में जोखिम किसान के कंधों पर होता था, जबकि वह अपना धन एवं परिश्रम दोनों ही कृषि पर लगाता था. कार्पोरेट जगत एवं बैंक रूपी सशक्त माध्यम अब कृषि से जुड़ गये हैं. ऐसे में संविदा खेती के व्यापक तौर पर अपनाये जाने की असीम संभावनाएं हैं. आइये, देश में संविदा खेती पर आधारित कुछ सफल प्रोजेक्ट पर एक दृष्टि डाले-

1. **पेप्सिको इंडिया:** कम्पनी द्वारा आलू एवं टमाटर आदि फसलों का उत्पादन पंजाब, आंध्र प्रदेश एवं मध्य प्रदेश में संविदा आधार पर कराया जा रहा है. कम्पनी का जोर गुणवत्ता पर अधिक रहता है. कम्पनी ने पंजाब में 22 करोड़ की लागत से टमाटर प्रोसेसिंग का कारखाना स्थापित किया, जो सफल रहा है. कम्पनी पैदावार में सुधार के सुझाव कृषकों को देती रहती है.

2. **सोयाबीन उत्पादन:** सोयाबीन के उत्पादन में मध्य प्रदेश का अग्रणी स्थान है. प्रदेश में बहुत-सी कंपनियों ने किसानों से सीधे सोयाबीन खरीदकर उसके उत्पाद बनाना शुरू कर दिये हैं. सोयाबीन से तैयार पशु आहार का निर्यात भी किया जाता है.

3. **अपाची काटन कम्पनी:** कर्नाटक एवं तमिलनाडु में कम्पनी द्वारा कपास की संविदा खेती कराई जाती है.

4. **कार्गिल इंडिया प्रा. लि.:** मध्य प्रदेश में कम्पनी द्वारा अनाजों एवं सोयाबीन की संविदा कृषि कराई जा रही है.

5. **एग्रो शेल कार्पोरेशन लिमिटेड:** कम्पनी गुजरात के सुरेन्द्र नगर एवं कच्छ जिलों में कई वर्षों से 5000 एकड़ भूमि पर कपास एवं सीसम की आर्गेनिक खेती करा रही है. इस खेती द्वारा किसानों को साधारण कपास की तुलना में 7 से 8 प्रतिशत अधिक मूल्य प्राप्त हो रहा है.

6. **अमूल इंडिया:** विश्व भर में दुग्ध उत्पादन की मिसाल तथा भारत में श्वेत क्रांति की सूत्रधार यह कम्पनी कृषकों से कई स्तरों पर करार करती है.

7. महाराष्ट्र में **गन्ना सहकारी समितियाँ** भी इसी तरह का उदाहरण हैं.

वैश्विक स्तर पर संविदा कृषि

विश्व के विभिन्न देशों में संविदा खेती की अवधारणा महत्व पा रही है. पापुआ न्यू गिनी जैसे छोटे द्वीप समूह में रबर एवं पाम तेल की संविदा आधार पर खेती की जा रही है. थाईलैंड में संविदा खेती की स्वीकार्यता ने जोर पकड़ा है. शासकीय स्तर पर भी इसे बढ़ावा दिया जा रहा है. थाईलैंड के कृषकों ने अपने संघ बनाए हैं, जिस आधार पर वे कंपनियों से उपयुक्त करार करने में समर्थ हुए हैं. वर्ष 2015-16 में हमारे देश में दालों के उत्पादन में आई कमी ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संविदा खेती के द्वार खोल दिये हैं. हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने जुलाई 2016 की अपनी अफ्रीकी देशों की यात्रा के दौरान मोजाम्बिक पहुंचकर वहाँ की सरकार के साथ यह समझौता किया कि भारत वहाँ के किसानों को बीज तथा अन्य कृषिगत आवश्यकताओं की आपूर्ति करेगा. वहाँ के कृषक हमारे लिए दालों का उत्पादन करेंगे. मोजाम्बिक के कृषकों को भारत में प्रचलित दाल के मूल्य के बराबर मूल्य प्रदान किया जाएगा. इस वित्तीय वर्ष के दौरान देश में दालों का उत्पादन 76 लाख टन कम रहा है. कई दालों के दाम तो 200 रु. प्रति किलो ग्राम तक पहुंच गये. ऐसे में भारत सरकार का यह निर्णय देश में दाल आपूर्ति तथा हमारे अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की बेहतरी दोनों के लिए बहुत लाभप्रद सिद्ध होंगे. वैश्विक स्तर पर संविदा कृषि पर आधारित ऐसे करारों से देश के किसान अन्य नकदी फसलों का उत्पादन करने में समर्थ हो सकेंगे.

संविदा आधार पर उगाई जाने वाली फसलें

वैसे तो प्रत्येक वह फसल, जिसकी मांग बाजार में बनी रहती है, संविदा आधार पर उत्पादित की जा सकती है. फिर भी संविदा कृषि के मामले में नकदी फसलों को तरजीह देने की आवश्यकता है. ऐसी फसलों में उच्च मूल्य वाले, निर्यात करने योग्य फूल, फल एवं सब्जियाँ सम्मिलित की जा सकती हैं. गुलाब, कमल, अंगूर, शतावरी, स्ट्राबेरी आदि फसलों को इसमें शामिल किया जा सकता है; क्योंकि इनके दाम वर्ष भर अच्छे आते हैं तथा इनके उत्पादन में समय भी कम लगता है. अधिक जोखिम तथा जल्द खराब होने वाली फसलों तथा औषधीय उपजों के उत्पादन में संविदा अधिक सफल हो सकती है; क्योंकि इन फसलों के उत्पादन का जोखिम अकेला किसान नहीं उठा पाता है.

संविदा खेती की पूर्व शर्तें :

संविदा कृषि को लागू करने के लिए आवश्यक है कि सबसे पहले उत्पादन की जाने वाली वस्तु के बाजार की तलाश की जाए जो कि स्थायी हो. भौतिक वातावरण जैसे विद्युत आपूर्ति, जल प्रदाय आदि का अनुकूल होना आवश्यक है. सामाजिक एवं सांस्कृतिक

वातावरण भी उत्पादन हेतु उपयुक्त होना चाहिए. इसके साथ ही स्थानीय स्तर पर किसानों के संघ बनाकर की गयी संविदा अधिक प्रभावी एवं सफल हो सकती है.

संविदा खेती की चुनौतियां :

चूँकि संविदा खेती एक नवीन अवधारणा है, अतएव यह स्वभाविक है कि इसके लागू किये जाने में कुछ चुनौतियां भी हैं. कंपनियां एवं किसान दोनों ही मूल्य में बड़े परिवर्तन होने पर संविदा का उल्लंघन करते हैं. मूल्य कम होने पर कुछ कंपनियां किसानों को गुणवत्ता की कमी बताकर माल लेने से इन्कार कर देती हैं. सीमांत किसानों को इसका लाभ नहीं मिलता; क्योंकि वे अधिक जोखिम उठाने में समर्थ नहीं होते. देश में 85 प्रतिशत किसान लघु अथवा सीमांत श्रेणी के हैं.

जो भी हो, चुनौतियां ऐसी नहीं हैं, जिनका समाधान संभव न हो. आवश्यकता है जागरुकता एवं ईमानदार प्रयासों की. कृषक सहकारी संघों का गठन करके स्वयं को सशक्त बना सकते हैं. इस हेतु यह भी आवश्यक है कि अनुबंध स्पष्ट एवं सरल भाषा में लिखे जाएं. वित्तीय संस्थानों को चाहिए कि वे वित्त पोषण में जो भी सुविधाएं प्रदान कर सकते हों, करें.

भावी संभावनाएं

भारतीय कृषि कई समस्याओं से जूझ रही है. कृषि में मानव संसाधन का आधिक्य है, किंतु लाभार्जन कम है. सिंचाई की अपर्याप्तता खेती को अधिक जोखिम पूर्ण बना रही है. कठिनाई के इस दौर में, जबकि हमें कृषि उपज में वृद्धि की आवश्यकता है, संविदा खेती महत्वपूर्ण सुअवसर के रूप में हमारे सामने है. कंपनियों द्वारा कृषि आधारित उद्योगों के लगाए जाने तथा विपणन में मानव संसाधन की मांग किये जाने पर पढ़े-लिखे कृषक परिवार के युवाओं के लिए इससे रोजगार के नये अवसर प्राप्त होंगे, तो वहीं मूल्य संबंधी निश्चिंतता के चलते किसान उत्पादन पर भरपूर ध्यान दे सकेंगे. कंपनियों द्वारा सिंचाई क्षेत्र में निवेश किये जाने से छोटे एवं मझोले किसान भी सभी प्रकार की फसलों के उत्पादन की चुनौतियों को स्वीकार करेंगे. नकदी फसलों के उत्पादन को बढ़ावा मिलने से कृषकों का जीवन आसान एवं खुशहाल बनेगा. वैश्विक संविदा खेती के सफल हो जाने पर हमारे अंतर्राष्ट्रीय संबंध मजबूत होंगे.

अर्पित जैन, प्रबंधक (राजभाषा), स्टाफ प्रशिक्षण केन्द्र, भोपाल

हृषिकेश मिश्र

कृषि ऋण एवं जोखिम प्रबंधन

ऋग्वेद में कहा गया है, "कृषि मूलश्च जीवनम्" अर्थात कृषि ही जीवन का मूल है जो एक शाश्वत सत्य है. कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है एवं इसमें यह एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है. मानव जीवन की बुनियादी एवं मौलिक जरूरतों यथा रोटी, कपड़ा और मकान की पूर्ति के साथ-साथ रोजगार सृजन एवं देश के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि एवं इससे सम्बद्ध क्रियाकलापों (जैसे पशुपालन, कृषि वानिकी आदि) का बहुत बड़ा योगदान है. यद्यपि देश के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक ढाँचे में इसकी निर्णायक भूमिका उक्त मानक के परे है. हमारे देश का कृषि उत्पादन करोड़ों लघु एवं सीमांत कृषकों पर निर्भर करता है तथा ग्रामीण आबादी के 60 प्रतिशत से अधिक लोगों को यह आजीविका प्रदान करती है.

वित्तीय समायोजन के उद्देश्य से विभिन्न नीतिगत उपायों के बावजूद किसानों के लिए अपर्याप्त वित्तीय संसाधन एवं उपयुक्त जोखिम प्रबंधन साधन की अनुपलब्धता कृषि उत्पादन के विकास में सबसे बड़ी बाधा है. जैसाकि हम जानते हैं कि भारतीय कृषि प्रमुख रूप से मानसून पर निर्भर है. मौसम की अनिश्चितता तथा बाजार एवं अर्थव्यवस्था के कई कारक कृषि संबंधी गतिविधियों के लिए एक बहुत बड़े चुनौती के साथ-साथ जोखिमपूर्ण भी हैं. इस प्रकार कृषि संबंधी गतिविधियों की सफलता में जोखिम प्रबंधन सर्वोपरि है, जिसके बिना इसके लाभकारी होने की कल्पना तक नहीं की जा सकती.

जोखिम प्रबंधन

जोखिम प्रबंधन किसी भी व्यवसाय का एक अभिन्न अंग है, जिससे कोई भी गतिविधि अछूती नहीं है. जोखिम प्रबंधन एक सुनियोजित प्रक्रिया है, जिसका तात्पर्य व्यवसाय में होने वाले जोखिम को पहचानना, उसके होने या न होने की संभावना का मूल्यांकन करना तथा उससे होने वाली क्षति को सुनिश्चित करना, जोखिम लेना या इससे बचने का निर्णय लेना, जोखिम का मूल्य निर्धारण, इसकी निगरानी करना, जोखिम नियंत्रण एवं जोखिम कम करना आदि है.

जीवन का हर क्षण एवं हर कदम जोखिम से परिलिप्त है, जिसे नकारा नहीं जा सकता. मानव जाति की कहानी भय एवं अवसर की कहानी है. अवसर है तो इसके लाभ उठाने का भय भी है. भय इस बात का कि हमें इस अवसर को प्राप्त करने में सफलता मिलेगी या नहीं. मानव का यह एक प्राकृतिक स्वभाव है कि वह हर जोखिम को चुनौती देकर उससे मिलने वाले लाभ का आनंद लेता है. इस प्रक्रिया में असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अनगिनत आविष्कार करने में हमने सफलता प्राप्त की है. इस प्रकार जोखिम का किसी भी परिस्थिति में उत्पन्न होने का तात्पर्य है कि यह किसी व्यक्ति को इस बात की चुनौती देता है कि यदि भविष्य में किसी घटना के होने या न होने पर वह इस कार्य को पूरा करेगा अथवा नहीं. खाना, पीना, बोलना, हँसना, यात्रा करना, पैदल चलना आदि व्यक्तिगत कार्य एवं सामाजिक तथा अन्य कार्यों में हम जोखिम महसूस करते हैं कि हमारे द्वारा किया गया कार्य उचित है या नहीं. इतना ही नहीं, कभी-कभी ये हमारे लिए अलाभकारी सिद्ध होते हैं. जोखिम की अवधारणा भविष्य में घटने वाली घटनाओं की अनिश्चितता पर आधारित है तथा जोखिमों के स्तर की गणना उसके परिणामों की संभावनाएं हैं, जो अनिश्चित हैं. प्रत्येक घटना एवं अवस्था जोखिम से जुड़ी हुई है, जिसे पूर्ण रूप से हटाया नहीं जा सकता; परंतु इसे प्रबंध करने के स्तर तक लाया जा सकता है. हम इसके शून्य होने की स्थिति को सोच भी नहीं सकते चाहे व्यक्तिगत जीवन हो या सामाजिक.

जोखिम लेना वित्तीय निर्णय लेने के क्रम में एक संकल्पित कार्रवाई है तथा यह किसी भी वित्तीय निर्णय का अभिन्न अंग है. जोखिम लेने की कार्रवाई निर्णयकर्ता द्वारा विभिन्न विकल्पों के उपलब्ध होने पर उसका सुनियोजित विश्लेषण करने के पश्चात लिया गया निर्णय है.

जोखिम एक ऐसी घटना है, जिसका प्रत्यक्ष प्रतिकूल प्रभाव बैंक की लाभप्रदता एवं प्रतिष्ठा पर कई प्रकार की अनिश्चितताओं के कारण पड़ता है. इस प्रकार हम देखते हैं कि जोखिम हमारी लाभप्रदता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है, इसलिए इसका मूल्यांकन कर भविष्य में संभावित कुपरिणाम से बचने के लिए पूर्व में ही सुनियोजित कदम लेकर इसका उपाय किया जा सकता है.

ऋण जोखिम:

ऋण जोखिम का मतलब उधारकर्ता द्वारा लिए गए ऋण को समय से वापस न करने से है, जो अपनी वचनबद्धता एवं उत्तरदायित्व का निर्वहन नहीं कर पाते हैं. इसे काउंटर पार्टी जोखिम भी कहते हैं. उधारकर्ता के समय पर अपनी वचनवद्धता/ ज़िम्मेदारी पूरी करने में असफल होने की संभावना हमेशा बनी रहती है, जिसके कारण जोखिम एक निश्चित रूप

धारण करता है, यानि कि अर्जक आस्तियां अनर्जक आस्तियों में परिवर्तित हो जाती हैं. अनर्जक आस्तियों में वर्गीकृत होने के पश्चात न केवल ब्याज के रूप में आय का आना बंद हो जाता है; बल्कि बकाया राशियों पर बैंक अन्य आस्तियों द्वारा अर्जित ब्याज आय से प्रावधान भी करता है. मानक आस्तियों को उनके चूक होने की संभावनाओं का आकलन कर विभिन्न जोखिम वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है एवं तदनुसार बैंकों को पूंजी पर्याप्तता अनुपात भी बनाए रखना पड़ता है.

कृषि जोखिम प्रबंधन :

कृषि प्रबंधन की सफलता की कुंजी एकमात्र जोखिम प्रबंधन है. विभिन्न प्रकार का जोखिम एवं अनिश्चितता कृषि तथा कृषि आपूर्ति शृंखला में सर्वव्यापी है. यहाँ तक कि आधुनिक कृषि भी प्रकृति एवं जलवायु के प्रकोप से अछूती नहीं है. यह कृषि के अनेक कारकों पर निर्भरता का परिणाम है, जिसमें मुख्य रूप से मौसम की अनियमितता, जैविक प्रक्रियाओं की अप्रत्याशित प्रकृति, मौसमी उत्पादन एवं बाजार चक्र तथा घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खाद्य एवं कृषि क्षेत्रों की अनोखी एवं अनिश्चित राजनीतिक अर्थव्यवस्था सम्मिलित है. यही किसानों के दिन-प्रतिदिन के जीवन की वास्तविकता है. मौसम की स्थिति में मामूली परिवर्तन भी कृषि उत्पादन को गंभीरता से प्रभावित कर सकता है. यद्यपि इन कृषि जोखिमों का कुप्रभाव केवल किसानों तक ही सीमित नहीं है. कंपनी एवं सेवा उद्योग जो किसानों को आपूर्ति करते हैं, खाद्य प्रसंस्करण तथा संचालन एवं क्रियान्वयन कंपनियाँ, जो फार्म से बाजार में कृषि उत्पाद की आपूर्ति करती हैं तथा अंततः उपभोगकर्ता ग्राहक, सभी इन जोखिमों के परिणाम को वहन करते हैं.

इन जोखिमों को प्रभावी रूप से कम करने हेतु कृषि प्रबंधकों को समग्र जोखिम प्रबंधन हेतु इसके लिए उपलब्ध जरूरी उपकरण एवं ज्ञान के द्वारा एकीकृत पद्धति को विकसित करने की आवश्यकता है. आज के चुनौतीपूर्ण कृषि वातावरण में फार्म जोखिम संसाधन इन जोखिमों को सफलतापूर्वक प्रबंध करने हेतु एक महत्वपूर्ण औज़ार है.

व्यापार/ व्यावसायिक जोखिम:

व्यापार/ व्यावसायिक जोखिम, जिसे अल्पकालिक अथवा परिचालन जोखिम में वर्गीकृत किया जा सकता है, आस्ति प्रतिफल को प्रभावित करता है; जिसमें लागत, मूल्य तथा उत्पादकता शामिल है. इस तरह इसके प्रबंधन हेतु स्पष्ट दृष्टिकोण, परिणाम पर कम-से-कम प्रभाव तथा इसके होने की संभावना को कम करके व्यापार जोखिम अपेक्षाकृत आसानी से प्रबंध किया जा सकता है. कृषि में व्यापार जोखिम की सात मुख्य श्रेणियाँ हैं, जो इस प्रकार है:

1. उत्पादन: मौसम, रोग/ बीमारी/ विनाशकारी कीट, फार्म नुकसान
2. मूल्य/ बाजार: कमतर प्रीमियम, अधिक लागत मूल्य आदि
3. आकस्मिक आपदा: सूखा, बाढ़, आग, चोरी, प्राकृतिक प्रकोप आदि
4. तकनीकी: निष्पादन विफलता, जीर्ण-शीर्ण मशीनों का उपयोग आदि
5. संबंध: भू-स्वामी, ऋणदाता, आपूर्तिकर्ता, खरीददार, ग्राहक आदि
6. कानूनी/नियामक: नियामक दिशा-निर्देश, संविदा नियमों एवं अन्य क़ानूनों का अनुपालन न करना
7. मानव संसाधन: प्रबंधकों एवं मजदूरों का खराब निष्पादन तथा इसकी उपलब्धता एवं अनुपलब्धता.

कृषि व्यापार जोखिम प्रबंधन

समुचित सावधानी तथा इसका पूर्वानुमान कर एहतियाती कदम लेने पर उपयुक्त जोखिमों को काफी हद तक कम किया जा सकता है. किसानों/ कृषि प्रबंधकों द्वारा निम्नलिखित उपायों को अपनाकर व्यावसायिक जोखिमों का प्रभावी प्रबंध किया जा सकता है, जिससे अधिकतम लाभ की प्राप्ति एवं साथ ही नुकसान को काफी हद तक कम किया जा सकता है:

- समेकित कृषि
- कृषि यंत्रीकरण
- मूलभूत संरचनाओं का विकास

- आधुनिक एवं अद्यतन तकनीक
- कृषि विविधीकरण
- कृषि उत्पाद प्रसंस्करण
- संविदा खेती
- वायदा अनुबंध
- जल प्रबंधन
- आपदा प्रबंधन

कृषि ऋण जोखिम प्रबंधन

आज का कारोबारी माहौल पहले से कहीं अधिक अशांत है. प्रत्येक बैंक लाभप्रदता को बनाए रखने के लिए प्रतिस्पर्धा की कड़ी चुनौती से जूझ रहा है. ऐसे में जोखिमों का आकलन कर इसका उचित प्रबंधन एवं सुनियोजित जोखिम लेकर ही लाभप्रदता को बरकरार रखा जा सकता है. जोखिम कम करना जोखिम प्रबंधन का सबसे महत्वपूर्ण कदम है. ऋण जोखिम कम करने के उपाय से यह तात्पर्य है कि बैंक द्वारा वितरित ऋण की सही समय पर वापसी को सुनिश्चित करना. ऋण जोखिम कम करने के अनेक उपाय हैं जो निम्नलिखित हैं-

अ) **अपने ग्राहक को जानिए (केवाईसी):** जब हम किसी ग्राहक का खाता खोलते हैं, तो बैंक के साथ उनके सम्बन्धों की शुरुआत करते हैं जो कि जीवनपर्यंत रहते हैं. साथ ही, उनके द्वारा दिया गया संदर्भ बैंक के व्यवसाय को बढ़ाता है. यदि ग्राहक की सम्पूर्ण जानकारी बैंक के पास है, तो हम शीघ्रता से निर्णय ले सकते हैं तथा जोखिम का मूल्यांकन कर उपाय पहले ही किया जा सकता है.

आ) **समुचित सावधानी (ड्यू डिलिजेन्स):** जोखिम कम करने हेतु सबसे पहले यह जानना अधिक महत्वपूर्ण है कि कोई भी निर्णय लेते समय उस गतिविधि में सन्निहित जोखिम का प्रकार एवं परिमाण क्या है. उचित तत्परता से हमें इस बात की विस्तृत जानकारी एवं सूचना उपलब्ध हो जाती है. तदनुसार जोखिम कम करने हेतु अनुकूलतम उपाय किया जा सकता है. यदि हम आरंभ में ही तत्परता के साथ उधारकर्ता एवं उचित परियोजनाओं का चयन करते हैं, जिससे इसके अनर्जक आस्तियों में वर्गीकृत होने की संभावनाएं कम हो जाती है, तो स्वतः ही हमारा जोखिम कम हो जाता है. अतः जोखिम कम करने का सर्वश्रेष्ठ उपाय

समुचित सावधानी ही है, जो एक निरंतर प्रक्रिया है.

इ) **तृतीय पक्ष जमानत:** ऋण प्रदान करते समय उधारकर्ता से अपेक्षा की जाती है कि कोई तीसरा व्यक्ति उसके द्वारा लिए जा रहे ऋण की ज़िम्मेदारी ले, जिसका साधन कम से कम ऋण राशि के बराबर हो; ताकि उधारकर्ता द्वारा ऋण वापसी में चूक होने पर जमानतकर्त्ता से वसूला जा सके.

ई) **संपार्श्विक प्रतिभूति:** बैंक ऋण से सृजित आस्ति के अलावा जो आस्तियां उधारकर्ता द्वारा बंधक की जाती हैं, उन्हें संपार्श्विक प्रतिभूति कहा जाता है, जो बैंक अपने नियम एवं शर्तों के अनुसार ऋण स्वीकृत करते समय अपेक्षा करता है. बैंक जमा रसीद, पोस्ट ऑफिस जमा, एलआईसी बीमा तथा जमीन एवं मकान आदि प्रतिभूति के रूप में बन्धक की जा सकती है, जो ऋण किश्त में चूक होने के उपरांत इसका उपयोग उधारकर्ता द्वारा चूक हुई ऋण किश्त की वसूली हेतु किया जाता है.

उ) **बीमा:** जोखिम कम करने का सबसे बड़ा उपाय जोखिम को अंतरित करना है. संपत्ति एवं जीवन बीमा की पॉलिसी लेने से भविष्य की सभी जोखिम अनिश्चितताओं का अंतरण बीमा कंपनी पर कर दिया जाता है. कृषि फसल का भी बीमा होता है.

ऊ) **ऋण विस्तार:** जिस प्रकार एक टोकरी में सभी अंडे नहीं रखे जा सकते, उसी प्रकार से बैंक ऋण भी किसी खास क्षेत्र या भौगोलिक भाग में संकेंद्रित नहीं किया जा सकता; अन्यथा केन्द्रीकृत जोखिम (concentration risk) होने से भारी क्षति हो सकती है. अत: जोखिम कम करने का एक सशक्त उपाय यह है कि बैंक का निवेश विभिन्न क्षेत्रों, उधारकर्ताओं एवं भौगोलिक क्षेत्रों में हो, ताकि किसी खास तरह के जोखिम को कम किया जा सके. इसे जोखिम विविधीकरण कहते हैं.

ऋ) **ऋण का नवीनीकरण एवं पुनरीक्षण:** ऋण का पुनरीक्षण, नवीनीकरण एवं आस्तियों का निरीक्षण भी जोखिम को कम करता है. यदि किसी भी इकाई का कार्य-निष्पादन अच्छा नहीं है तो इसका निराकरण समय से किया जा सकता है तथा जिस इकाई का कार्य-निष्पादन अच्छा है, वह उदाहरण के रूप में काम करती है एवं इसके प्रसार तथा अन्य जरूरतों हेतु मदद की जा सकती है.

ऌ) **ऋण वितरण पूर्व दस्तावेज़ जाँचना:** दस्तावेजीकरण ऋण वितरण करने का एक ठोस प्रमाण एवं उधारकर्ता के साथ संविदा पत्र है, जिसके आधार पर हम उधारकर्ता से किश्त में चूक होने पर पैसे वसूल करने के लिए विधिक कार्रवाई कर सकते हैं. उपयुक्त दस्तावेज़ एवं लगने वाले स्टांप ड्यूटी ऋण वितरण से पूर्व

वकील या विधि की जांच अधिकारी द्वारा की जाती है, जो जोखिम कम करने का एक महत्वपूर्ण उपाय है.

ऍ) **समयबद्ध ऋण वितरण:** कृषि संबंधी क्रिया-कलापों में खासकर समय का बहुत बड़ा महत्व है. यदि समय पर फसल की बुवाई, सिंचाई, कटाई आदि न हो, तो इससे इनके उत्पादन में भारी नुकसान हो सकता है. इसलिए यह कहा भी गया है कि "का वर्षा जब कृषि सुखाने". अतः ऋण वितरण की प्रक्रिया में तेजी लाकर समय से वितरण करने से ऋण जोखिमों को काफी हद तक कम किया जा सकता है. सही समय पर सही निर्णय तथा इसका त्वरित कार्यान्वयन जोखिम प्रबंधन का मूल मंत्र है.

ऐ) **तकनीकी सलाह:** नियमों, प्रौद्योगिकियों, ब्याज दरों, बाजार तथा प्रतिस्पर्धाओं आदि के लगातार परिवर्तन होने के अप्रत्याशित परिणाम हो सकते हैं. अतः किसानों को समय पर समुचित तकनीकी सलाह देना बैंकों के लिए अधिक महत्वपूर्ण हो गया है, जिससे भविष्य में होने वाले जोखिमों का पूर्वानुमान कर उनसे निपटने हेतु एकाधिक लचीली रणनीति बनाई जा सके; ताकि कम-से-कम नुकसान हो सके.

ए) **निगरानी:** ऋण की निगरानी एक सतत प्रक्रिया है, जहां ऋण की प्रक्रिया के शुरू होने के पूर्व, ऋण वितरण एवं इसके पश्चात निरंतर इसका अवलोकन तथा निरीक्षण करना सबके हित में होगा. इस प्रकार पहले से ही सावधानी बरतना अच्छा होता है. आस्तियों एवं उधारकर्ताओं पर सतत निगरानी रखकर इनकी गुणवत्ता बनाए रखने के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सकता है. किसी भी मानक आस्ति को अवमानक की श्रेणी में वर्गीकृत होने के पहले उसके द्वारा दिये गए चेतावनी संकेत को पहचान कर तदनुसार समय रहते सुधारात्मक कार्रवाई करने से उसकी गुणवत्ता को बरकरार रखा जा सकता है. "वक्त का एक टाँका बेवक्त के सौ टाँकों से बढ़कर है".

जोखिम के बिना कोई भी कार्य संभव नहीं है; परंतु पर्याप्त एहतियाती कदम लेकर इसके परिमाण एवं इससे होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है. इसमें व्याप्त जोखिमों को पहचानकर तथा आवश्यकतानुसार विवेकपूर्ण दृष्टिकोण अपनाकर उपलब्ध उचित जोखिम प्रबंधन उपकरणों द्वारा इसका प्रबंध किया जा सकता है, जो निश्चित ही वित्तीय संस्थानों के जोखिमों को काफी हद तक कम करने में सहायक होगा. इस प्रकार हम देखते हैं कि बैंक अपनी दूरदर्शिता के द्वारा भविष्य की अनिश्चितताओं को महसूस कर उसके अनुसार जोखिम कम करने के उपाय कर इसके भयंकर परिणाम से बच सकता है तथा न केवल बैंक अपनी लाभप्रदता को बनाए रख सकता है; बल्कि करोड़ों

किसानों को लाभान्वित कर सकता है.

कृषि एक जोखिम भरा कारोबार है. इसलिए इस क्षेत्र में ऋण प्रवाह अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा वास्तविक आवश्यकता से कम रहा है.

अत: जरूरत इस बात की है कि कृषि उत्पादन हेतु समय पर ऋण की उपलब्धता योजनाबद्ध तरीके से की जाए; ताकि कृषि व्यवसाय से संबन्धित पूर्वानुमानित समस्त जोखिमों को एक लाभकारी अवसर में परिवर्तित किया जा सके. यह तभी संभव है, जब कोई भी क्रियाकलाप सोची-समझी एवं लचीली रणनीति अपनाकर किया जाय. बैंकों एवं अन्य वित्तीय संस्थानों द्वारा किसानों के लिए आसान शर्तों पर ऋण वितरण एवं सक्षम जोखिम प्रबंधन अपनाकर कृषि कार्यों को सबसे अधिक लाभकारी अवसर में परिवर्तित किया जा सकता है. इस प्रकार नई पीढ़ियों/ युवाओं को आकर्षित कर सकल घरेलू उत्पाद में कृषि के योगदान को और भी अधिक बढ़ाया जा सकता है एवं भारतीय अर्थव्यवस्था को उच्चतम शिखर तक पहुंचाया जा सकता है.

जोखिम न लेना किसी भी व्यवसाय का सबसे बड़ा जोखिम है. लेकिन एक सोची-समझी एवं सुविचारित जोखिमों का परिणाम अद्वितीय हो सकता है. सही समय पर एक बेहतर विकल्प हेतु सही निर्णय के साथ-साथ त्वरित कार्यान्वयन के द्वारा कृषि कार्य में सन्निहित अधिकतम जोखिम को अधिकतम लाभ में परिवर्तित किया जा सकता है. जाहिर सी बात है, यदि आप योजना बनाने में विफल हैं तो आप विफलता की योजना बना रहे हैं.

"बिना विचारे जो करे, सो पाछे पछताय"

हृषिकेश मिश्र, सहायक महाप्रबंधक, कारोबार प्रक्रिया परिवर्तन विभाग,केंद्रीय कार्यालय, मुंबई

सुशांत त्रिवेदी

कृषि क्षेत्र में भारत सरकार की नवीनतम पहल

भारत में कुछ विसंगतियों के बावजूद यदि कृषि की उन्नत स्थिति बनी हुई है, तो इसके पीछे भारतीय कृषि की विशेषताओं एवं भारत सरकार द्वारा इस क्षेत्र में किये गए प्रयासों का ही योगदान है. हमारी इस कृषि संस्कृति से प्रभावित होकर ही संभवतः कविवर मैथिलीशरण गुप्त ने इन पंक्तियों का सृजन किया है -

बरसा रहा है रवि अनल भूतल तवा-सा-जल रहा
है चल रहा सन-सन पवन तन से पसीना ढल रहा
तब भी कृषक मैदान में करते निरंतर काम हैं
किस स्वार्थ के हित वे अहो लेते नहीं विश्राम हैं ?

पिछले दो-ढाई वर्षों के दौरान सरकार ने इस क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया है, जिसके फलस्वरूप भारतीय कृषि ने नवीनता एवं रचनात्मकता के नये प्रतिमानों को छुआ है.

मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन के लिए राज्यों को आवंटित धनराशि में पिछले दो वर्षों के दौरान 12 गुणा वृद्धि की गयी है. वर्ष 2014-16 के दौरान स्वीकृत की गयी परीक्षण प्रयोगशालाओं की संख्या 12 गुना अधिक, 30000 सैंप्लर एवं 10000 तकनीशियनों के लिए रोजगार की संभावनाओं का सृजन किया गया.

जैविक खेती को प्रोत्साहित करने के लिए एक केंद्र प्रायोजित वृहद स्कीम परंपरागत कृषि विकास योजना शुरू की गयी. इसे 20 हेक्टेयर के समूह आधार पर क्रियान्वित किया जा रहा है. हाल ही में सिक्किम राज्य को भारत का पहला जैविक राज्य घोषित किया गया है. उत्तर-पूर्वी क्षेत्र के लिए जैविक मूल्य शृंखला विकास मिशन की शुरुआत जनवरी 2016 में की गयी. इसके तहत उत्तर-पूर्वी राज्यों को 112 करोड़ रुपये आवंटित किये गए. इसके अंतर्गत मसाले, फल, सब्जियां, अनाज एवं पौध-रोपण को प्रोत्साहित किया गया.

देश में चल रही फसल बीमा योजनाओं के क्रियान्वयन में आने वाली खामियों को दूर कर एवं अन्य उद्देश्यों हेतु प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना वर्ष 2016 से पूरे देश में लागू की गयी, जिसकी मुख्य बातें निम्न हैं-

- ❖ सभी खाद्य, तिलहन व वार्षिक वाणिज्यिक/ बागवानी फसलें शामिल व सभी किसानों के लिए उपलब्ध.
- ❖ किसानों के लिए एक मौसम- एक दर खरीफ में अधिकतम 2%, रबी में अधिकतम 1.5% व वार्षिक वाणिज्यिक/ वार्षिक बागवानी फसलें अधिकतम 5%.
- ❖ फसल उपज के सभी जोखिमों- फसल बुआई के पूर्व, खड़ी फसल तथा फसल कटाई के बाद के जोखिम शामिल.
- ❖ फसल कटाई से अधिकतम 14 दिन की अवधि में चक्रवात/ वर्षा एवं बेमौसम बारिश के विशेष खतरों के कारण हुए फसल नुकसान की क्षतिपूर्ति.
- ❖ मध्य मौसम में आई प्राकृतिक आपदा के कारण संरक्षित बुआई के लिए बीमित राशि का 25% तक अग्रिम भुगतान.

राष्ट्रीय कृषि बाज़ार योजना का अनुमोदन 1 जुलाई, 2015 को 200 करोड़ के आवंटन के साथ हुआ, जिसके अंतर्गत 3 वर्ष की अवधि में 585 नियमित थोक मंडियों को एक ई-प्लेटफ़ार्म से जोड़ा जाना है. 12 राज्यों/ संघ राज्य क्षेत्रों में 365 प्रस्तावित मंडियों में हार्डवेयर लगवाने तथा सॉफ्टवेर आदि के भुगतान के लिए 160 करोड़ अनुमोदित किया गया है.

किसानों की आय को बढ़ाने एवं जलवायु संतुलन बनाए रखने हेतु राष्ट्रीय कृषि वानिकी नीति अपनाई गयी. "हर मेड़ पर पेड" लगाने के उद्देश्य से पूर्णतया समर्पित "कृषि वानिकी की राष्ट्रीय परियोजना" का शुभारंभ किया जाना है. इसके लिए 75 करोड़ रुपये केन्द्रीय भागीदारी का प्रावधान रखा गया है.

पहली बार वर्तमान सरकार ने किसानों की मदद के लिए मोबाइल एप्प सेवाओं का शुभारंभ किया है. मार्च 2016 में पहली बार आयोजित कृषि उन्नति मेले के दौरान किसान सुविधा एवं पूसा कृषि एप्प का आरंभ किया गया. ये एप्प किसानों को पूसा द्वारा विकसित नवीन तकनीकों, मौसम, फसल बीमा और बाज़ार कीमतों के बारे में जानकारी देंगे. यह मेला भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में आयोजित किया गया. देश के सभी ब्लॉक से एक लाख से भी अधिक किसानों की सहभागिता रही. वेब कास्टिंग के माध्यम से देश के सभी जिलों के बहुत सारे किसानों को लाभ हुआ.

पूर्वी भारत में हरित क्रांति योजना के अंतर्गत चावल उत्पादक क्षेत्रों में दलहन

फसल को प्रोत्साहित किया जा रहा है. ग्रीष्मकालीन मूंग की खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है. चावल के खेतों की मेड़ पर अरहर की खेती को प्रोत्साहित किया जा रहा है. 500 से अधिक कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा फसल प्रदर्शन किया जा रहा है. कृषि विज्ञान केन्द्रों में 150 सीड हब बनाना है. राज्य कृषि विश्वविद्यालयों में जैव-उर्वरक एवं बायो एजेंट यूनिट्स की स्थापना की जा रही है.

देशी नस्लों के विकास और संरक्षण पर वैज्ञानिक विधि को अपनाना व सम्पूर्ण रूप से बजट आवंटन में समग्र बढ़ोत्तरी करना इस सरकार का लक्ष्य है जिसके फलस्वरूप पिछले 2 वर्षों के दौरान कृषि के लिए 13 गुना अधिक बजट का आवंटन किया गया है. देश में दो नए राष्ट्रीय कामधेनु प्रजनन केंद्र (मध्य प्रदेश व आंध्र प्रदेश में) स्थापित किए जा रहे हैं जिसके लिए 50 करोड़ की राशि जारी की गयी. देश में पहली बार देशी नस्लों के विकास व संरक्षण हेतु 14 गोकुल ग्रामों की स्थापना की गयी. दूध के विपणन की अलग से व्यवस्था करने के लिए ओड़िशा एवं कर्नाटक राज्य को फ़ंड स्वीकृत किया गया है.

दूध उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए सरकार द्वारा निम्न योजनाओं को शुरू किया जा रहा है-

(a) **पशुधन संजीवनी** - यह एक पशु स्वास्थ्य कार्यक्रम है. इसके निम्न भाग हैं- (1) पशु स्वास्थ्य कार्ड (नकुल स्वास्थ्य पत्र), (2) यूनिक पहचान संख्या (आधार), (3) राष्ट्रीय डाटाबेस

(b) **उन्नत प्रजनन प्रौद्योगिकी** - इस योजना का उद्देश्य रोगमुक्त मादा गौ नस्लों की उपलब्धता को बढ़ाना एवं उन्नत बनाना है.

(c) **ई-पशुधन हाट का निर्माण** - देशी गौ नस्लों के प्रजनकों एवं किसानों को जोड़ने एवं गौ जर्मप्लाज्म के लिए ई-मार्केट की स्थापना की जाएगी.

(d) **राष्ट्रीय जेनॉमिक केंद्र** - तीव्र आनुवांशिक उन्नयन के जरिये देशी नस्लों के दूध उत्पादन व उत्पादकता को बढ़ाने के लिए राष्ट्रीय जेनॉमिक केंद्र की स्थापना की जाएगी.

पहली बार सभी जिलों एवं पशुओं को पशुधन बीमा योजना के अंतर्गत शामिल किया गया है. पशुधन बीमा के विस्तार व कवरेज को 300 जिलों से बढ़ाकर सभी जिलों में लागू कर दिया गया. इसे 2 दुधारू पशुओं से बढ़ाकर 5 दुधारू पशुओं या 50 छोटे पशुओं तक कर दिया गया है.

व्यवसाय करने में आसानी के अंतर्गत पहलों में दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, चेन्नई,

हैदराबाद व बेंगलुरु के सभी 6 पशु संगरोध व प्रमाणन सेवा केन्द्रों द्वारा पशुधन व पशुधन उत्पादों की ऑनलाइन निकासी के लिए एकल खिड़की प्रणाली का क्रियान्वयन किया गया है. अप्रैल 2016 में पशुधन उत्पादों के आयात के लिए एस.आई.पी. आवेदनों की ऑन-लाइन प्राप्ति व कार्रवाई हेतु सैनिटरी आयात परमिट वेबसाइट की शुरुआत की गयी.

कृषि शिक्षा सुदृढ़ीकरण के क्षेत्र में केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय इम्फ़ाल के अंतर्गत 6 नए कॉलेजों की स्थापना की जा रही है. रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय के तहत बुंदेलखंड में 4 नए कॉलेज स्थापित किए जा रहे हैं. डॉ. राजेंद्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय बिहार के अंतर्गत 4 नए कॉलेज स्थापित किए जा रहे हैं.

किसानों की आय दोगुनी करने की दिशा में कृषि विज्ञान केन्द्रों की रिमॉडलिंग की जा रही है. इस दिशा में भारत सरकार द्वारा नवीन पहल निम्न है-

- **मेरा गाँव मेरा गौरव** - भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद व कृषि विश्वविद्यालय द्वारा 10000 से भी अधिक गावों को अपनाया गया है, जिनमें वैज्ञानिकों की टीम द्वारा कृषि एवं सम्बद्ध उद्यमों पर किसानों को परामर्श एवं इनपुट्स की सुविधा दी जा रही है.

- **फार्मर फ़र्स्ट** - इस योजना में वर्ष 2016-17 में 1 लाख किसान परिवारों को जोड़ा जाएगा, जो संस्थानों व कृषि विश्वविद्यालयों के वैज्ञानिकों से चर्चा करेंगे.

दालों की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए प्रमुख दालों पर 475 कृषि विज्ञान केन्द्रों को शामिल करते हुए बड़ी संख्या में अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन प्रारम्भ किए गए हैं. तिलहनों की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए प्रमुख तिलहनों पर 300 कृषि विज्ञान केन्द्रों को शामिल करते हुए बड़ी संख्या में अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन प्रारम्भ किए गए.

- **दलहन बीज हब** - (अ) दलहन केन्द्रों की स्थापना भागीदारी विधि से ICAR संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालय व कृषि विज्ञान केन्द्रों के सहयोग से की जाएगी, (ब) प्रत्येक केंद्र से 1000 क्विंटल दलहन का उत्पादन किया जाएगा, (स) प्रत्येक दलहन केंद्र मूल गुणवत्तायुक्त बीज मुहैया कराएगा और इन्हें पड़ोसी किसानों के लिए उपलब्ध कराएगा.

कृषि विज्ञान केन्द्रों को अधिक प्रभावी और दक्ष बनाने के लिए ज़ोनल परियोजना निदेशालयों को कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग व अनुसंधान संस्थान के रूप में विकसित किया गया है. इनकी संख्या को 8 से बढ़ाकर 11 किया गया है. किसानों के खेत तक नई प्रौद्योगिकी को पहुंचाने के लिए कृषि विज्ञान केन्द्रों की संख्या बढ़ायी जा रही है. हर बड़े/

पर्वतीय जिले में दो कृषि विज्ञान केन्द्रों को खोलने की योजना है. सूखा, बाढ़, कोहरा, तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाओं से किसानों की आजीविका सुरक्षा हेतु जिला स्तर पर नई आकस्मिक योजनाएँ विकसित की गयी हैं. विभिन्न राज्यों के 91 सूखा संवेदनशील जिलों के लिए फसल परामर्श सेवा केन्द्रों की स्थापना की गयी है.

एक नयी पहल के तहत किसानों एवं युवाओं को नयी प्रौद्योगिकी की ओर आकर्षित कर उद्यमशीलता प्रोत्साहन हेतु बिज़नेस इंकुबेटर सुविधा प्रदान की गयी है. पहली बार त्वरित एवं संतुलित उर्वरक, संस्तुति जनक मृदा परीक्षक का विकास किया गया है. यह जीपीएसयुक्त आई.टी. आधारित एसएमएस द्वारा परिणाम प्रेक्षण सुविधा है. सॉइल हेल्थ कार्ड के अनुसार 12 मापदण्डों की जांच की जाएगी.

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के अंतर्गत चावल, गेहूं एवं दलहन फसलों के अलावा मोटे अनाज, गन्ना, जूट एवं कपास को शामिल किया गया है. सभी राज्यों को इस मिशन के अंतर्गत शामिल कर लिया गया है. फार्म मशीनरी ट्रेनिंग एवं टेस्टिंग संस्थानों और राज्य कृषि विभागों द्वारा कृषि मशीनीकरण के उपमिशन के अंतर्गत प्रशिक्षित प्रशिक्षुओं की संख्या में वृद्धि की गयी है.

सरकार द्वारा आपदा राहत मानकों में भी परिवर्तन किया गया है. सभी श्रेणी के मानकों में 1.5 गुना की वृद्धि की गई है. पहले फसलों में 50% हानि होने पर ही राहत दी जाती थी, जिसे घटाकर 33% कर दिया गया है. सभी मामलों में सहायता की स्वीकार्यता 1 हेक्टेयर से बढ़ाकर 2 हेक्टेयर कर दिया गया है. क्षतिग्रस्त अनाज की खरीद पर अब बिना किसी कटौती के पूरे समर्थन मूल्य का भुगतान करने की व्यवस्था की गयी है. प्राकृतिक आपदाओं में मृतक किसान परिवार को दी जाने वाली सहायता राशि को 1.5 लाख से बढ़ाकर 4 लाख कर दिया गया है. एसडीआरएफ़ के अंतर्गत 5 वर्षों में आवंटित राशि दोगुनी कर दी गयी है. यह कोष राज्य सरकार को आपदाओं से तुरंत निपटने में सहायता करता है. प्राकृतिक आपदा से प्रभावित व्यक्तियों की त्वरित सहायता के लिए वर्तमान सरकार द्वारा पहली बार 50 करोड़ रुपया के आवंटन के साथ यूटी-डीआरएफ़ . फंड राहत कोष बनाया गया है.

उपयुक्त विवरण से स्पष्ट है कि सरकार द्वारा कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्रों में नवीनतम पहल करने के साथ-साथ कृषि को आधुनिकतम विधि से संचालित करने का प्रयास किया जा रहा है.

सुशांत त्रिवेदी, क्षेत्रीय कार्यालय, इलाहाबाद

श्री बी पी शर्मा

बजट में कृषि विकास हेतु विशेष प्रावधान

2017-18 में गांव, गरीब एवं किसान को समर्पित ऐसा बजट पहली बार आया है. इस बजट से कृषि उन्नति एवं किसान कल्याण का नया अध्याय शुरू हुआ है. इस बार कृषि और सिंचाई के बजट में भारी वृद्धि हुई है. ऐसा पहले कभी नहीं देखने को मिला है. इसलिए इस बार का बजट देश के गांव, गरीब और किसान के विकास की तस्वीर को बदलने वाला साबित होगा. जिस तरह से देश के कुछ भागों में सूखा पड़ा है, उसे देखते हुए बजट का कृषि और गांव पर केन्द्रित होना समय की मांग थी और देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था की मजबूती के लिए यह जरूरी था. इस बजट से न केवल ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़ेंगे, बल्कि अगले पांच वर्षों में किसानों की आमदनी को दोगुना करने का भी लक्ष्य रखा गया है. देश में पहली बार सरकार ने देश के किसानों को आर्थिक रूप से मजबूत बनाने की दिशा में ठोस कदम आगे बढ़ाया है.

कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय के बजटीय प्रावधान से स्पष्ट है कि सरकार की प्रतिबद्धता गाँव, गरीब और किसान है. कृषि और किसान कल्याण के वर्ष 2016-17 में 35,984 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया है. किसानों की आय को आगामी 5 वर्षों में दोगुना करना लक्ष्य है. प्रति इकाई उपज बढ़ाना, किसानों के लिए उनके उत्पादों का उचित मूल्य दिलाना, पशुधन- डेयरी एवं मात्स्यिकी के अलावा कृषि शिक्षा अनुसंधान एवं कृषि विस्तार को बढ़ावा देना सरकार की प्रतिबद्धता है.

- 'प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना' को मिशन मोड में लागू किया जाना है. सिंचाई के अधीन 28.5 लाख हेक्टेयर क्षेत्र लाया जाएगा, जिसके लिए 2016-17 में रू.5717 करोड़ का आवंटन है, जिसमें कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय को 2015-16 के रू.1550 करोड़ के बदले रू.2340 करोड़ आवंटित किए गए हैं, जो 51 प्रतिशत अधिक है. इसके अतिरिक्त इस वर्ष नाबार्ड के माध्यम से लगभग रू.20000 करोड़ का सिंचाई फण्ड सृजित करने का फैसला किया गया है तथा वृहद् एवं मध्यम सिंचाई योजना (एआईबीपी) के तहत 89 सिंचाई परियोजनाओं,जो काफी समय

से अपूर्ण रही हैं, का त्वरित कार्यान्वयन किया जायेगा. इससे 80.6 लाख हेक्टेयर क्षेत्र की सिंचाई करने में सहायता मिलेगी. इसके लिए अगले 5 वर्षों में रू.86,500 करोड़ की आवश्यकता होगी, जिसमें से वर्ष 2016-17 के लिए रू.12517 करोड़ के माध्यम से जल संसाधन मंत्रालय द्वारा 23 योजनाएं पूरी की जाएंगी. साथ ही मनरेगा के तहत वर्षा-पोषित क्षेत्रों में 5 लाख फार्म तालाबों और कुओं की व्यवस्था होगी. नाबार्ड में लगभग रू.20,000 करोड़ की प्रारंभिक निधि से एक समर्पित दीर्घ कालिक सिचाई निधि सृजित की जाएगी. बहु-पक्षीय निधियन के माध्यम से 6,000 करोड़ रुपए की अनुमानित लागत से भूजल संसाधन के सतत प्रबंधन के लिए कार्यक्रम कार्यान्वित किया जाएगा.

कृषि उन्नति योजना -

(ए) **मृदा स्वास्थ्य कार्ड और मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन:** यह ऐसी स्कीम है, जिसमें सरकार विशेष ध्यान दे रही है. इस स्कीम को वर्ष 2015-16 में 142 करोड़ रूपये की तुलना में कुल 362 करोड़ रूपये आवंटित किए गए हैं. यह 155 प्रतिशत की वृद्धि है. मंत्रालय मार्च 2017 तक देश के सभी 14 करोड़ किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड वितरण करने के लक्ष्य को पूरा करने के लिए समर्थ हो जाएगा. साथ ही उर्वरक कम्पनियों के 2 हजार मॉडल खुदरा केन्द्रों को अगले 3 वर्ष में मृदा और बीज परीक्षण सुविधाएं मुहैया करायी जाएंगी. देश के सभी 643 कृषि विज्ञान केन्द्रों, कृषि विश्वविद्यालयों एवं आइसीएआर के संस्थानों में मृदा परिक्षण हेतु मिनी लैब की स्थापना की जा रही है. साथ ही पैक्स (PACS) एवं किसान समूहों को 2000 मिनी लैब की स्थापना हेतु 80 प्रतिशत की सब्सिडी देने का भी निर्णय लिया गया है.

(बी) **उत्तर पूर्वी राज्यों के लिए जैविक मूल्य श्रृंखला:** विकास हेतु तीन वर्षों के लिए 400 करोड़ रूपये का आवंटन वर्ष 2015-16 में हुआ था. यह 125 करोड़ रूपये के आवंटन के साथ वर्ष 2015-16 में शुरू की गयी जैविक कृषि स्कीम को आगे बढ़ाने में सहायता करेगा. शेष 275 करोड़ रूपये अगले वर्ष (2016-17 एवं 2017-18) की परियोजना की आवश्यकता को पूरा करेंगे. साथ ही मनरेगा के तहत जैविक खाद के उत्पादन के लिए 10 लाख कम्पोस्ट गड्ढों का निर्माण किया जाएगा.

(सी) **जैविक खेती के विकास के लिये पारंपरिक कृषि विकास योजना** महत्वपूर्ण है और 297 करोड़ रूपये की केंद्र सरकार के कुल आवंटन के साथ व्यापक जैविक कृषि स्कीम है, जो वर्ष 2015-16 के आवंटन रू.250 करोड़ से 19 प्रतिशत बढ़ी है.

(डी) **समेकित कृषि विपणन स्कीम**- ग्रामीण भण्डारण को बढ़ावा देने हेतु चालू बजट के दौरान अतिरिक्त संसाधन प्रदान किया गया है. आवंटन को वर्ष 2015-16 के

रू.750 करोड़ से बढ़ाकर चालू वर्ष में 788 करोड़ रूपये कर दिया गया है, जो 5 प्रतिशत तक बढ़ा है. थोक बाजार के लिए साझा ई-बाजार की व्यवस्था करने के लिए एकीकृत कृषि विपणन ई-प्लेटफार्म की स्थापना की गई है.

(ई) **राष्ट्रीय कृषि एवं प्रौद्योगिकी मिशन(एनएमएईटी)**- केन्द्र सरकार, राज्य सरकारों को उनकी कृषि विस्तार मशीनरी के सुदृढ़ीकरण करने में सहायता देकर प्रौद्योगिकी के अंतरण को अपेक्षित महत्व दे रही है. कृषि विस्तार मिशन के लिए बजटीय आवंटन वर्ष 2015-16 में रू.598 करोड़ की तुलना में रू.635 करोड़ है, जिसमें 6 प्रतिशत की वृद्धि की गई है. इसके अतिरिक्त अलग से कृषि सूचना प्रणाली के सुदृढ़ीकरण/ संवर्धन के लिए रू.40 करोड़ का आवंटन हुआ है.

(एफ) **राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (एनएफएसएम)**- सरकार विभिन्न फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए वचनबद्ध है और देश की खाद्य सुरक्षा का योगदान बजटीय आवंटन से देखा जा सकता है. वर्ष 2015-16 में 1137 करोड़ रूपये के मुकाबले चालू वर्ष में 1700 करोड़ रूपये का आवंटन है. यह वर्ष के लिए 50 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी है एवं दलहन के लिए 500 करोड़ रूपये की व्यवस्था की गयी है.

(जी) **राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन (एनएमएसए)**- बजटीय आवंटन से स्पष्ट है कि सरकार कृषि को सतत बढ़ावा देने के लिए वचनबद्ध है. एनएमएसए, जिसे वर्ष 2015-16 में 730 करोड़ रूपये का आवंटन किया गया था; अभी इसे 1062 करोड़ रूपये दिए गये हैं, जो 45 प्रतिशत अधिक है.

- **राष्ट्रीय कृषि मंडी (एनएएम)के माध्यम से मंडी सुधार**- सरकार का ऐसा मानना है कि उद्योग जैसे अन्य क्षेत्रों की तुलना में कृषि क्षेत्र में कम सुधार उपाय किये गये हैं. इसलिए सरकार कृषि क्षेत्र में विपणन को अत्यन्त महत्वपूर्ण समझती है और राष्ट्रीय कृषि मंडी की स्थापना के लिए वचनबद्ध है. 12 राज्यों ने एपीएमसी एक्ट में सुधार कर लिया है. पंजाब को छोड़कर सभी राज्यों ने सहमति दे दी है. सरकार द्वारा अप्रैल, 2016 को स्कीम की शुरुआत की गई तथा सितम्बर 2016 तक 200 मंडियों तथा मार्च 2017 तक और 200 मंडियों को इस स्कीम के तहत कवर किया गया; अर्थात मार्च 2017 तक कुल 400 मंडियों को कवर किया गया. मार्च 2018 तक देश में 585 एपीएमसी को कवर करने का लक्ष्य है.

- कृषि क्षेत्र में **ऋण प्रवाह** को बढ़ाकर 9 लाख करोड़ किया गया है, जो 2015-16 में 8.50 लाख करोड़ था.

किसानों पर ऋण अदायगी के बोझ को कम करने के लिए, ब्याज सहायता हेतु बजट अनुमान 2016-17 में 15,000 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है, जो कि

2015-16 में 13,000 करोड़ था.

- **प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना** के तहत आवंटन 5,500 करोड़ रुपये किया गया है, जो पिछले बजट में रू.185 करोड़ था. इस प्रकार इस मद में लगभग 73 प्रतिशत की वृद्धि की गई है.
- **राष्ट्रीय कृषि विकास योजना**, जिसके लिए 2015-16 में रू.3900 करोड़ का प्रावधान था, 2016-17 के बजट में रू.5400 करोड़ का प्रावधान किया गया है. इसमें 38 प्रतिशत की वृद्धि की गयी है.
- **राष्ट्रीय कृषि वानिकी कार्यक्रम** हेतु पहली बार बजट में रू.75 करोड़ के केन्द्रीय अंश का प्रावधान किया गया है, इससे "मेड़ पर पेड़" अभियान को गति मिलेगी.
- **पशुपालन, डेयरी एवं मत्स्यपालन** के लिए वर्ष 2016-17 में रू.1600 करोड़ आवंटित किए गए, जो 2015-16 में 1491 करोड़ रुपये था.
- अलग से चार नई परियोजनाओं- 'पशुधन संजीवनी 'नकुल स्वास्थ्य पत्र', ई-पशुधन हाट और राष्ट्रीय देशी नस्ल जेनोमिक केन्द्र के लिए 850 करोड़ रुपये दिए गए हैं.
- वर्ष 2015-16 में डेयरी/भाकृअप को 5387.95 करोड़ रूपये के कुल वित्तीय संसाधन प्रदान किए गए जबकि वर्ष 2016-17 में इसमें पिछले वर्ष की तुलना में लगभग 17 प्रतिशत वृद्धि के साथ 6309.89 करोड़ रूपये के वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराये गए. जिससे शिक्षा, अनुसंधान एवं कृषि विस्तार को गति मिलेगी.
- कृषि विज्ञान केन्द्रों की प्रभावशीलता और प्रदर्शन में सुधार लाने के लिए 50 लाख रूपये की कुल पुरस्कार राशि के साथ 643 कृषि विज्ञान केन्द्रों के बीच एक राष्ट्रीय स्तर की प्रतियोगिता आयोजित की जाएगी.

गांव एवं किसान हित की अन्य योजनाएं

- प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के अंतर्गत आवंटन बढ़ाकर 19,000 करोड़ रुपये कर दिया गया है, जो विगत वर्षों में जारी की गई राशि का लगभग दोगुना है. वर्ष 2019 तक शेष 65,000 पात्र बस्तियों को सड़कों से जोड़ा जाएगा.
- सूखाग्रस्त और ग्रामीण आपदा से ग्रस्त प्रत्येक ब्लॉक दीनदयाल अन्त्योदय मिशन के तहत विशिष्ट ब्लॉक के रूप में काम करेंगे. इस योजना में सरकार द्वारा सघन रूप से स्वयं सहायता समूह का गठन किया जाएगा, जिन्हें विभिन्न विधाओं में प्रशिक्षण (Training) दिया जाएगा. साथ ही मनरेगा के

तहत क्लस्टर सुविधा टीमों का भी गठन किया जाएगा, जो जल संरक्षण और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंध को सुनिश्चित करेगी. इन जिलों को प्रधान मंत्री कृषि सिंचाई योजना के तहत भी प्राथमिकता दी जाएगी.

- गांवों में आधारभूत संरचना के विकास के लिए श्यामा प्रसाद मुखर्जी मिशन की शुरुआत. इसके तहत 300 ग्रामीण शहरी क्लस्टरों का विकास किया जाएगा, जिसमें किसानों के लिए आधारभूत संरचना जैसे कृषि प्रसंस्करण, कृषि बाजार को सुलभ कराना, गोदाम एवं वेयर-हाउसों को बनाना है. इसके अतिरिक्त इन ग्रामों में स्वच्छता अभियान, पाइप-जलापूर्ति, ठोस और तरल जल प्रबंधन, गली-नालियों का, शैक्षणिक संस्थाओं का सुदृढ़ीकरण एवं अन्य गांवों से अंतर-ग्रामीण सम्पर्क का विकास, सड़क सुविधा, एलपीजी गैस के कनेक्शन एवं मोबाइल हेल्थ यूनिट के माध्यम से स्वास्थ्य सुविधाओं को भी इन गांवों तक पहुंचाया जाएगा.
- 1 मई, 2018 तक 100 प्रतिशत ग्राम विद्युतीकरण.
- 655 करोड़ रुपये के आवंटन के साथ राष्ट्रीय ग्राम स्वराज अभियान नामक एक नई योजना.
- अस्पताल व्यय से बचाव के लिए स्वास्थ्य बीमा स्कीम. नई स्वास्थ्य सुरक्षा स्कीम प्रत्येक परिवार को एक लाख रूपये तक स्वास्थ्य बीमा प्रदान करेगी. इसके तहत वरिष्ठ नागरिकों को 30,000 रुपये तक अतिरिक्त टॉप-अप पैकेज का प्रावधान होगा.
- बीपीएल परिवारों के लिए रसोई गैस कनेक्शन सुविधा. इसके लिए इस बजट में 2000 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है. वर्ष 2016-17 में लगभग 1 करोड़ 50 लाख बीपीएल परिवारों को लाभ मिला.
- आधार मंच को सांविधिक समर्थन प्रदान करना, जिससे पात्र लोगों तक लाभों की पहुंच सुनिश्चित की जा सके.
- वर्ष 2016-17 में मनरेगा के लिए 38,500 करोड़ रुपये की राशि का आवंटन किया गया.
- अनुसूचित जाति,जनजाति तथा महिलाओं के बीच उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए केन्द्रीय मंत्रिमंडल ने स्टैंड अप इंडिया स्कीम को मंजूरी दी है. इस परियोजना के लिए 500 करोड़ रुपये उपलब्ध कराए गए हैं.
- प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना के जरिए उद्यमिता को युवाओं के दरवाजे पर

लाना चाहते हैं. देश भर में 15,000 बहु-कौशल प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना करने का निर्णय लिया है. इन कार्यक्रमों के लिए 17000 करोड़ रुपये की राशि अलग रखी जा रही है.

- वर्ष 2016-17 में सड़कों और रेलवे संबंधी कुल खर्च 2,18,000 करोड़ रुपये होगा.
- प्रधानमंत्री की जन औषधि योजना के अंतर्गत वर्ष 2016-17 में जेनरिक दवाओं की आपूर्ति करने के लिए 3,000 स्टोर खोले जाएंगे.
- अल्पसंख्यकों के कल्याण तथा कौशल विकास के लिए 'उस्ताद' स्कीम का कारगर कार्यान्वयन किया गया है.
- शिक्षा क्षेत्र की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए 62 नए नवोदय विद्यालय खोले जा रहे हैं.
- डॉ. बी.आर. अम्बेडकर की 125वीं जयंती के इस वर्ष में उद्योग संघों के साथ भागीदारी करके सूक्ष्म, लघु, मध्यम उद्योग मंत्रालय में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति-जनजाति केन्द्र बनाये गए हैं.
- छोटे कामगारों के लिए प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के माध्यम से 1 लाख 80 हजार करोड़ रुपये के ऋण देने का लक्ष्य है. पिछले वर्ष के बजट में इस योजना में 1 लाख करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया था.

हम निश्चित ही कह सकते हैं कि यह बजट देश के गाँव व किसान की तस्वीर-तकदीर बदलने वाला बजट है, जो कृषि के विकास में सहायक होगा.

श्री बी पी शर्मा, मुख्य प्रबंधक, स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र, भोपाल

प्रभात कुमार अम्बष्ट

कृषि एवं सहायक गतिविधियां एक दूसरे की पूरक- मत्स्यपालन, कुक्कुटपालन, मधुमक्खी पालन

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसकी अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है. कृषि भारत के लिए कितना महत्वपूर्ण है, इसका अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि भारत के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान अभी भी 17% है. यह भी ज्ञात हो कि भारत में लगभग 70% जनसंख्या ग्रामीण है, जिसका मुख्य पेशा कृषि है. यहाँ कृषि से हमारा तात्पर्य केवल फसल के उत्पादन से नहीं है; बल्कि इसके अंतर्गत पशुपालन, मत्स्यपालन, कुक्कुटपालन एवं मधुमक्खीपालन जैसी सहायक गतिविधियां भी शामिल हैं. जहां एक ओर किसान फसल पैदाकर अपनी जीविका चलाते हैं; वहीं दूसरी ओर भूमिहीन और छोटे तथा सीमांत किसान पशुपालन को अपनी आय के स्त्रोत के रूप में अपनाते हैं. इस व्यवसाय से अर्धशहरी, पर्वतीय, जनजातीय और सूखे की आशंका वाले क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को सहायक रोजगार मिलता है, जहां केवल फसल की उपज से ही परिवार का गुज़र बसर नहीं हो सकता.

मत्स्यपालन

मछली जलीय पर्यावरण पर आधारित जलीय जीव है तथा जलीय पर्यावरण को संतुलित रखने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है. यदि पानी में मछली न हो, तो पानी की जल जैविक स्थिति सामान्य नहीं होगी. वैज्ञानिकों द्वारा मछली को जल पर्यावरण का जीवन सूचक बताया जाता है. अत: पर्यावरण को संतुलित रखने में मछली की विशेष उपयोगिता है. जैसाकि आज हम लोग जानते हैं कि भूमि आधारित कृषि, भूमि की सीमित उपलब्धता के कारण सीमित है, जिसका एक दुष्परिणाम कुपोषण भी है. ऐसे में मत्स्यपालन कुपोषण से निजात दिलाने में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है; क्योंकि मछली प्रोटीन का एक बहुत अच्छा स्त्रोत है, जिसका सेवन कैंसर जैसी बीमारी से भी बचाता है. मछली के मांस की उपयोगिता सर्वत्र देखी जा सकती है, जैसे मीठे पानी की मछली में वसा बहुत कम पाया जाता है और यह मधुमेंह तथा रक्तचाप के रोगियों के लिए उपयुक्त होती है. मछली बहुतायत में जलीय पौधों को ऑक्सीजन प्रदान करती है, जिससे जल पर्यावरण संचालित

होता है. मछलियाँ जल में रहने वाले दूसरे और हानिकारक जीव जन्तुओं को खाकर पानी को शुद्ध भी करती हैं.

इसके अतिरिक्त मत्स्यपालन एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है, जिसमें कम पूंजी की आवश्यकता होती है. इस कारण इस उद्योग को आसानी से शुरू किया जा सकता है. मत्स्य उद्योग से जहां एक ओर खाद्य समस्या सुधरेगी, वहीं दूसरी ओर विदेशी मुद्रा अर्जित होगी, जिससे अर्थव्यवस्था भी सुधरेगी. आंकड़ों की मानें, तो मत्स्यपालन से देश में 11 लाख से अधिक लोगों को रोजगार मिला है.

पालने की विधि

मछली हेतु तालाब की तैयारी बरसात के पूर्व ही कर लेना उपयुक्त रहता है. मछली पालन सभी प्रकार के छोटे-बड़े मौसमी तथा बारहमासी तालाबों में किया जा सकता है. तालाब में मत्स्य बीज़ डालने से पहले इस बात की परख कर लेनी चाहिए कि उस तालाब में प्रचुर मात्र में मछली का प्राकृतिक आहार (प्लेंकटान) उपलब्ध है. सामान्यत: तालाब में उपलब्ध भोजन के समुचित उपयोग हेतु कतला मछली सतह पर, रोहू मछली मध्य में तथा म्रिगल मछली तालाब के तल में उपलब्ध भोजन ग्रहण करती है. पालने योग्य देशी प्रमुख मछलियों (कतला, रोहू, म्रिगल) के अलावा कुछ विदेशी प्रजाति की मछलियाँ (ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प, कॉमन कार्प आदि) भी आजकल बहुतायत में संचय की जाने लगी हैं. मछली पालकों को प्रति माह जाल चलाकर संचित मछलियों की वृद्धि का निरीक्षण करते रहना चाहिए, जिससे मछलियों को दिये जाने वाले परिपूरक आहार की मात्रा निर्धारित करने में आसानी होगी तथा संचित मछलियों की वृद्धि दर ज्ञात हो सकेगी. यदि कोई बीमारी दिखे तो फौरन उपचार करना चाहिए.

कुक्कुट पालन

मांस अथवा अंडे की प्राप्ति के लिए मुर्गी, टर्की, बत्तख आदि जानवरों को पालना कुक्कुटपालन कहलाता है. भारत के हर क्षेत्र में मतस्यपालन संभव न होने के कारण कुक्कुटपालन कृषि की एक बहुत महत्वपूर्ण गतिविधि मानी जाती है. कृषि में मददगार कुक्कुटपालन को चलाने के लिए ज्यादा मेहनत नहीं लगती. उचित माहौल मिलने पर 20 दिन में किसी मुर्गे का औसत वज़न एक किलोग्राम बढ़ जाता है. इनके मांस प्रोटीन से भरपूर होते हैं और ग्रामीणों को कुपोषण से बचाने में बहुत महत्वपूर्ण साबित होते हैं. इसके पालन में आने वाले व्यय की भरपाई पांचवें महीने में मुर्गा बेचकर हो जाती है. मुर्गों का मल वरमी कम्पोस्ट बनाने में बहुत उपयोगी होता है, जिसका इस्तेमाल किसान खाद के रूप में करते हैं. लगभग 40 मुर्गियों के विष्टा से उतना ही पोषक तत्व प्राप्त होता है, जितना कि एक गाय के गोबर से. अंडे में प्रोटीन प्रचूर मात्रा में पायी जाती है. सेहत के साथ-साथ आर्थिक दृष्टिकोण से भी इसका बहुत महत्व है. ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे स्तर पर मुर्गी पालन से अतिरिक्त आय प्राप्त होती है. इसके अतिरिक्त मुर्गीपालन भारत में 8 से 10 प्रतिशत

वार्षिक औसत विकास दर के साथ कृषि क्षेत्र का तेज़ी के साथ विकसित हो रहा एक प्रमुख हिस्सा है. परिणामस्वरूप भारत अब विश्व का तीसरा सबसे बड़ा अंडा उत्पादक तथा चिकन मांस में 5वां बड़ा उत्पादक देश है.

पालने की विधि

मुर्गी पाल कर अंडे बेचने के लिए लेयर मुर्गियाँ पालनी होती हैं. लेयर मुर्गियाँ चार- पाँच महीने में अंडे देना प्रारम्भ कर देती हैं और उसके बाद लगभग 11-12 महीने तक अंडे देती हैं. अत: लेयर मुर्गियाँ पालने के लिए hatchery से स्वस्थ चूजों का चयन करना चाहिए, जिससे अंडे उत्पादन में वृद्धि हो सके. चिकन का उत्पाद मांस के रूप में करने के लिए ब्रायलर मुर्गियों का पालन किया जाता हैं; क्योंकि ब्रायलर मुर्गियाँ मांस हेतु जल्दी तैयार होती हैं. ब्रायलर मुर्गियाँ पालने के लिए मुर्गियों को प्रोटीन और कैलोरी वाला खाना अधिक मात्रा में दिया जाता है, जो उनका वजन बढ़ाने में सहायक होते हैं. चूजों को फार्म में रखने से पहले फार्म की सफाई पर अधिक ध्यान दिया जाता है. ब्रायलर मुर्गियाँ, लेयर मुर्गियों के मुक़ाबले ज्यादा खाना तथा पानी पीती है. इसलिए समय- समय पर उचित मात्रा में खाना और ताजा शुद्ध पानी देना पड़ता है. ब्रायलर मुर्गियाँ, मुर्गियों के किसी भी रोग से जल्दी प्रभावित हो जाती हैं. अत: इनके स्वास्थ का विशेष ध्यान रखना चाहिए.

कुक्कुटपालन हमारे देश में लगभग 30 लाख से अधिक लोगों को रोजगार उपलब्ध कराता है. अत: इस व्यवसाय में रोजगार के अवसरों के सृजन की व्यापक संभावनाएं हैं. अप्रत्यक्ष रूप से भी कुक्कुट विज्ञान में रोजगार के बहुत अवसर हैं. इसमें कोई व्यक्ति अनुसंधान, शिक्षा, बिजनेस, कंसल्टेंट, प्रबंधक, प्रजनक, विज्ञापक, कुक्कुट हाउस डिज़ाइनर, उत्पादन प्रौद्योगिकी, फीडिंग प्रौद्योगिकी, कुक्कुट अर्थशास्त्री आदि का विकल्प चुन सकता है.

मधुमक्खी पालन

मधुमक्खी पालन कृषि से ही जुड़ा एक व्यवसाय है, जिसमें कम लागत और अधिक मुनाफा है. मधुमक्खी पालन एक लघु व्यवसाय है, जिससे शहद एवं मोम प्राप्त होता है. यह एक ऐसा व्यवसाय है, जो ग्रामीण क्षेत्रों के विकास का पर्याय बनता जा रहा है. गौर करने वाली बात है कि शहद उत्पादन के मामले में भारत पांचवे नंबर पर है.

शहद न केवल एक स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ है; बल्कि कई बीमारियों को होने से रोकता है और इतना ही नहीं, हमारे मानव समाज की बीमारी से प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ाता है. यह कृषि का एक बहुत अच्छा विकल्प है, जो आर्थिक सहायता तो प्रदान करता ही है; साथ ही सेहत के लिए भी बहुत उपयोगी होता है. मधु परागकण आदि की प्राप्ति के लिए मधुमक्खियाँ पाली जाती हैं. यह एक कृषि आधारित उद्योग है. बाज़ार में शहद और इसके उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण मधुमक्खी पालन अब एक लाभदायक और

आकर्षक उद्यम के रूप में स्थापित हो रहा है. मधुमक्खीपालन के उत्पाद, शहद और मोम आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं. मधुमक्खियाँ पुष्प रस की खोज में एक फूल से दूसरे फूल पर बैठती हैं और पराग से लिपटी हुई वह फूलों को प्रजनन में काफी कारगर होती हैं. बगैर अतिरिक्त खाद, बीज़, सिचाई प्रबंध के मधुमक्खी के मौन वंश को फसल के खेतों व मेंढ़ों पर रखने से मधुमक्खियों के पर परागण प्रक्रिया से फसल, सब्जी एवं फलोद्यान में उपज में सवा से डेढ़ गुना बढ़ोत्तरी होती है. जिन फसलों तथा वृक्षों पर परागण कीटों द्वारा सम्पन्न होता है,मधुमक्खियों की उपस्थिति में उनकी पैदावार में बेतहाशा वृद्धि होती है. विभिन्न सर्वेक्षणों के अनुसार वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया है कि मधुमक्खियाँ यदि एक रुपया का लाभ मधुमक्खी पालक को पहुंचाती हैं, तो उनसे 15-20 रुपए का लाभ उन काश्तकारों व बागवानों को मिलता है, जिनके खेतों या बागों में वे परागण व मधु संग्रहण के लिए वे जाती हैं. मधुमक्खी थिरैपी (BEE THEREPY) से असाध्य रोगों का इलाज़ किया जाता है.

पालने की विधि

इस व्यवसाय के लिए चार तरह की मधुमक्खियाँ इस्तेमाल होती हैं. ये हैं- एपिस मेंलिफेरा, एपिस इंडिका, एपिस डोरसाला और एपिस फ्लोरिया. इस व्यवसाय के लिए एपीएस मेंलिफेरा मक्खियाँ ही अधिक शहद उत्पादन करने वाली और स्वभाव की शांत होती हैं. इन्हें डिब्बों में आसानी से पाला जा सकता है. इस प्रजाति की रानी मक्खी में अंडे देने की क्षमता भी अधिक होती है. मधुमक्खी पालन के लिए लकड़ी के बाक्स, बाक्सफ्रेम, मुंह पर ढकने के लिए जालीदार कवर, दास्ताने, चाकू, शहद, रिमूविंग मशीन, शहद इकट्ठा करने के लिए ड्रम आदि की आवश्यकता होती है. जहां मधुमक्खियाँ पाली जाएँ, उसके आस-पास की जमीन साफ-सुथरी होनी चाहिए. मधुमक्खी पालन के लिए जनवरी से मार्च तक का समय सबसे उपयुक्त है, लेकिन नवम्बर से फ़रवरी का समय तो इस व्यवसाय के लिए वरदान है.

इस उद्योग के लिए सरकार ने राष्ट्रीयकृत बैंकों से ऋण सुविधा उपलब्ध कराई है. इस व्यवसाय के लिए 2 से 5 लाख रुपए तक के ऋण की सुविधा उपलब्ध है. यह उद्योग लघु उद्योग श्रेणी के अंतर्गत आता है .

बाज़ार में शहद और इसके उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण मधुमक्खी पालन अब एक लाभदायक और आकर्षक उद्यम के रूप में स्थापित हो चला है .

अत: कृषि एवं उसकी सहायक गतिविधियां एक दूसरे की पूरक हैं तथा हर गतिविधि का अपना महत्व है, जो मनुष्य के शरीर के पोषण तथा निर्माण में संतुलित आहार की पूर्ति करता है. आर्थिक दृष्टिकोण से भी यह बहुत महत्वपूर्ण हैं तथा देश में आय का एक बड़ा स्रोत है.

प्रभात कुमार अम्बष्ट, वरिष्ठ प्रबंधक, मासंवि, केन्द्रीय कार्यालय, मुंबई

लुक़मान अली खान

पशुपालन- ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक आधार

भारतवर्ष एक कृषि प्रधान देश है. भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 65% कृषि एवं सहायक क्रियाओं पर निर्भर करता है. कृषि योग्य भूमि का लगभग 35% सिंचित तथा शेष भूमि असिंचित होने के कारण केवल खरीफ की फसल ही की जा सकती है. विडम्बना यह है कि कभी अतिवृष्टि और कभी अनावृष्टि के कारण भारतीय किसान के लिए एक फसल लेना भी संभव नहीं होता है. परिवारों में वृद्धि के परिणाम स्वरूप भूमि के विभाजन एवं बँटवारे के कारण जोत का आकार इतना छोटा होता गया कि कृषि एक अनार्थिक क्रिया होती जा रही है. ऐसे समय में पशुपालन भारतीय किसान के लिए वरदान साबित होता है.

मानवता के विकास के साथ सदियों से मानव पशुधन का उपयोग विभिन्न उद्देश्यों यथा दुग्ध उत्पादन, मांस, ऊन, अंडे एवं चमड़े के लिए करता रहा है. इसके अतिरिक्त पशुधन की विभिन्न जातियों का उपयोग मनोरंजन, खेलकूद, सुरक्षा, शोध एवं साथ-साथ रहने (companion) हेतु किया जाता है. पशुधन क्षेत्र ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं ग्रामीण जनसंख्या के रोजी- रोटी अर्जन में महत्वपूर्ण योगदान करता है.

पशुधन क्षेत्र भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कल्याण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है. ग्रामीण जनबल के काफी बड़े हिस्से को रोजगार के अवसर प्रदान करता है. 19वीं पशुधन गणना के अनुसार विश्व के कुल पशुधन का लगभग 11.6% भारत वर्ष में है. पशुधन एवं मत्स्य क्षेत्र का सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में योगदान क्रमशः 4.1% एवं 0.80% है, कृषि एवं सहायक क्रियाओं का सकल घरेलू उत्पाद में योगदान 15.1% है. कृषि क्षेत्र के सकल घरेलू उत्पाद में पशुधन क्षेत्र का योगदान लगभग 4% है. विदेशी मुद्रा अर्जन में पशुधन क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान रहा है. डेयरी, मत्स्य, ऊन, पॉल्ट्री अन्य उत्पादों का निर्यात प्रमुख है. 11वीं पंचवर्षीय योजना 2007-12 के अनुसार पशुधन क्षेत्र देश की 8% श्रम-शक्ति को रोजगार प्रदान करता है, जिसमें लघु एवं सीमांत कृषक, महिलाएं तथा भूमिहीन कृषि श्रमिक सम्मिलित हैं.

योगदान एवं सरकारी प्रयास :

पशुधन की विभिन्न श्रेणियों का आकलन करें तो हमें इस प्रकार स्थिति प्राप्त होगी? वित्त बजट 2017-18 की प्राथमिकताओं में कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र, सामाजिक क्षेत्र को प्राथमिकता क्षेत्र में रखा गया है. समाज के कृषक वर्ग हेतु प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना प्रारम्भ की गई है. कृषि एवं कृषकों के कल्याण हेतु रु.35,954 करोड़ का प्रावधान किया गया है. प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना को मिशन के तौर पर लागू किया गया है. इस योजना के माध्यम से 28.5 लाख हेक्टर भूमि को सिंचाई सुविधा प्रदान की जाएगी. चार डेयरी प्रोजेक्ट क्रमश: पशुधन संजीवनी, नकुल स्वास्थ्य पात्र, ई-पशुधन हाट तथा घरेलू नस्ल के पशुओं हेतु नेशनल जेनॉमिक सेंटर के लिए रु.850 करोड़ का प्रावधान किया गया है. पशुधन एवं मत्स्य पालन का सकल घरेलू उत्पाद में योगदान क्रमश- 4.1% एवं 0.80% रहा है. 12वीं पंचवर्षीय योजना 2012-17 के अनुसार पशुधन एवं डेयरी कार्यकारी रिपोर्ट के अनुसार पशुधन क्षेत्र की वृद्धि में निरंतर गिरावट आई है. इसके उपरांत भी वृद्धि दर फसल क्षेत्र की वृद्धि दर की तुलना में 1½ गुना रही है. पशुधन स्वास्थ्य में वृद्धि हुई है तथा पशु-विद्यालयों की संख्या में वृद्धि की गई है.

- **अंडा उत्पादन** की वार्षिक वृद्धि दर 5% है. अंडा समग्र पोषण के स्त्रोतों में से एक है तथा आवश्यक विटामिन व खनिज से भरपूर है. भारत वर्ष में कुल अंडा उत्पादन का 84% मुर्गियों से, 6% बतख और शेष अन्य से प्राप्त होता है. प्रति व्यक्ति उपलब्धता प्रतिवर्ष 65 अंडे तक पहुँच गई है. दूध पोषण का प्राकृतिक स्त्रोत होता है. अत: प्रोटीन की आवश्यकता को पूर्ण करता है. आईएमसीआर की सिफ़ारिश के अनुसार 365 अंडे प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति आवश्यकता के सापेक्ष तमिलनाडु में अंडों की उपलब्धता 336, आंध्र में 261, लक्षदीप में 289, हरियाणा में 168 तथा अंडमान निकोबार आइलैंड में 165 है.

- **मांस उत्पादन:** आईएमसीआर की सिफ़ारिशों के अनुसार प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 30 ग्राम एमआईटी आवश्यकता के सापेक्ष भारतवर्ष में वर्तमान उपलब्धता 15 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन है. लगभग 45% मांस उत्पादन की आवश्यकता पॉल्ट्री द्वारा की जाती है. शेष 5% आवश्यकता की पूर्ति भैस, बकरी, सुअर, भेड़ एवं अन्य पशुधन द्वारा की जाती है. उत्तर प्रदेश भारतवर्ष में मांस उत्पादन करने वाला सबसे बड़ा राज्य है. आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र और तमिलनाडु राज्य भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं.

- **ऊन उत्पादन:** कुल ऊन उत्पादन का 71% रेम्म (ram) द्वारा, 25% इव (eve) द्वारा और शेष 4% भेड़ द्वारा प्राप्त किया जाता है. राजस्थान अधिकतम ऊन

उत्पादन वाला राज्य है. कर्नाटक, जम्मू- कश्मीर, आंध्र प्रदेश और गुजरात ऊन उत्पादन में अहम भूमिका निभाते हैं.

- **दूध उत्पादन :** डेयरी लघु एवं सीमांत कृषिकों तथा कृषि श्रमिकों के लिए अनुपूरक आय का साधन है. परिवार बढ़ने से भूमि के बँटवारे के परिणाम स्वरूप प्रति परिवार कृषि भूमि का हिस्सा बहुत कम होने के कारण अनार्थिक तथा कृषि कार्य मौसमी होने के कारण परिवारों में छुपी हुई बेरोजगारी की समस्या होती है. भारतवर्ष में पिछले दो दशकों में दूध उत्पादन स्थिर रहा है, जबकि जनसंख्या में 2% वृद्धि हुई है. अत: मांग एवं आपूर्ति का अंतर बढ़ा है. योजना आयोग के अनुसार वर्ष 2021-22 तक भारत वर्ष में दूध की मांग 182 मिलियन होने का अनुमान है. वर्तमान में भारतवर्ष विश्व में दुग्ध उत्पादन (132.4 मिलियन) में प्रथम स्थान पर है. लगभग 30 मिलियन लोग दुग्ध उत्पादन में लगे हुए हैं, जो अधिकतम एक या दो गाय/ भैंस पालते हैं. इस क्षेत्र द्वारा प्रदान की जाने वाली जैविक खाद फसल उत्पादन का महत्वपूर्ण पोषक है. पशुधन का गोबर ग्रामीण क्षेत्रों में ईधन के रूप में प्रयोग किया जाता है.

- पशुधन गरीब ग्रामीणों के लिए बीमे के विकल्प के रूप में भी कार्य करता है. बुरे समय में किसान इसे बेचकर पैसा प्राप्त कर सकता है. भारत की 512 मिलियन पशुधन संख्या में भैंस- बकरी एवं गायें प्रमुख हैं. गुजरात, उत्तर प्रदेश, असम, पंजाब, बिहार, सिक्किम, मेघालय एवं छतीसगढ़ में पशुधन संख्या में वृद्धि हुई है.

- यह तथ्य भी महत्वपूर्ण है कि मुर्गियों की संख्या में वृद्धि पशुधन संख्या की अपेक्षा अधिक हुई है. विभिन्न शोधों के अनुसार पशु आहार उत्पाद की मांग आय की वृद्धि के साथ बढ़ती है. अत: हमारे देश के लिए अंतर्राष्ट्रीय बाजार में अपनी सहभागिता बढ़ने का अच्छा अवसर है.

- दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, चेन्नई हैदराबाद और बंगलूरु के सभी छह पशु संगरोध और प्रमाणन सेवा केन्द्रों द्वारा पशुधन और पशुधन उत्पादों की ऑन-लाइन निकासी के लिए एकल खिड़की प्रणाली का कार्यान्वयन.

- 27.04.2016 को पशुधन उत्पादों के आयात के लिए एसआईपी आवेदकों की ऑन लाइन प्राप्ति और कार्यवाही हेतु सेनिटरी आयात परमिट (एसआईपी) वेबसाइट की शुरुआत.

- दुग्ध उत्पादन में भारत का प्रथम स्थान तथा विश्व दुग्ध उत्पादन में 17% का योगदान है. दूध की प्रति व्यक्ति उपलब्धता (ग्राम/ दिन) विश्व में 296

और भारत में 340 ग्राम है. देशी नस्लों के विकास एवं संरक्षण के लिए अनुमोदित निधि रु. 582.9 करोड़ है. देश में 2 नये राष्ट्रीय कामधेनु प्रजनन केंद्र स्थापित किये जा रहे हैं, जिसके लिए रु.50 करोड़ की राशि जारी की जा रही है. देश में पहली बार राष्ट्रीय गोकुल मिशन के अंतर्गत देशी नस्लों के विकास एवं संरक्षण हेतु 14 गोकुल ग्रामों की स्थापना की गई है. राष्ट्रीय जीनोमिक केंद्र- पहली बार सभी जिलों और पशुओं को पशुधन बीमा योजना के अंतर्गत शामिल किया गया है.

अधिकतम पशुधन संख्या वाले राज्य और भारत में पशुधन उत्पाद

अधिकतम पशुधन संख्या वाले राज्य		अधिकतम पशुधन संख्या वाले राज्यों में विभिन्न पशुधन उत्पाद	
पशु	राज्य	उत्पाद	राज्य
भैंस	उत्तर प्रदेश	गाय का दूध	देशी-उत्तर प्रदेश क्रास ब्रीड- तमिलनाडु
दुधारू गाय और बैल	देशी- मध्य प्रदेश क्रास ब्रीड- तमिलनाडु	भैंस का दूध	उत्तर प्रदेश
भेड़	आंध्र प्रदेश	बकरी का दूध	राजस्थान
बकरी	राजस्थान	कुल दूध	उत्तर प्रदेश
सुअर	असम	भैंस और सुअर का मांस	उत्तर प्रदेश
घोड़ा और पोनी	उत्तर प्रदेश	भेड़ और पॉल्ट्री मांस	आंध्र प्रदेश
खच्चर	जम्मू और कश्मीर	बकरी का मांस	पश्चिम बंगाल
याक	जम्मू और कश्मीर	कुल मांस	उत्तर प्रदेश
मिथुन	अरुणाचल प्रदेश	पक्षी के अंडे	आंध्र प्रदेश
गधा	राजस्थान	बत्तख के अंडे	पश्चिम बंगाल
ऊंट	राजस्थान	कुल अंडे	आंध्र प्रदेश
कुल पशुधन	उत्तर प्रदेश	भेड़ ऊन	राजस्थान
पक्षी का मांस	आंध्र प्रदेश	भेड़ ऊन	आंध्र प्रदेश
बत्तख	असम	मेमना ऊन	गुजरात
कुल कुक्कुट	आंध्र प्रदेश	कुल ऊन	राजस्थान

बीएएचएस, भारत सरकार (2014)

मद	मूल्य (मिलियन रु. में) 2012-13 में, वर्तमान दरों पर)	कुल मूल्य का प्रतिशत (%)
दूध और दूध के उत्पाद	3496720	65.05
मांस और मांस उद्योग से उपोत्पाद	1066050	19.83
अंडे	202510	3.77
ऊन और बाल	5280	0.10
गोबर	372340	6.93
सिल्क कीट कुक्कू तथा शहद	52320	0.97
स्टॉक में वृद्धि	180150	3.35
कुल	**5375370**	**100.00**

- **पशुधन वित्तपोषण योजनाएँ :**

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया डेयरी, पॉल्ट्री, मत्स्य पालन एवं बकरी पालन हेतु वित्तीयन सहायता प्रदान करता है. पशुधन वित्त पोषण हेतु बैंक की विभिन्न योजनाएँ हैं? बैंक द्वारा कॉमर्शियल डेयरी प्रोजेक्ट्स के लिए पोषण हेतु विशेष योजना बनाई गई है. इस योजना के तहत डेयरी फार्मों/ डेयरी ऑपरेटरों को कठिनाई रहित (Hassle free) ऋण उचित समय पर पर्याप्त वित्त पोषण हेतु रु.5.00 लाख से रु.1.00 करोड़ का सस्ती दर पर उपलब्ध कराया जाता है.

पात्रता:

(अ) कृषक, स्वयं सहायता समूह, कृषक समूह

(ब) वर्तमान डेयरी मालिकों को मिल्क यूनियन/ सहकारी समितियों/ बड़ी डेयरी से प्राप्य राशि के बदले वित्त पोषण

उद्देश्य:

- पशुधन खरीद हेतु तथा कार्यशील पूँजी हेतु.
- शेड निर्माण/ उपकरण खरीद/ कुंआ/ बोरवेल खुदवाने हेतु
- पानी की टंकी/ बायोगैस/ गोबर गैस हेतु
- चिलिंग एवं पाश्चराइजिंग यूनिट हेतु

पुनर्भुगतान : 84 माह

पशुधन क्षेत्र की समस्याएं: पशुधन सदियों से फसल उत्पादन का पूरक उद्यम रहा है. भारतवर्ष के 79 मिलियन हाउस होल्ड की सामाजिक एवं आर्थिक दशा में सम्पूर्ण बदलाव लाने हेतु कई तकनीकों एवं सामाजिक इनोवेशन (नवोन्मेष) किये गये हैं. इनमें नये वेटेनरी संस्थानों की स्थापना तथा एक्सटेंशन कर्मियों द्वारा की जाने वाली गतिविधियां और ली जाने वाली जिम्मेदारियों के माध्यम से पशुधन उद्योग को लाभप्रद बनाया जा सकता है. इसके साथ ही नए तरह के भागीदारों का उदय हुआ है, जो अर्धशहरी और शहरी क्षेत्र की आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास करते हैं. साथ ही भूमिहीन ग्रामीण व परिवारों में पशुपालन गतिविधियों में भी बदलाव आया है.

पशुधन व्यवसाय की अपनी कई चुनौतियाँ है (यथा स्वच्छ दुग्ध उत्पादन, उन्नत पशु नस्ल, टीकाकरण, डेयरी फार्म वेस्ट का उपयोग एवं निपटान, पशुओं की उत्पादकता पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव, पशुधन बीमारियाँ) जो कि उनकी उत्पादकता और लाभप्रदता को प्रभावित करती हैं. इन चुनौतियों का तत्काल समाधान करना आवश्यक है. इस हेतु शिक्षित ग्रामीण युवक एवं युवतियों को डेयरी फ़ार्मिंग के लिए उत्साहित किया जा सकता है. पशुधन के क्षेत्र में हुए तकनीकी बदलाव, नवोन्मेष तथा प्रसार तरीकों को विभिन्न स्टेकधारकों की आवश्यकता के अनुसार बनाया जाना चाहिए.

भारत की अधिकांश जनसंख्या प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से पशुधन पर निर्भर करती है. कृषि क्षेत्र का सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में योगदान 17.4% है. पशुधन का योगदान 4.4% और जनसंख्या निर्भरता 48.9% है. पशुधन गरीब कृषक के लिए दूध, ऊन और मांस के उत्पादन में सहायक होता है. सिकुड़ती कृषि भूमि जोत, असंगठित पशुधन क्षेत्र, विश्वसनीय सूचना केंद्र की कमी, नई तकनीकों के प्रति कृषकों का अविश्वास, विभिन्न क्षेत्रों जैसे- बीमा, बैंकिंग, टीकाकरण, मार्केटिंग एवं स्वच्छता के बारे में ज्ञान का अभाव.

पशुपालन अपनाये जाने पर ग्रामीण परिवारों के रोजगार की तलाश में शहरी क्षेत्रों को पलायन को रोका जा सकता है.

हाल ही के वर्षों में कृषि एवं सहायक क्रियाओं का क्षेत्र चुनौतियों भरा रहा है. यद्यपि हमारे देश में अन्न उत्पादन में वृद्धि हुई है और खाद्य संरक्षण में कामयाबी हासिल हुई है. इसके बावजूद यह क्षेत्र कम उत्पादकता, मानसून एवं मौसम पर अत्याधिक निर्भरता एवं भूमि विभाजन के कारण छोटी जोत का शिकार रहा है. इन सभी कारणों के स्वरूप कृषक समाज, विपत्ति का शिकार रहा है. इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए सरकार ने एक नई सोच पैदा की है. सरकार कृषि के साथ-साथ कृषक के कल्याण पर ध्यान केन्द्रित करने लगी है.

निष्कर्ष:

पशुधन, लघु एवं सीमांत कृषकों के जीवनयापन का महत्वपूर्ण साधन होता है, जो उनकी सकल आय का 16% योगदान करता है. गुजरात में यह प्रतिशत 24.40%, हरियाणा 24.2%, पंजाब में 20.2%, बिहार में 18.7% है. पशुधन विदेशी मुद्रा अर्जन का महत्वपूर्ण साधन भी है. मांस एवं मांस के अन्य उत्पाद निर्यात किये जाने वाले मुख्य उत्पाद हैं. ब्राज़ील एवं यूएसए के बाद भारत सबसे बड़ा मांस निर्यातक देश है. भविष्य में भारत द्वारा पशुधन निर्यात की संभावनाएं इस बात पर निर्भर करेंगी कि क्या भारत में कुल उत्पादन क्षमता मांग की अपेक्षा अधिक हो पाती है तथा अंतर्राष्ट्रीय कीमतें भारत के पक्ष में रहती हैं. भारतीय पशुधन उद्योग का वैश्विक पशुधन संसाधनों में महत्वपूर्ण स्थान है. भारत की राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के साथ-साथ सामाजिक आर्थिक प्रगति में महत्वपूर्ण स्थान है. पिछले वर्षों में पशुधन क्षेत्र का कृषि क्षेत्र की प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान रहा है. पशुधन क्षेत्र की प्रमुख चुनौती असंगठित पशुधन बाजार एवं सामाजिक गलत धारणा है, जिसे हमें सुधारना है एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजार में नयी संभावनाएं तलाशना और पशुधन संबंधी उत्पाद का अधिकतम निर्यात कर विदेशी मुद्रा बचानी है. अत: अपने देश को सुदृढ़ एवं शक्तिशाली बनाने के प्रयास जारी रखेंगे.

पशुधन वित्त पोषण एवं सलाह हेतु सम्पर्क करें :

1. यूनियन बैंक ऑफ इंडिया की शाखाएं
2. ग्रामीण विकास अधिकारी
3. कृषि ज्ञान केन्द्र
4. आरसेटी
5. वित्तीय साक्षरता एवं ऋण परामर्श केन्द्र
6. कृषक समितियां

लुक़मान अली खान, सहायक महाप्रबंधक, क्षे.का. पुणे

शिल्पा शर्मा सरकार

श्वेत क्रांति- चुनौतियां एवं उपलब्धियां

श्वेत अर्थात सफ़ेद. श्वेत क्रांति जिसे अँग्रेजी भाषा में ऑपरेशन फ़्लड भी कहते हैं, के पहले चरण का प्रारम्भ सन 1970 में भारत सरकार के अधीन नेशनल डेयरी डेव्लपमेंट बोर्ड द्वारा किया गया. लक्ष्य था भारतवर्ष में दुग्ध उत्पादन को बढ़ाना. भारतवर्ष में जहां, भगवान श्रीकृष्ण को ग्वाला के रूप में जाना जाता है एवं उनके साथ गायों को चित्रित किया जाता है, वहां श्वेत क्रांति की आवश्यकता क्यों आन पड़ी ? यह आश्चर्य वाला विषय था; किन्तु उस समय यही सत्य था. भारत को अपनी दुग्ध आपूर्ति के लिए दुग्ध के आयात पर निर्भर रहना पड़ता था. तब श्री वल्लभ भाई पटेल के मार्गदर्शन में सन 1946 में सहकारी डेयरी की अवधारणा की नींव रखी गई. खेड़ा जिले के सभी दुग्ध उत्पादक किसानों ने प्रथम बार तब एकजुट होकर एक ऐसी सहकारी संस्था की स्थापना की, जिससे दुग्ध संग्रहण से लेकर, प्रसंस्कृत दुग्ध उत्पादों के विक्रय तक के सभी कार्य वे स्वयं कर सकें; ताकि लाभ सीधे तौर पर किसान तक पहुंचे. इस प्रकार की सहकारी संस्था को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने यह तय किया कि भारत में सभी दुग्ध किसानों को सहकारी संस्था के माध्यम से जोड़ा जाए और उनके द्वारा उत्पादित दुग्ध को सही मार्गदर्शन देकर एक ऐसी व्यवस्था बनाई जाए, जिससे भारत में दुग्ध उत्पादन की मात्रा बढ़े और घरेलू आवश्यकता पूर्ण हो सके. इस कार्य हेतु श्री कुरियन वर्गीस को नियुक्त किया गया. श्री कुरियन वर्गीस, जिन्हें हम 'मिल्क मैन' के नाम से भी जानते हैं, ने इस दायित्व को बखूबी निभाते हुए भारत के दुग्ध उत्पादन को ऐसी दिशा दी कि आज भारत विश्व का सबसे अधिक दुग्ध उत्पादन वाला देश बन गया है. श्वेत क्रांति को कई चरणों में कार्यान्वित किया गया. आखिरी चरण सन 1985 में प्रारम्भ होकर सन 1996 तक चला.

कुरियन वर्गीस का नाम आए, तो मन में अमूल की ही बात आती है. यह गुजरात के खेड़ा जिला में स्थापित एक सहकारी संस्था है, जिसका मुख्यालय आनंद में स्थापित है. यह ढांचा ऐसे तैयार किया गया है जिससे किसान वर्ग को अपने उत्पाद का पूरा-पूरा

लाभ मिल सके. अमूल एक पैटर्न है जिसमें छोटे किसान एक साथ मिल कर एक बड़ा दल बनाते हैं; ताकि वृहद मात्रा में व्यापार प्रारम्भ किया जा सके. यह एक सहकारी संस्था है, जिसमें प्रत्येक सदस्य को अपनी बात रखने का अधिकार है और सभी मिल-जुल कर पॉलिसी का निर्धारण करते हैं. अमूल का मूलभूत ढांचा कुछ इस प्रकार का है.

उपभोक्ता

⇧

जिला सहकारी दुग्ध महासंघ

⇧

जिला यूनियन

⇧

ग्रामीण सहकारी डेयरी

⇧

दुग्ध उत्पादक

क्या है श्वेत क्रांति की उपलब्धियां: कैसे मिलती है दुग्ध की धारा को अपनी दिशा -

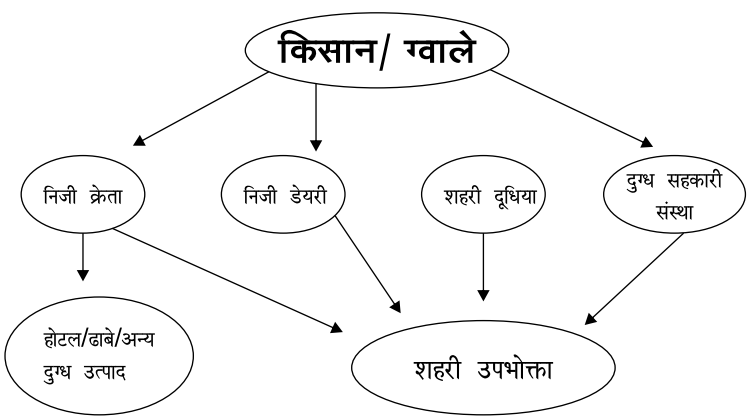

श्वेत क्रांति की उपलब्धियां: श्वेत क्रांति का लक्ष्य मूलतः छोटे ग्रामीण किसानों को आत्म-निर्भर बनाने का था. सामान्यतः ग्रामीण परिवेश में खेती के अतिरिक्त रोजगार के कोई अन्य विकल्प उपलब्ध नहीं होते हैं. ऐसे में डेयरी से जुड़ा व्यवसाय एक आकर्षक

विकल्प प्रस्तुत करता है. कम लागत, संक्षिप्त परिचालन अवधि चक्र, स्थिर आमदनी के चलते सीमांत कृषकों के लिए यह पसंदीदा व्यवसाय बन सकता है.

श्वेत क्रांति से समाज में आए बदलाव:

1. **घरेलू दुग्ध उत्पादन में आत्म-निर्भरता**- जहां पहले दुग्ध के आयात की आवश्यकता थी, वहां अब उत्पादन इतनी प्रचुर मात्रा में होने लगा है कि घरेलू आवश्यकता को पूर्ण करने के पश्चात दुग्ध का निर्यात किया जा रहा है. एक सर्वे के अनुसार सन 1968-69 में प्रतिदिन प्रति व्यक्ति दुग्ध की खपत 112 ग्राम थी, वहीं सन 2002 में यह खपत बढ़कर 226 ग्राम हो गई थी. दुग्ध बच्चों, स्त्रियों, सीमांत एवं भूमिहीन किसानों के लिए कम लागत वाला, पौष्टिक तथा आसानी से उपलब्ध आहार है. भारत की आधी जनसंख्या शाकाहारी है, ऐसे में केवल दुग्ध ही एकमात्र ऐसा पशु आहार है. विश्व के दुग्ध उत्पादन का 13% केवल भारत में होता है.

2. **महिला सशक्तिकरण**- दुधारू पशु की देखभाल समान्यत: महिलाएं ही करती हैं. इसीलिए महिलाओं के लिए पृथक प्रशिक्षण की व्यवस्था करके, उन्हें डेयरी के सभी कार्यों की जानकारी प्रदान की गई. साथ ही केवल महिलाओं द्वारा संचालित डेयरी को प्रोत्साहन देने के लिए विशेष योजनाएँ भी बनाई गईं, ताकि महिलाएं अपने पैरों पर स्वयं खड़ी हो सकें.

3. **बाज़ार में सहकारी डेयरी का प्रभुत्व**- दुग्ध संसाधन एवं बिक्री के व्यवसाय में करीब 170 जिला स्तरीय सहकारी संस्थाओं ने अपना प्रभुत्व स्थापित किया है. कुछ मुख्य ब्रांड के नाम हैं, अमूल (गुजरात), विजया (आंध्र प्रदेश), वेरका (पंजाब), सरस (राजस्थान), नंदिनी (कर्नाटक), मिलमा (केरल). ये सभी ब्रांड अपने क्षेत्र में प्रमुख ब्रांड बन गए हैं.

4. **सामाजिक अधिकार**- गरीब एवं पिछड़ा वर्ग का किसान हो या अग्रणी किसान, सभी इन सहकारी संस्थाओं में समान अधिकार पाते हैं. कड़े नियमों के चलते, केवल दुग्ध की गुणवत्ता के आधार पर किसानों को दाम दिये जाते हैं. दूध की गुणवत्ता, उसमें उपस्थित मलाई से की जाती है.

5. **आर्थिक अधिकार**- दुधारू पशु पूरे वर्ष भर एक समान मात्रा में दूध नहीं देते. कभी अधिक तो कभी कम. पहले दूध के आधिक्य के समय दूध के दाम गिर जाते थे. ऐसे में लाभ तो दूर की बात है, उत्पादन पर होने वाला खर्च भी नहीं निकल पाता था और किसानों को हानि होती थी. दुग्ध के दाम को सम्पूर्ण वर्ष में एक समान बनाए रखने का दायित्व सहकारी संस्था का है. इस बात का पूरा ध्यान रखा जाता है कि किसान को कभी भी नुकसान का सामना न करना पड़े.

6. **वैकल्पिक आमदनी**- प्राय: दुधारू पशु पालने वाले सभी लोग किसान वर्ग से होते हैं. डेयरी के व्यवसाय से जुड़कर एक दूसरी आमदनी भी किसान को होती है. इससे उसकी आर्थिक स्थिति मजबूत होती है.

7. **शिक्षा का प्रभाव**- सहकारी संस्था से जुड़े सारे कार्य एवं रखरखाव हेतु सभी किसानों को समय समय पर प्रशिक्षण प्रदान किया जाता रहा है. किसानों की अगली पीढ़ी अब अशिक्षित नहीं रहेगी. नई पीढ़ी को सभी नए तकनीकों का ज्ञान है और वह जानती है कि दुग्ध उत्पादन को कैसे और उन्नत किया जाए.

8. **स्वच्छता के मापदंड**- देश से किसी सामग्री के निर्यात हेतु विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय मापदण्डों को निर्धारित किया जाता है. इसमें एक मापदंड आरोग्य- शास्त्र का है. छोटे- छोटे दूध वाले, जो अपनी पशुशाला में पशुओं का पालन करते हैं, उन्हें स्वच्छता के अंतर्राष्ट्रीय मापदण्डों को जानने और सीखने का अवसर प्राप्त होता है.

9. **एक विश्वास**- श्वेत क्रांति के बाद आज की स्थिति ऐसी है कि उपभोक्ता कुछ प्रमुख ब्राण्डों पर पूर्ण विश्वास करने लगे हैं. साल दर साल एक ही गुणवत्ता और स्वच्छता बनाए रखते हुए इन प्रमुख दुग्ध ब्राण्डों ने उपभोक्ताओं का विश्वास प्राप्त कर लिया है.

10. **एक ब्रांड**- जब दुग्ध का निर्यात होता है तो वह देश के बाहर भारत की पहचान बन कर जाता है. अमूल ब्रांड ने विदेशों में भी अपने पैर पसारे हैं और आज खाड़ी देशों में भी अमूल के अनेक उत्पाद विक्रय किए जाते हैं. गुजरात के एक जिला स्तरीय सहकारी संस्था से आगे बढ़ कर अमूल एक ब्रांड बन गया है, जिसे हम 'टेस्ट ऑफ इंडिया' के नाम से भी जानते हैं. इससे देश का पैसा देश में रहता है.

11. **अमूल पार्लर**- केवल दुग्ध से आगे बढ़कर दही, पनीर, चीज़, छास, लस्सी, बासुन्दी एवं आइसक्रीम भी एक ही छत के नीच मिलने लगे हैं. इन्हें हम अमूल पार्लर के नाम से जानते हैं. आवश्यकता से अधिक अब दुग्ध एक स्वादिष्ट भोजन बन गया है.

चुनौतियां- एक प्रश्न कि अमूल जैसी व्यवस्था पूरे देश में क्यों नहीं है? इसके पहले जानते हैं भारत की डेयरी के विशिष्ट लक्षण:

1. 60% दुधारों पशु छोटे एवं भूमिहीन किसानों के पास उपलब्ध हैं.
2. 75% ग्रामीण परिवार औसतन 2-4 दुधारू पशु पालते हैं.

3. दूध उत्पादन का कार्य एक पृथक उद्यम न होकर कृषि का ही एक भाग है. इसके लिए कोई अलग से बजट नहीं आता. कोई पृथक लोन की योजना भी सामान्यतः नहीं होती है. फसल के बचे हुए भाग को पशु आहार की तरह उपयोग किया जाता है. गोबर अच्छी गुणवत्ता वाला खाद होते हुए भी घरों में ईंधन के रूप में प्रयोग किया जाता है.

4. दुग्ध उत्पादन से नियमित आय होती है, जबकि कृषि से मौसमी आय ही होती है. जहां भी कृषि के साथ-साथ दुग्ध उत्पादन का कार्य हो रहा है, यह पाया गया है कि वहां किसान सुखी हैं एवं अपना घर परिवार चलाने में सक्षम हैं.

5. 1/3 ग्रामीण आय दुग्ध उत्पादन से होती है.

6. विपरीत परिस्थिति में पशुओं का विक्रय भी किया जा सकता है.

तब क्या हैं चुनौतियां हमारे किसानों के लिए?

1. **भारत की जलवायु में अधिक गर्मी एवं आद्रता-** ऐसे जलवायु में दुग्ध शीघ्र नष्ट हो जाता है. ऐसी स्थिति में दुग्ध के उत्पादन से फ़ैक्टरी तक ट्रांसपोर्ट का समय अगर अधिक हो, तो दुग्ध के नष्ट होने की संभावना बढ़ जाती है. दुग्ध के भंडारण की अवधि कम होने के कारण मूल रूप में दुग्ध का अधिक दूरी तक ट्रांसपोर्ट संभव नहीं हो पाता. इसीलिए इसे skimmed मिल्क पाउडर में परिवर्तित कर बा. जार में लाया जाता है. इसी मुख्य कारण के चलते दूरस्थ ग्रामों के किसान दुग्ध . फैक्टरी तक पहुँचाने में असमर्थ हो जाते हैं. ध्यान देने योग्य बात यह है कि विश्व के प्रमुख दुग्ध उत्पादक देशों में शीतोष्ण जलवायु होती है.

2. **दुग्ध के दाम में उतार चढाव-** असंगठित क्षेत्र होने के कारण दुग्ध के दामों में अस्थिरता बनी रहती है. प्रत्येक क्षेत्र में दुग्ध के दाम पृथक होते हैं. ऐसे में सहकारी संस्था द्वारा एक ही दर तय किए जाने पर कुछ किसानों को नुकसान की आशंका होती है.

3. **अधिक घरेलू खपत-** एनएसएसओ के द्वारा किए गए सर्वे से यह ज्ञात हुआ है कि भारत में 85% शहरी एवं 76% ग्रामीण परिवार दुग्ध सेवन करते हैं. अर्थात प्रतिदिन यह परिवार दुग्ध क्रय करते हैं. आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों के दुग्ध उत्पादन को पास के शहर में ही बाज़ार मिल जाता है. साथ ही दुग्ध के अन्य उत्पाद जैसे दही, पनीर इत्यादि सामान्यतः घरों में बनाए जाते हैं. इसके लिए अधिक दूध की खपत होती है.

4. **उच्च प्रजाति के दुधारू पशुओं का अभाव-** देसी प्रजाति के पशु प्रतिदिन कम मात्रा में दुग्ध उत्पादन की क्षमता रखते हैं. भारत में प्रति पशु उत्पादकता, अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है. प्रजाति के अतिरिक्त अन्य कई कारण भी उत्पादकता पर प्रभाव डालते हैं.

5. **पशु आहार- मुख्यत-** ग्रामों में फसल के बचे हुए भाग को पशु आहार के लिए उपयोग में लाया जाता है अथवा घास का भी आहार उपयोग में लाया जाता है. किन्तु अधिक उत्पादकता के लिए अच्छी खुराक की आवश्यकता होती है. पशुओं के लिए विशेष आहार उपलब्ध होते हैं, किन्तु यह महंगे होते हैं. दूध के कम दाम मिलने के कारण अधिकतर किसान विशेष आहार क्रय करने में रुचि नहीं लेते.

6. **पशु स्वास्थ्य एवं टीकाकरण-** पशुओं के स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता की कमी के कारण समय-समय पर टीकाकरण नहीं करवाने से दुग्ध की गुणवत्ता कम होती रहती है. बीमार पशु का दूध भी अशुद्ध होता है.

7. **पशु पालन की जानकारी का अभाव-** अशिक्षा और अभाव के चलते पशुओं की क्रॉस ब्रीडिंग की जानकारी न होने के कारण दूध की उत्पादकता में वृद्धि नहीं होती है.

8. **स्वच्छता के मापदंडों पर खरा न उतरना-** दुग्ध निर्यात के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित मापदण्डों पर खरा उतरना आवश्यक है. इसमें स्वच्छता भी एक मापदंड है. चूंकि दुग्ध उत्पादन छोटे किसान द्वारा घर पर ही किया जाता है, इस स्तर की स्वच्छता को बनाए रखना हर बार संभव नहीं हो पाता है.

9. **ऋण की सुविधा-** दुग्ध उत्पादन के लिए विशेष ऋण योजनाओं का अभाव है. साहूकारों द्वारा दिये गए ऋण पर अत्यधिक ब्याज दर होती है. अत: किसान अपना दुग्ध व्यवसाय का विस्तार करने में स्वयं को अक्षम पाता है.

10. **संबन्धित सहायक उद्यम-** किसी भी व्यवसाय के विस्तार हेतु परिपक्व सहायक उद्यम की आवश्यकता होती है. दुग्ध उत्पादन के विस्तार हेतु शीतलन गृह की बड़े परिमाण में अत्यधिक आवश्यकता है; ताकि दुग्ध नष्ट न हो. दुग्ध को अन्य उत्पाद जैसे पनीर, चीज़, दही, कुल्फी इत्यादि में परिवर्तित करने हेतु उद्यमों की कमी है. कम उत्पादकता के चलते ट्रांसपोर्ट का व्यय अधिक होता है. इसके साथ ही दुग्ध उत्पादन से जुड़े अनुसंधान के कार्य जैसे पशु जेनीटिक्स, माइक्रोबायोलोजी, पशु प्रजनन, पशु आहार, दुग्ध उत्पादन संबंधी शैक्षणिक कार्यक्रम जैसे सहायक उद्यम बहुतायत में उपलब्ध नहीं है.

11. **सहकारी संस्था में किसानों का अधिकार न होना-** अमूल में जहां सभी किसान एकजुट होकर संबन्धित नीतियों का निर्धारण करते हैं, देश के अन्य भाग की सहकारी संस्थाओं में यह पाया गया है कि किसानों को उनके अधिकारों से वंचित रखते हुए गाँव के मुखिया या अन्य दबंग व्यक्ति ही नीति, दुग्ध के दाम, विक्रय का क्षेत्र आदि निर्धारण करते हैं. गाँव का मुखिया अपने परिचित को अधिक दाम देते हुए अन्य किसानों को समान अधिकार से वंचित कर देता है. ऐसे में किसान सहकार से विमुख हो जाते हैं.

12. **पर्यावरण संबंधी चुनौतियां-** दुग्ध उद्यम में अपशिष्ट के रूप में पानी ही प्राप्त होता है. यह पानी अशुद्ध होता है; क्योंकि इसमें कई प्रकार के जैविक अवशेष होते हैं, जो नदी या समुद्र के पानी में घुल कर बैक्टीरिया के प्रजनन में सहायक की भूमिका निभाते हैं.

डेयरी के क्षेत्र में अत्यधिक संभावनाएं हैं. इससे जहां एक ओर ग्रामीण क्षेत्रों में नए रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं, वहीं महिला सशक्तिकरण के साथ ही पूरे परिवार के लिए पोषणयुक्त भोजन की भी व्यवस्था होती है. अधिक निवेश के साथ लाखों नए किसानों और दूधवालों को डेयरी व्यवसाय में भाग लेने का अवसर मिलेगा, जिससे ग्रामीण रोजगार में महत्वपूर्ण बढ़ोतरी होगी. किन्तु इसके लिए केवल सहकारी संस्था ही नहीं; वरन एनजीओ को भी भूमिका निभाने की आवश्यकता है. श्वेत क्रांति द्वारा खोले गए द्वार का पूर्णतः लाभ लेने के लिए आवश्यक है कि दुग्ध उत्पादन को बढ़ाने के क्षेत्र में और कार्य किया जाए. किसानों को अच्छे पशु आहार, पशु ब्रीडिंग आदि की जानकारी मुहैया करवाने के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण शिविर आयोजित किए जाने चाहिए.

शिल्पा शर्मा सरकार, मुख्य प्रबंधक, मानव संसाधन विभाग, केंद्रीय कार्यालय, मुंबई

आर के सिंह

दुग्ध उत्पादन एवं प्रसंस्करण: विभिन्न आयाम

दूध हमारी खाद्य आवश्यकताओं का ही नहीं, बल्कि हमारी संस्कृति का भी अभिन्न अंग रहा है. प्राचीनकाल से ही भारतवर्ष के विषय में कहा जाता रहा है कि ***इस देश में दूध की नदियाँ बहती हैं***. वरिष्ठ जनों के आशीर्वचनों में आज भी सुनाई देता है कि ***दूधो नहाओ, पूतो फलो.*** विभिन्न पोषक तत्वों की खान दूध को हमारे प्राचीन विद्वानों ने पता नहीं कब से जान लिया था, तभी तो इसके अमूल्य होने की सूचना इस प्राचीन उक्ति से मिलती है कि ***दूध बेचना पूत बेचने के समान है.*** देश के स्वाधीन होने के पश्चात आत्मनिर्भरता का दौर आया. हमने कृषि क्षेत्र में अच्छी प्रगति की और हरित क्रांति के माध्यम से हम खाद्यान के मामले में न केवल आत्मनिर्भर हुए; बल्कि अनाजों का निर्यात करने की स्थिति में भी आ गये. सीमित आय तथा प्रोटीन की मात्रा को धार्मिक एवं सांस्कृतिक कारणों के चलते मांसाहारी आहार से न प्राप्त कर पाने के कारण देश को दूध उत्पादन में आत्म-निर्भर होने की आवश्यकता अनुभव हुई. वैसे हमारे देश में दूध उत्पादन विश्व भर में सर्वाधिक है और वित्त वर्ष 2014-15 के दौरान दुग्ध उत्पादन विगत सभी कीर्तिमानों को तोड़ते हुए 146 मिलियन टन से भी अधिक हुआ है. प्रति व्यक्ति प्रतिदिन दूध उपलब्धता 322 ग्राम हो गयी है, जो विश्व दुग्ध उपलब्धता के औसत 294 ग्राम से कहीं अधिक है.

फिर भी दूध का यह उत्पादन समान रूप से वितरित नहीं हो पाता है. प्रत्येक व्यक्ति तक दूध को पहुंचाने के लिए बहुत कुछ किया जाना आवश्यक है; क्योंकि दुग्ध उत्पादन केवल पोषण से ही नहीं; बल्कि देश के लाखों लोगों के प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रोजगार से संबद्ध है. दूध को उत्पादन के बाद शीघ्रता से उपभोक्ताओं तक पहुंचाना तो एक लक्ष्य है ही, इसके साथ ही प्रसंस्कृत दूध को लंबे समय तक बनाए रखना तथा समयानुसार

उसका उपयोग कर पाना भी महत्वपूर्ण है. बहुधा देखा यह जाता है कि एक मौसम में दूध का उत्पादन अधिक होता है, तो दूसरे मौसम में खपत से भी कम उत्पादन होता है और हमारे विश्व स्तर पर अग्रणी दूध उत्पादक होने के पश्चात भी दूध की कीमतें आसमान छूने लगती हैं, इस विरोधाभास को दूर करने की आवश्यकता है.

अब प्रश्न यह उठता है कि आखिर किस तरह अपने दुग्ध उत्पादन को हम अपने करोड़ों नागरिकों तक आसानी से पहुंचा सकते हैं? साथ ही यह भी प्रश्न उठता है कि आखिर पोषण के इस सस्ते माध्यम को कैसे संरक्षित रखा जा सकता है? दोनों ही के उत्तर में हम कह सकते हैं कि आधुनिक प्रौद्योगिकी का उचित उपयोग कर तथा व्यापक स्तर पर डेयरी फार्मों का विकास कर हम इसे कर सकते हैं. दुग्ध प्रसंस्करण करने पर हम प्रत्येक मौसम में दूध की उपलब्धता बनाए रख सकते हैं. इतना ही नहीं, आधारभूत सुविधाओं के रूप में सस्ते एवं तीव्र यातायात के संसाधनों के विकास की आवश्यकता है.

डेयरी फार्म

दुग्ध उत्पादन के परंपरागत तरीके अर्थात घर पर एक या दो पशु पाल कर पारिवारिक आवश्यकताओं के लिए दूध उत्पादन करना अब बहुत लाभप्रद नहीं रह गया है; क्योंकि पशुपालन संबंधी व्यय में वृद्धि हुई है. आज आवश्यकता है आधुनिक तौर-तरीके से स्थापित किये जाने वाले डेयरी फार्मों की. स्थानीय स्तर पर कृषकों द्वारा ये स्थापित भी किये जाते हैं. परंपरागत दुग्ध उत्पादन की तुलना में आज डेयरी व्यवसाय में अभूतपूर्व परिवर्तन देखने को मिल रहा है. कई डेयरियां हजारों पशुओं का पालन कर आधुनिक उपकरणों की सहायता से दुग्ध प्रसंस्करण का कार्य कर दूध एवं अन्य सह उत्पाद बाजार में बेचती हैं. दूसरी ओर जैविक डेयरी फार्मिंग के जरिये गाँवों से दूध एकत्रित कर प्रसंस्करण कम्पनियों के पास दूध भंडारण एवं प्रसंस्करण हेतु भेजा जाता है. देश में पनीर एवं दूध पावडर के उत्पादन में भी वृद्धि हुई है. डेयरी फार्म स्थापित करने के लिए किसी भी व्यक्ति को पशु- प्रेमी होना आवश्यक है. इसका अभिप्राय यह है कि ऐसा व्यक्ति जो पशुओं में रुचि रखता है, उनके पोषण के विषय में जानता है तथा विभिन्न नस्लों के पशुओं की शारीरिक एवं खाद्य आवश्यकताओं को समझता हो. दुग्ध उत्पादन हेतु हमारे देश में गायों एवं भैंसों का पालन किया जाता है. विश्व में सर्वाधिक भैंसें भारतवर्ष में ही हैं, डेयरी व्यवसायी को चाहिए कि वह दुग्ध उत्पादन की वैज्ञानिक तकनीकों को समझे, साथ ही उसे व्यवसाय का भी ज्ञान हो. विभिन्न संस्थानों में डेयरी व्यवसाय पर पाठ्यक्रम भी चलाए जाते हैं. आइए, कुछ प्रमुख पाठ्यक्रम एवं उनसे जुड़े हुए संस्थानों के विषय में जाने.

संस्थान का नाम	चलाए जाने वाले पाठ्यक्रम	वेबसाइट
राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल	विभिन्न आवश्यकता समूह हेतु डेयरी पाठ्यक्रम एवं डेयरी प्रशिक्षण कार्यक्रम	www.ndri.res.in/ndri/Design/kvk.html
इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्व विद्यालय	डेयरी विषयक जागरुकता पाठ्यक्रम	www.ignou.ac.in › Schools › School of Agriculture › Programmes
अमूल इंडिया	विभिन्न कार्यशालाओं एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन	www.amuldairy.com/index.php/cd-programmes/training-development

व्यवसाय शुरू करना :

डेयरी व्यवसाय शुरू करने से पहले इस विषय का यथोचित ज्ञान प्राप्त कर लेना आवश्यक रहेगा. पशुओं को रखने का स्थान चयनित करते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि वह खुला व स्वच्छ हो. सफाई का विशेष प्रबंध करना भी जरूरी है. केवल गायों के साथ व्यवसाय शुरू करने से लाभ कम मिलेगा, अतः बड़े डेयरी व्यवसाय को शुरू करने से पहले गायों एवं भैंसों का ऐसा समूह तैयार किया जाए, जो लागत की दृष्टि से कम हो तथा लाभप्रदता की दृष्टि से फायदेमंद हो. विभिन्न नस्लों की गाय- भैंसों का पालन करना उचित होगा. ऋण प्राप्त करने की स्थिति में भिन्न-भिन्न पशुओं को खरीद पाना संभव नहीं होता है. ऐसे में केवल भैंसों को ऋण द्वारा तथा गायों को स्वयं के व्यय पर खरीदना चाहिए. हरे चारे हेतु किसान स्वयं का चरागाह विकसित कर लें, तो यह उपयुक्त रहेगा. इसके साथ ही बाजार में किस तरह के दूध की मांग है, इस पर भी सर्वे पहले ही कर लिया जाना चाहिए. दूध से बने उत्पाद जैसे पनीर, खोया, घी, मक्खन आदि की मांग किस मौसम में अधिक रहती है तथा बाजार तक इन उत्पादों को पहुंचाने में कितनी लागत आती है, इसका पूर्वानुमान लगाना भी आवश्यक है. सीधे शब्दों में कहा जाए, तो डेयरी व्यवसाय लागत आधारित नहीं; बल्कि श्रम आधारित है; क्योंकि इसमें लागत से अधिक श्रम का महत्व है.

प्रमुख दुधारू पशु

भैंसों के मामले में हमारा देश प्रथम स्थान पर है. बकरियों तथा गायों के क्षेत्र में हम दूसरे

स्थान पर आते हैं. जहाँ भैंस का दूध अधिक वसा युक्त होता है, वहीं देशी गाय का दूध सुपाच्य माना जाता है. आवश्यकता दोनों के उत्पादन में वृद्धि की है. आइए, हम गाय एवं भैंस दोनों की विभिन्न नस्लों के औसत उत्पादन पर एक दृष्टि डालें

गायों की प्रमुख देशी नस्लें तथा दुग्ध उत्पादन प्रतिदिन का औसत

गाय की नस्ल	प्रतिदिन औसत दूध उत्पादन (किग्रा में)	क्षेत्र
गिर	20- 60	गुजरात, सौराष्ट्र क्षेत्र
साहिवाल	20- 40	पंजाब, उत्तर प्रदेश, हरियाणा
लाल सिंधी	20- 40	देशभर में पाई जाती है.
राठी	18- 35	राजस्थान, पंजाब, हरियाणा
थारपारकर	18- 35	राजस्थान

प्रमुख भैंस नस्लें तथा प्रति दूधकाल दूध उत्पादन

भैंस की नस्ल	प्रति दुग्धावधि दूध उत्पादन (किग्रा में)	भौगोलिक क्षेत्र
मुर्रा	1500-2500	हरियाणा
बड़वारी	800-1000	उत्तर प्रदेश
जफराबादी	1000-1200	गुजरात
सूरती	900-1300	गुजरात
मेहसाणा	1200-1500	गुजरात

इस तरह विभिन भैंस नस्लें अच्छा दूध देती हैं. अपने स्थान की जलवायु के अनुसार डेयरी व्यवसायी भैंसों की खरीद कर सकता है. उनका यथोचित बीमा करवाकर समय-समय पर टीकाकरण द्वारा उनकी स्वास्थ्य सुरक्षा को सुनिश्चित कर सकता है. श्रम की लागत बचाने के लिए दूध निकालने की मशीन का उपयोग किया जा सकता है. इसी तरह गोबर का उपयोग बायोगैस निर्माण में किया जा सकता है.

दुग्ध प्रसंस्करण : दुग्ध उत्पादन से लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक है कि उसे प्रसंस्कृत कर दिया जाए. ऐसा करने से उत्पादित दूध टिकाऊ बना रहता है तथा इसे आसानी से बाजार में पहुंचाया जा सकता है. दुग्ध प्रसंस्करण की विभिन्न विधियाँ इस

प्रकार हैं-

दूध को उबालना तथा पाश्चुरीकरण: दूध को उबाल कर रखने पर वह खराब नहीं होता तथा उसमें जैविक गतिविधियाँ धीमी हो जाती हैं. छोटे स्तर के डेयरी व्यवसायी देरी से काम में लाए जाने वाले दूध को उबालने के पश्चात ठंडा करके रेफ्रीजरेटर में रख सकते हैं. बड़ी डेयरियों में पाश्चुरीकरण हेतु उपकरण उपलब्ध होते हैं, जिनमें दूध गर्म होकर तेजी से ठंडा किया जाता है. डेयरी व्यवसायी को अपने पास दूध उबालने हेतु अच्छे बरतन तथा दूध के लंबे समय तक भंडारण करने हेतु रेफ्रीजरेटर रखने चाहिए.

दूध पावडर बनाना: दूध पावडर बनाकर भी संरक्षित किया जाता है. इसका उपयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है और इसे दूध की कमी होने की स्थिति में भी उपयोग किया जा सकता है. दूध से पावडर तैयार करना महंगी प्रक्रिया है, अतः यह कार्य बड़ी डेयरियों में किया जाता है. इससे दूध की गुणवत्ता को लंबे समय तक बनाए रखा जा सकता है तथा परिवहन के व्यय को भी कम किया जा सकता है.

घी एवं मक्खन निर्माण: विश्व का 41 प्रतिशत दूध आधारित घी एवं मक्खन निर्माण भारत में ही होता है. फिर भी शुद्ध घी एवं मक्खन की कमी अनुभव की जाती है. ऐसे में यह आवश्यक है कि डेयरी व्यवसायी कुछ दूध को घी एवं मक्खन निर्माण हेतु बचाकर रखें; ताकि उससे अधिक दाम प्राप्त किये जा सकें. घी का उत्पादन एवं संरक्षण आसान एवं सस्ता होता है. घी लगभग 2 वर्षों तक सुरक्षित रखा जा सकता है.

अन्य सह उत्पाद एवं दुग्ध प्रसंस्करण: बाजार में दूध से बने खोये की मांग बनी ही रहती है. यदि श्रम की उपलब्धता हो, तो डेयरी व्यवसायी को खोया तैयार करने की इकाई स्थापित कर लेना चाहिए; ताकि वह अपने कुछ दूध से अतिरिक्त आय प्राप्त कर सके. इसी तरह संरक्षित दूध से दही बनाकर उसके उत्पाद जैसे लस्सी, मट्ठा आदि तैयार किये जा सकते हैं.

दुग्ध प्रसंस्करण हेतु सहायक उपकरण : दुग्ध प्रसंस्करण हेतु परंपरागत उपकरणों का उपयोग किया जाता रहा है, किंतु बाजार में बहुत से मानक उपकरण हैं, जिन्हें खरीद कर डेयरी व्यवसायी लाभ उठा सकते हैं. दूध निकालने हेतु मिल्किंग मशीन उपलब्ध है. मध्यम श्रेणी की ऐसी मशीनों से 20- 25 पशुओं का दूध एक घंटे में निकाला जा सकता है. बाजार में दूध को ले जाने से पहले दूध में वसा की मात्रा जाँच लेनी चाहिए. वसा की मात्रा को जाँचने के लिए फैट टेस्टर उपलब्ध होते हैं. छोटे फैट टेस्टरों द्वारा एक बार में 12-24 जाँचें की जा सकती हैं. इसे हाथ से संचालित किया जा सकता है. मक्खन निकालने की मशीन हस्त संचालित एवं विद्युत संचालित दोनों ही श्रेणियों में उपलब्ध है. भिन्न-भिन्न भंडारण क्षमताओं वाले आड़े एवं खड़े दुग्ध भंडारण ड्रम भी बाजार में उपलब्ध

हैं, जिनमें एक निश्चित तापक्रम को बनाए रखने की व्यवस्था भी रहती है. दूध के ड्रमों को ठंडा रखने के लिए कूलिंग अथवा चिलिंग उपकरण उपलब्ध हैं, जिनमें बैटरी बैकअप 10-12 घंटों तक रहता है. मावा, खोया निर्माण हेतु भी स्वचालित उपकरण उपलब्ध हैं.

बैंकों द्वारा ऋण प्रदान किया जाना : डेयरी व्यवसायियों को बैंक ऋण प्रदान करता है. यह ऋण उनके प्रोजेक्ट के आकार पर निर्भर करता है. पशुओं की खरीद में सम संख्या का ध्यान रखा जाता है, अर्थात पशु गिनती में 2, 4, 6 आदि होने चाहिए. यह भी ध्यान रखें कि एक ही प्रकार के पशु हों. डेयरी संचालन में काम आने वाले उपकरणों की खरीद पर भी ऋण दिया जाता है. डेयरी प्रोजेक्ट हेतु 25 प्रतिशत मार्जिन राशि लेकर 75 प्रतिशत ऋण प्रदान किया जाता है. पशुओं की खरीद पर आने वाली लागत के ऋण को 6- 6 माह के अंतराल पर दिया जाता है, जिससे पहली छ:माही में दूध देने वाले पशु खरीदे जाने के पश्चात दूसरी छ:माही में भी दूधारू पशु खरीदे जाएं; ताकि दूध की उपलब्धता बनी रहे. ऋण इस प्रकार दिया जाता है कि यदि व्यवसायी उपकरण भी ऋण लेकर खरीद रहा है, तो दूध द्वारा प्राप्त आय से ऋण की किश्तों का भुगतान किया जा सके. इसके साथ ही भारत सरकार द्वारा डेयरी व्यवसायियों को बायोगैस संयंत्र लगाने पर सबसिडी भी दी जाती है,जो कि 20-25 प्रतिशत होती है.

इसके साथ ही सरकार प्रायोजित पशु धन बीमा से भी डेयरी व्यवसायी लाभ उठा सकते हैं. पशुओं का बीमा उनकी अधिकतम वर्तमान बाजार कीमत पर किया जाता है, जो कि 50 प्रतिशत तक अनुदानित होता है. इस योजना को गोवा राज्य छोड़कर सभी राज्यों में पशु धन विकास बोर्ड द्वारा संचालित किया जा रहा है. इस योजना में देशी तथा संकर दोनों ही किस्म के पशुओं को सम्मिलित किया जाता है. ऐसे गर्भवती पशु, जिन्होंने कम से कम एक बछड़े को जन्म दिया हो, को इस बीमा योजना में सम्मिलित किया जाता है. अनुदान का लाभ प्रत्येक व्यक्ति को 2 पशुओं तक ही प्रदान किया जाएगा. इसके साथ ही सरकार द्वारा चारा विकास योजना भी संचालित की जा रही है.

डेयरी व्यवसाय में असीम संभावनाएं भरी पड़ी हैं. जिस तरह से लंदन का एक किसान अपने लैपटॉप की सहायता से छूट्टियाँ बिताते हुए अपने पशुओं का दूध निकालता है तथा अपने दूध की पूरी जाँच करता है, ठीक वैसे ही हमारे अपने देश में प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए हमारे डेयरी व्यवसायी इस व्यवसाय को पशु सेवा तक सीमित न रखकर जन-जन की सेवा का कारोबार बनाने में सफल होंगे. आज आवश्यकता है डेयरी को एक लाभ का धंधा एवं सम्मानजनक वृत्ति बनाने की.

आर के सिंह, वरिष्ठ प्रबंधक (संकाय), स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र, भोपाल

निधि सोनी

'श्वेत क्रांति में कृत्रिम गर्भाधान का योगदान'

हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है. अधिकांश ग्रामीण (लगभग 72 प्रतिशत) खेती के साथ-साथ पशु-पालन भी करते हैं. इस प्रकार पशुपालन ग्रामीण जीवन का अभिन्न अंग है. खेती-किसानी मौसम पर बहुत निर्भर करती है. अवर्षा या अल्प-वर्षा की स्थिति में पशुपालन ही किसानों को सहारा प्रदान करता है. पशुधन हमारे देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था तथा कृषि का मुख्य आधार है. पशुओं से अधिक लाभ प्राप्त करना उनकी नस्ल, जाति तथा मूल क्षमता पर निर्भर करता है. उपयुक्त स्थिति में पशु विकास हेतु नस्ल सुधार कार्य को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाती है; ताकि पशुधन की उत्पादन क्षमता में वृद्धि हो एवं पशुपालक अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर सके.

अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए कम उम्र में बाढ़ प्राप्त करने एवं अधिक उत्पादन/कार्य क्षमता वाले पशुओं का उत्पादन आवश्यक है. ऐसे पशु तभी प्राप्त किए जा सकते हैं, जब इनकी नस्ल अच्छी हो तथा सुधरी हुई हो. यह कार्य पशुओं के उन्नत प्रजनन से किया जा सकता है तथा कृत्रिम गर्भाधान इस दिशा में मील का पत्थर है. उन्नत नस्ल के चुने हुए प्रजनन योग्य सांडों में यह गुण विद्यमान होता है. अतः अनवरत पशु विकास के लिए उन्नत नस्ल के सांडों का उपयोग अपरिहार्य है.

कृत्रिम गर्भाधान विधि पशु-प्रजनन की उन्नत विधि है; क्योंकि इस विधि से आवश्यकता से कम सांडों से प्रजनन कराया जा सकता है. फलस्वरूप प्रजनन योग्य सांडों के रखरखाव पर होने वाला व्यय कम होने से कम खर्च में अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं. एक अनुमान के अनुसार एक प्रजनन योग्य सांड से 10,000 मादा पशुओं को प्रजनित किया जा सकता है. इस प्रकार कृत्रिम गर्भाधान पशु विकास का मुख्य आधार तथा पशु विकास की कुंजी कहा जाता है. संपूर्ण विश्व में पशु- विकास की यही विधि अपनाने से विश्व के समृद्ध देशों की आर्थिक स्थिति मज़बूत हुई है, क्योंकि प्राकृतिक विधि से बड़े पैमाने पर तथा शीघ्र गति से पशु विकास उतना संभव नहीं है, जितना कृत्रिम गर्भाधान से किया जा सकता है.

कृत्रिम गर्भाधान क्या है?

पशुओं में कृत्रिम गर्भाधान विधि के अंतर्गत, उन्नत नस्ल के प्रजनन योग्य सांड से जीवाणु रहित प्रक्रिया द्वारा बीज प्राप्त कर गर्मी में आई मादा पशु के जननांग में कृत्रिम विधि से डालने की प्रक्रिया को कृत्रिम गर्भाधान कहते हैं, जिसके लिए अच्छे एवं स्वस्थ सांड का चयन किया जाता है. उदाहरणार्थ यदि दूध उत्पादन के लिए सांड का चयन करना हो, तो सबसे अधिक दूध उत्पादन करने वाली गाय के बछड़े का चयन कर उसे सांड बनाना ज़रूरी है. तत्पश्चात ही इस सांड के बीज में दुग्ध उत्पादन के गुण विकसित होंगे एवं इसे प्रजनन हेतु चुना जा सकेगा. इस प्रक्रिया के लिए आवश्यक है कि ऐसी मादा पशु का पूरा लेखा-जोखा एकत्रित किया जाये, ताकि चयन में कोई त्रुटि न हो.

कृत्रिम गर्भाधान के लाभ :-

1. अच्छे सांड की उपयोगिता कृत्रिम गर्भाधान द्वारा बढ़ जाती है; क्योंकि इस विधि से अच्छे सांड का बीज हिमीकृत (फ्रीज़) कर एवं उपयोग कर बहुत ही कम समय में ज़्यादा से ज़्यादा मादा पशुओं को फैलाया जा सकता है.
2. ऐसे सांडों की मृत्यु के उपरांत भी उसका हिमीकृत (फ्रोज़न) बीज कृत्रिम गर्भाधान विधि द्वारा उपयोग में लाया जा सकता है.
3. इस विधि से मादा पशुओं के जननांगों से संबंधित रोगों की पहचान एवं निदान किया जाना संभव हो जाता है, जो उन्नत पशु-प्रजनन से पशु विकास की प्रक्रिया का बहुत बड़ा रोड़ा होता है.
4. इस विधि में सफाई का विशेष ध्यान रखा जाता है, जिससे मादा को प्रजनन संबंधित बीमारियों में काफी हद तक कमी आ जाती है और गर्भाधान की दर भी बढ़ जाती है.

कृत्रिम गर्भाधान की सफलता :-

कृत्रिम गर्भाधान की प्रक्रिया मुख्यत: चार कारकों पर निर्भर होती है :

1. कृत्रिम गर्भाधान के लिए उपयोग किए जाने वाले सांडों का कुशल चयन.
2. प्राप्त बीज के गुणों का मूल्यांकन एवं उपयुक्त कार्यों द्वारा सही अनुसरण.
3. प्रक्रिया के दौरान जीवाणु रहित व्यवस्थाओं का पूर्णत: पालन
4. गर्मी में आई मादा पशु का उचित रूप से परीक्षण तथा सही पद्धति से गर्भाधान.
5. इस विधि के अंतर्गत स्थानीय नस्ल की मादा पशुओं का प्रजनन, विदेशी उच्च

गुणयुक्त सांडों से कराए जाने के निम्नलिखित लाभ होते हैं.

- स्थानीय नस्ल के मादा पशुओं में क्षेत्र विशेष की जलवायु में अपने आप को ढालने का गुण होता है, यही गुण उसकी सन्तति में आता है.
- उच्च गुणवत्ता वाले नर में दुग्ध उत्पादन वाला गुण, अनुवांशिक रूप से रहता है, जो उसकी सन्तति में अंतरित हो जाता है. फलतः इस प्रक्रिया से उत्पन्न बछियों में स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप अपने आप को ढालने तथा अधिक उत्पादन के अनुवांशिक गुण प्राप्त होते हैं.
- ऐसी संततियों में शीघ्र बाढ़ प्राप्त करने की क्षमता होती है, जिससे इसके पालन-पोषण एवं खान-पान पर होने वाले व्यय को काफी हद तक कम किया जा सकता है.

गायों के संदर्भ में, हमारे देश में जर्सी पशु के बीज से पशु प्रजनन की प्रक्रिया अपनाई गयी है. जिससे उत्पन्न सन्तति 15-18 माह में प्रजनन हेतु तैयार हो जाती है. उल्लेखनीय है कि स्थानीय मादा पशु में सामान्यतः यह आयु 3 वर्ष होती है. स्पष्ट है कि संकरण से उत्पन्न बछड़ी स्थानीय मादा पशु की तुलना में आधी आयु में ही प्रजनन योग्य हो जाती है. इस प्रकार उसके रखरखाव में होने वाला व्यय आधा हो जाता है, किन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि सन्तति के खान-पान एवं रखरखाव पर पूरा ध्यान दिया जाये; अन्यथा वह अपने पूर्ण गुण विकसित नहीं कर पाएगी और हमारा पूरा प्रयास विफल हो जाएगा. पशु विकास कि यह अत्यंत महत्वपूर्ण सीढ़ी है.

ऐसे संकर मादा-पशुओं में नियमित प्रजनन की क्षमता होने से आवश्यकता अनुरूप संततियां प्राप्त की जा सकती हैं. जर्सी गाय औसतन 6-8 लीटर दूध देती है तथा इनके दूध में 4-5 प्रतिशत चिकनाई होती है. यह औसतन 26-28 माह में गाय बनकर ब्याने के बाद 300 दिन तक दूध देने में सक्षम होती है. इस प्रकार कृत्रिम गर्भाधान प्रक्रिया के द्वारा पशुपालक अपनी वर्तमान आय को आधे समय में दो गुना कर सकते हैं तथा पशु-विकास के लक्ष्य को आसानी से प्राप्त कर सकते हैं. हालांकि सभी अच्छी तकनीकों की तरह ही कृत्रिम गर्भाधान की भी अपनी सीमाएं अवश्य हैं.

गर्भाधान की सीमाएं :-

1. कृत्रिम गर्भाधान के लिए प्रशिक्षित व्यक्ति अथवा पशु चिकित्सक की आवश्यकता होती है तथा तकनीशियन को मादा पशु के प्रजनन अंगों की जानकारी होना आवश्यक है.
2. इस विधि में विशेष यंत्रों की आवश्यकता होती है.

3. इस विधि में असावधानी बरतने तथा सफाई का विशेष ध्यान न रखने से गर्भ धारण की दर में कमी आ जाती है.

श्वेत क्रांति क्या है ? श्वेत क्रांति से तात्पर्य प्रचुर मात्रा में दुग्धोत्पादन करना है; ताकि देश के आम नागरिक की दूध एवं दुग्ध पदार्थों की उपलब्धता से दूध की आपूर्ति सुनिश्चित की जा सके. भारत में श्वेत क्रांति की शुरुआत "ऑपरेशन फ्लड" कार्यक्रम से प्रारंभ हुई, जिसका जनक डॉ. वर्गीस कुरियन को कहा जाता है.

डॉ वर्गीस कूरियन एक प्रसिद्ध सामाजिक उद्यमी थे और शिक्षा-दीक्षा से एक इंजीनीयर थे. इनको भारत में "दुग्ध क्रांति" लाने के लिए जाना जाता है, जिसे "ऑपरेशन फ्लड" के नाम से जाना गया. यह दुग्ध क्रांति हेतु एक ऐसा ऑपरेशन था, जिससे 1998 में भारत को अमेरिका से भी अधिक तरक्की दी. उन्होंने लगभग 30 संस्थाओं की स्थापना की, जिसमें मुख्य हैं अमूल, जीसीएमएमएफ, इरमा, एनडीडीबी, जो मुख्य रूप से किसानों द्वारा प्रबंधित हैं और पेशेवरों द्वारा चलाई जा रही हैं. सहकारी दुग्ध विपणन संघ के संस्थापक अध्यक्ष होने के नाते डॉ कुरियन अमूल इंडिया के उत्पादों के सृजन के लिए ज़िम्मेदार हैं.

विश्व में सहकारी आंदोलन के सबसे महानतम समर्थकों में से एक डॉ कुरियन ने भारत ही नहीं; बल्कि अन्य देशों में लाखों लोगों को गरीबी के जाल से बाहर निकाला है. डॉ कुरियन को पद्म विभूषण (भारत के दूसरे सर्वोच्च नागरिक सम्मान), विश्व खाद्य पुरस्कार और सामुदायिक नेतृत्व के लिए मैग्सेसे पुरस्कार सहित कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया. डॉ कुरियन के नेतृत्व/ मार्गदर्शन में सहकारिता आधारित दुग्ध उत्पाद कार्यक्रम आनंद (गुजरात) में प्रारंभ किया गया, जो कालांतर में पूरे देश में अपनाया गया. इसे आनंद पैटर्न के नाम से जाना जाता है.

दुग्ध क्रांति हेतु कृत्रिम गर्भाधान का महत्व भुलाया नहीं जा सकता. नवीनतम तकनीक एवं कृत्रिम गर्भाधान के जरिये न केवल उन्नत नस्ल के पशु उत्पन्न किया जाना संभव है, बल्कि इन उन्नत नस्ल के पशुओं के रखरखाव में कम लागत के साथ अधिकतम दुग्ध उत्पादन किया जा सकता है. साथ ही इससे चरणबद्ध तरीके से पशु नस्ल सुधार/ पशुपालन/ उत्पादन/ विपणन की शृंखला स्थापित की जाती है, जिससे दुग्ध उत्पादन में कई गुना वृद्धि हो जाती है. अतः कृत्रिम गर्भाधान का श्वेत क्रांति में अधिकतम महत्व है.

निधि सोनी, प्रबंधक (राजभाषा), क्षेत्रीय कार्यालय, इंदौर

धीरज शर्मा

कृषि विकास में बैंकों की भूमिका

भारत के कृषि विकास की प्रक्रिया में बैंकों की भूमिका एक अत्यंत महत्वपूर्ण उत्प्रेरक साधन की रही है. बिना बैंकों के योगदान के देश में ग्रामीण या कृषि विकास के वर्तमान परिदृश्य की कल्पना करना बेमानी है. बैंकों ने विकास की किसी भी प्रक्रिया के लिए साख सुविधा की उपलब्धता एवं संस्थागत वित्त की लगातार उपलब्धता सुनिश्चित की है, साथ ही देश के ग्रामीण क्षेत्रों में अपना जाल बिछाकर साख सुविधा को अत्यंत सहज रूप में ग्रामीण कृषकों को उपलब्ध कराया है. हरित क्रांति के समय कृषि में जो आधुनिक तकनीक का प्रवेश हुआ, वह बैंकों के सहयोग के बिना संभव नहीं था. यह आधुनिक तकनीक बाज़ार आधारित एवं अत्यंत खर्चीली रही है. आधुनिक औजारों, यंत्रो, बीजों, उर्वरकों, सिंचाई के साधनों, उन्नत पशु नस्ल, आहार हेतु मशीनीकृत प्रोसेसिंग संयंत्रों आदि सभी के लिए भारी पूंजी निवेश हेतु बैंकों ने महत्वपूर्ण सहायता उपलब्ध करायी है.

वर्ष 2001 में भारतीय रिजर्व बैंक ने "बैंकिंग प्रणाली से कृषि और संबंधित गतिविधियों के लिए ऋण का प्रवाह" विषय पर डॉ. वी.एस. व्यास की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया, जिसने ग्रामीण ऋण प्रणाली में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की प्रासंगिकता की जांच की और उन्हें व्यवहार्य बनाने के लिए विकल्प दिए. डॉ.व्यास समिति की एक सिफारिश के रूप में वर्ष 2005 में ग्रामीण बैंकों के समेकन की प्रक्रिया शुरू की गई. वर्ष 2005 में एक राज्य के भीतर प्रायोजक बैंकवार समामेलन का पहला चरण शुरू किया गया और वर्ष 2012 में दूसरा चरण एक राज्य के भीतर सभी प्रायोजक बैंकों के लिए था.

बेहतर बुनियादी ढांचा, कंप्यूटरीकरण, अनुभवी कर्मियों, साझा प्रचार और विपणन प्रयासों आदि के माध्यम से बेहतर ग्राहक सेवा उपलब्ध कराने की दृष्टि से समामेलन करके क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संरचनात्मक समेकन की प्रक्रिया शुरू की है. परिचालन क्षेत्र बढ़ने, उच्च मूल्यों पर क्रेडिट एक्सपोजर सीमा में वृद्धि और बैंकिंग कार्यकलापों के विविधीकरण का लाभ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को भी हुआ है. समामेलन के परिणामस्वरूप क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या 196 से घटकर 31 मार्च, 2013 को 64 रह गई. देश के 635

जिलों में कार्यरत क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शाखाओं की संख्या बढ़कर 31 मार्च, 2013 को 17856 हो गई.

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा किए गए निवेशों में 15.32% की वृद्धि दर्ज हुई और ये निवेश 31 मार्च, 2012 के रु.95975 करोड़ से बढ़कर 31 मार्च 2013 को रु.110683 करोड़ हो गए. एक ओर जहाँ सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) में निवेश की राशि रु.49938 करोड़ थी, वहीं दूसरी ओर गैर-सांविधिक चलनिधि अनुपात में निवेश की राशि रु.60746 करोड़ रही. हाल के कुछ वर्षों में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का निवेश जमा अनुपात (आईडीआर) क्रमिक रूप से घटते-घटते 31 मार्च 2013 की स्थिति के अनुसार 52.34% हो गया, जबकि 31 मार्च 2001 तक यह 72% था.

जैसाकि भारत सरकार द्वारा सुनिश्चित किया गया है, ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय समावेशन के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक के दिशानिर्देशानुसार बड़ी संख्या में 'अल्प सुविधायुक्त खाते' (नो फ्रिल्स खाते) खोल कर और सामान्य क्रेडिट कार्ड (जनरल क्रेडिट कार्ड-जीसीसी) के अंतर्गत कार्डधारकों को वित्तीय सहायता प्रदान कर एक समूह के रूप में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक एक मजबूत मध्यस्थ के रूप में उभरकर सामने आए हैं. 31 मार्च, 2013 तक अल्प सुविधायुक्त खातों की संख्या 319.59 लाख थी. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शाखाओं की संख्या बढ़कर 31 मार्च, 2013 को 17856 हो गई, जबकि 31 मार्च, 2012 की स्थिति के अनुसार यह 16909 थी.

ग्रामीण क्षेत्र के बैंक:

आजादी के पूर्व ग्रामीण साख की आवश्यकताओं की पूर्ति निजी साहूकारों और जमींदारों के अतिरिक्त सहकारी साख संस्थानों के द्वारा की जाती रही है. देश में सन 1904 में भारतीय सहकारी साख अधिनियम पास किया गया था. बाद में सन 1912 में एक व्यापक अधिनियम पास करके प्राथमिक साख समितियों के साथ-साथ जिला स्तरीय सहकारी बैंक केंद्रीय एवं राज्य स्तरीय राज्य सहकारी बैंकों की स्थापना की व्यवस्था की गयी. आजादी के बाद के प्रारम्भिक वर्षों तक सहकारी बैंकों ने ग्रामीण व कृषि साख की उपलब्धता की दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किया. समय के साथ बढ़ती साख आवश्यकताओं तथा सहकारी बैंकों की कमियों व असफलताओं को दृष्टिगत रखते हुये निजी क्षेत्र के वाणिज्यिक बैंकों से इस दिशा में अधिक सार्थक भूमिका निभाने की अपेक्षा की जाने लगी. फरवरी 1969 में इस उद्देश्य से देश के बड़े निजी बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण लागू किया गया. परंतु यह कदम अपर्याप्त होने के कारण दिनांक 19.07.1969 को 14 निजी बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया. इस राष्ट्रीयकरण से ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रो में बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार किया जाना संभव हो सका. अब तक निजी क्षेत्र के जो बैंक कृषि तथा समाज के पिछड़े वर्ग की साधारण आवश्यकताओं के प्रति उदासीन थे, राष्ट्रीयकरण के बाद साख

नीतियों एवं पद्धतियों में क्रांतिकारी परिवर्तन के द्वारा वे सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति के संवाहक बन गए. सामाजिक बैंकिंग की लक्ष्य प्राप्ति के लिए दिनांक 15.04.1980 को 6 और बड़े निजी बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया. इन प्रयासों से वाणिज्यिक बैंकों का ग्रामीण क्षेत्रों में अभूतपूर्व विस्तार हुआ. वह बैंकिंग प्रणाली जो कल तक वर्ग विशेष के हितों का पोषण करती थी, अब सामाजिक सरोकारों से जुड़ गयी.

राष्ट्रीयकरण के प्रथम चरण के पूर्व अर्थात जुलाई 1969 में जहां अनुसूचित बैंकों की ग्रामीण व अर्धशहरी शाखाओं की संख्या केवल 5204 थी, वहीं ये शाखाएं मार्च, 1994 तक 47099 लेकिन जून, 2000 तक कुछ घटकर 46146 हो गयीं. जुलाई, 1969 से जून, 2000 तक देश में बैंक शाखाओं की कुल संख्या 8321 से बढ़कर 69417 हो चुकी थी.

दिनांक 31.03.2012 की स्थिति में कुल 81240 बैंक शाखाओं में से 46244 शाखाएं ग्रामीण व अर्धशहरी क्षेत्रो में थीं. रिजर्व बैंक के अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की जमाराशि एवं ऋण की तिमाही सांख्यकी मार्च, 2013 के अनुसार दिनांक 31.03.13 को सभी अनुसूचित व गैर अनुसूचित बैंकों की कुल 104647 शाखाएं थी, जिनमें से 66273 शाखाएं ग्रामीण व अर्धशहरी थी.

अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रदत्त कुल ऋणराशि, जहां वर्ष 1960-61 में 1320 करोड़ रुपये थी, वहीं मार्च, 1994 में यह ऋणराशि बढ़कर रु.180017 करोड़ तथा मार्च, 2012 को रु.4371400 करोड़ रुपये तक जा पहुंची. भारतीय रिजर्व बैंक की 'भारत में बैंकिंग प्रवत्ति एवं प्रगति संबंधी रिपोर्ट' 2011-12 के अनुसार मार्च, 2012 में कृषि व सहायक गतिविधियो को प्रदत्त बकाया ऋण रुपये 522600 करोड़ था. इनमें से रुपये 478300 करोड़ बकाया पब्लिक सैक्टर बैंकों का था.

इनके अलावा भूमि विकास बैंक भी ग्रामीण वित्तीय आवश्यकताओं के अल्प भाग को पूरा करते हैं. ये बैंक मुख्यत: किसानों की दीर्घकालीन ऋण संबंधी जरूरतों की पूर्ति करते हैं. ये दीर्घकालीन ऋण भूमि खरीदने, भू-सुधार जैसे कार्यों के लिए दिये जाते हैं. यूनियन बैंक ऑफ इंडिया भी अपने विशाल नेटवर्क के साथ ग्रामीण एवं अर्धशहरी क्षेत्रों में ग्रामीण साख की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है.

बैंक एवं ग्रामीण बचतों का संग्रहण:

ग्रामीण क्षेत्र की बचतों के एकत्रीकरण में बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की महती भूमिका रही है. केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन के अनुमानों के अनुसार वर्ष 1991-92 में देश में सकल घरेलू बचत का 81.90% भाग पारिवारिक क्षेत्र से तथा शेष निजी निगम तथा सार्वजनिक क्षेत्र से प्राप्त किया गया था.

इतनी बड़ी राशि का एक बहुत बड़ा भाग ग्रामीण क्षेत्रों से प्राप्त किया जाता रहा है. बचत का एक बहुत बड़ा भाग परंपरागत रूप से सोने या चांदी के आभूषणों के रूप में या फिर जमीन में रहा है. विगत में ग्रामीण बैंकिंग सुविधाओं के विस्तार के परिणामस्वरूप ग्रामीण बचत को तरलता प्राप्त हुई है. अब ग्रामीण लोग अपनी बचत का एक बड़ा भाग बैंकों में जमा रखने लगे हैं. ग्रामीण बचत के राष्ट्रीयकरण में हुई वृद्धि से राष्ट्रीय विकास को अपेक्षाकृत गति मिली है. अनुसूचित वाणिज्यक बैंकों द्वारा मार्च, 1989 को रु.21668 करोड़ रूपया ग्रामीण बचतों का संग्रहण किया गया था, जो मार्च 1993 से बढ़कर 423502 करोड़ रुपये हो गयी. इन आंकड़ो में वाणिज्यिक बैंकों की अर्धशहरी शाखाओं द्वारा जुटाई गयी जमा को शामिल नहीं किया गया है. दूसरी ओर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने मार्च 2011 तक 166200 करोड़ रुपये की राशि बचत के रूप में जुटाई थी, जो मार्च, 1991 में मात्र रु.4989 करोड़ रुपये थी. भारत में सकल घरेलू बचत की दर बैंकिंग सुविधाओं के विस्तार के साथ क्रमशः बढ़ी है. प्रथम योजना काल में सकल घरेलू उत्पाद का 10% थी, जो छठवीं योजना काल में 22% तथा सातवीं योजनाकाल में बढ़कर 24% से अधिक हो गयी. जमाराशि में वृद्धि के फलस्वरूप बैंकों के उधार देने की क्षमता में वृद्धि होती है और इस क्षमता के बढ़ने से ग्रामीण विकास की गति को बढ़ावा मिलता है.

बैंक व कृषि वित्तपोषण

कृषि वित्तपोषण से तात्पर्य कृषि विकास हेतु सुनिश्चित साख योजना से है. वर्तमान में कृषि वित्तपोषण का स्वरूप अत्यंत व्यापक होता जा रहा है. कृषि विकास के समग्र पहलुओं पर ध्यान देने के साथ समन्वित ग्रामीण विकास और कुटीर एवं ग्रामीण उद्योगों के कृषि आधारित हिस्सों के वित्तपोषण को कृषि वित्तपोषण के क्षेत्र में ही सम्मिलित किया जा रहा है. इसका प्रमुख उद्देश्य खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के साथ-साथ ग्रामीण रोजगार साधनों में वृद्धि द्वारा कृषि क्षेत्र में प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोत्तरी लाना है. नियोजित अर्थव्यवस्था में कृषि का तीव्र विकास करने के लिए ऋण की आवश्यकता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है. कृषि आधारित उद्योगों में भी तीव्र प्रतिस्पर्धा में टिके रहने तथा विकास की होड़ में आगे निकलने के लिए आवश्यकता साख की मांग लगातार बढ़ती जा रही है.

भारत सरकार द्वारा हर वर्ष बैंकों से कृषि वित्तपोषण हेतु अपेक्षा की जाती है. वर्ष 2011-12 हेतु सरकार द्वारा प्रदत्त लक्ष्य रू.475000 करोड़ के पेटे बैंकों ने रु.511000 करोड़ संवितरित किये. वर्ष 2012-13 हेतु सरकार द्वारा रु.575000 करोड़ के संवितरण का लक्ष्य बैंकों को प्रदान किया गया है. वर्ष 2016-17 हेतु सरकार द्वारा रु.900000 करोड़ की कृषि ऋण संवितरण का लक्ष्य निर्धारित किया.

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में विविधता लाने तथा कृषि के विकास व विस्तार हेतु

योजनाकाल के आरंभ से ही ध्यान दिया गया. इसी संदर्भ में ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति का वर्ष 1951 में गठन किया गया. इसी समिति ने 1954 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में कृषि वित्तपोषण व्यवस्था में आधारभूत सुधार करने पर विशेष बल दिया और स्पष्ट किया कि संस्थागत साख योजना उचित ढंग से जरूरतमन्द लोगों तक पहुंचाने के लिए इससे सम्बद्ध वित्तीय संस्थाओं में तो समन्वय होना ही चाहिए. साथ ही, इसके कार्यान्वयन में केंद्रीय सरकार व राज्य सरकारों के मध्य भी पर्याप्त सहयोग की भावना एवं सक्रियता होनी चाहिए. इस रिपोर्ट में इस बात पर और विशेष रूप से बल दिया गया कि कृषि नीति में सबसे अधिक प्राथमिकता लघु व सीमांत कृषकों एवं अन्य कमजोर वर्गों को मिलनी चाहिए. इस समिति की रिपोर्ट के अंतर्गत ग्रामीण साख की जरूरतों को पूरा करने के लिए सहकारी समितियों के विकास का सुझाव दिया गया था. परंतु जुलाई, 1966 में रिजर्व बैंक द्वारा बी. वैंकटमैया की अध्यक्षता में गठित अखिल भारतीय ग्रामीण साख पुनरीक्षण समिति ने विचार व्यक्त किया कि केवल सहकारिता का ढांचा ग्रामीण साख की जरूरतों को पूरा करने में सक्षम नहीं है. इस समिति के विचारानुसार सहकारी बैंकों के साथ-साथ व्यापारिक बैंकों को भी ग्रामीण साख की जरूरतों को पूरा करने के लिए सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए. राष्ट्रीय कृषि आयोग ने भी अखिल भारतीय ग्रामीण साख पुनरीक्षण समिति के ग्रामीण साख की पूर्ति हेतु बहु-एजेंसी पद्धति के सुझाव का समर्थन किया. वर्तमान में संस्थागत ग्रामीण साख व्यवस्था के अंतर्गत अधिसूचित वाणिज्यिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, सहकारी बैंक तथा भूमि विकास बैंकों का वृहद जाल कृषि वित्तपोषण व्यवस्था में सहभागिता किए हुये है. नाबार्ड की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार सहकारी वाणिज्यिक बैंक तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक द्वारा प्रदान किए गए कृषि ऋण की कुल मात्रा वर्ष 1991-92 में रु.11308 करोड़ रुपये थी, जो वर्ष 2010-11 में बढ़कर रुपये 446779 करोड़ रुपये हो गयी. मार्च 2011 की स्थिति में वाणिज्यक बैंकों, सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने क्रमशः रू.332706 करोड़ (कुल ऋण का 74%) रु.70105 करोड़ (कुल ऋण का 16%) तथा रु.43968 करोड़ (कुल ऋण का 10%) संवितरित किए. वर्ष 2010-11 के दौरान बैंकों ने रु.43370 करोड़ की ऋण सीमा मंजूरी के साथ 72.6 लाख किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए. मार्च 2011 तक कुल जारी क्रेडिट कार्डो की संख्या 1009.3 लाख हो चुकी थी.

उपयुक्त सभी को देख कर यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि कृषि विकास में बैंकों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है.

धीरज शर्मा, वरिष्ठ प्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय, उदयपुर

बृज नंदन तिवारी

भारतीय किसानों की पारंपरिक एवं आधुनिक ऋणग्रस्तता

विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार भारत के कुल भूभाग का 60.5% हिस्सा कृषि कार्यों के लिए उपयोग किया जाता है, जो देश की लगभग 50% आबादी की आजीविका का मुख्य साधन है. देश में सरकार एवं विभिन्न गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा वैज्ञानिक विधि से कृषि को प्रोत्साहित करने के प्रयास के बावजूद अधिकतर भारतीय किसान खेती के पुराने एवं पारंपरिक तौर तरीकों पर ही निर्भर रहते हैं. साथ ही साथ कृषि की मानसून पर निर्भरता एवं अनेकों प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, अतिवृष्टि, सूखा आदि से कृषि उत्पादन प्रभावित होता रहा है, जिससे किसानों हेतु कृषि आय के लिए एक अनिश्चितता की स्थिति उत्पन्न होती है. इसके फलस्वरूप किसानों को विपरीत परिस्थितियों में कृषि निवेश हेतु ऋण लेने के लिए विवश होना पड़ता है.

किसानों की पारंपरिक ऋणग्रस्तता

देश में जनसंख्या के अनुसार वित्तीय एवं ऋण सुविधाओं की तुलनात्मक रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में पहुंच अभी भी सीमित है, जिससे अशिक्षित, कम पढ़े-लिखे किसान, खेतिहर मजदूर, पट्टे पर कृषि करने वाले तथा कम जोत के किसान सरकारी एवं वित्तीय संस्थाओं से ऋण की प्रक्रिया तुलनात्मक रूप से जटिल होने के कारण सेठ, साहूकार आदि से ऋण लेने के लिए सुगमता से प्रेरित होते हैं. चूंकि प्राकृतिक आपदाओं के कारण उत्पादन कम होने की स्थिति में किसानों के पास कृषि में निवेश के लिए पर्याप्त धन की अनुपलब्धता एवं अधिकतर किसानों के पास कृषि के अतिरिक्त कोई अन्य व्यवसाय न होने के कारण वे कृषि मजदूरी करने एवं ऋण लेकर कृषि करने के लिए विवश होते हैं. भारतीय किसान अपनी तात्कालिक कृषि आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ऋण लेने के लिए अनेक पारंपरिक तौर तरीकों पर निर्भर करता है.

(क) मौद्रिक ऋण एवं उनसे उत्पन्न समस्याएं :

मौद्रिक ऋण में किसान सेठ, साहूकार आदि से नकद रुपये ऋण के रूप में लेकर फसल उत्पादन पर निवेश करता है. ऋण किसी संस्था से न होकर व्यक्ति आधारित होने से इस पर ब्याज की दर अपेक्षाकृत अधिक होती है, जोकि 4% से 12% मासिक तक होती है. चूंकि फसल उत्पादन एवं कृषि आय पर कई तरह के बाहरी कारकों का प्रभाव पड़ता है, जिससे अधिक ब्याज दर पर ऋण लेकर कृषि पर निवेश राशि की वापसी आसानी से नहीं हो पाती है. किसानों द्वारा लिया गया नगद ऋण कभी- कभी कृषि कार्य में निवेश न करके अपने व्यक्तिगत कार्यों में उपयोग करने से ऋण राशि से कोई आय उत्पन्न नहीं होती है और साथ ही ऋण पर लगने वाला मासिक ब्याज की दर चक्रवृद्धि होने से बहुत ही कम समय में ऋण राशि बढ़कर मूलधन का कई गुना हो जाती है और इतनी बड़ी राशि किसानों के ऋण चुकाने की क्षमता से बाहर हो जाती है. उक्त ऋण व्यक्तिगत होने के कारण ऋण वसूली के कोई दिशानिर्देश नहीं होते हैं. अतएव ऋणदाता वसूली के लिए किसानों पर बार-बार अनुचित दबाव डालता है. फलस्वरूप किसान को ऋण चुकता करने के लिए अपनी जमीन, घर बेचना पड़ता है.

(ख) कृषि संसाधन एवं सेवा आधारित ऋण एवं इनसे उत्पन्न समस्याएं :

कृषि संसाधन आधारित ऋण में किसान दूसरे मित्र किसानों से कृषि में उपयोग होने वाले तथा फसल उत्पादन में उपयोगी उपकरण, खाद, बीज, पानी इत्यादि ऋण के रूप में लेता है एवं ऋण चुकाने के लिए मित्र किसानों को उनकी कृषि जरूरतों के समय वस्तु के बदले वस्तु एवं सेवा के बदले सेवा का भुगतान करता है. चूंकि इसमें कोई ब्याज देय नहीं होता है, अतएव यह एक प्रकार से ऋण न होकर कृषि उपयोगी संसाधनों एवं वस्तुओं एवं सेवाओं का विनिमय होता है; परंतु कभी-कभी ऋणी के पास वस्तुओं/ संसाधनों/ सेवाओं की उपलब्धता न होने पर ऋण चुकौती के लिए उसे वस्तु अथवा सेवाओं के मूल्य के बराबर की मुद्रा का भुगतान करना पड़ता है. इस प्रकार का ऋण किसानों के लिए प्रचलित सबसे अधिक सुगम एवं सुविधाजनक होता है. चूंकि इस व्यवस्था में ब्याज का भुगतान नहीं करना पड़ता है, केवल वस्तु एवं सेवाओं का ही विनिमय होता है. अत: यह किसानों के बीच अपनायी जानी वाली प्रचलित एवं लोकप्रिय विधि है.

(ग) कृषि जोत आधारित ऋण एवं उससे उत्पन्न समस्याएं :

कृषि जोत आधारित ऋण अधिकतर कम जोत वाले किसान, खेतिहर मजदूर एवं भूमिहीन किसानों के लिए आजीविका का मुख्य स्त्रोत है. इसमें मजदूर या छोटे किसान किसी

बड़ी जोत वाले किसान से खेती की भूमि तात्कालिक अथवा दीर्घकालिक रूप से कृषि कार्य हेतु उधार के रूप में लेते हैं एवं ऋण का भुगतान फसल में अनुपात के हिसाब से हिस्सेदारी अथवा मौद्रिक रूप से करते हैं.

कृषि निवेश	**सेवाएं**	**भूमिदाता एवं भूमिग्राही के बीच भुगतान/ फसल का अनुपात**
भूमिदाता	भूमिग्राही ऋणी	50:50
भूमिग्राही ऋणी	भूमिग्राही ऋणी	75:25 / 60:40
50% भूमिदाता : 50% भूमिग्राही	50% भूमिदाता : 50% भूमिग्राही	50% भूमिदाता : 50% भूमिग्राही
भूमिग्राही ऋणी	भूमिग्राही ऋणी	प्रति एकड़ के हिसाब से भूमिदाता को नगद भुगतान

उपयुक्त विधि में कृषि ऋण के भुगतान का अनुपात भूमिदाता एवं भूमिग्राही के अनुबंध के अनुसार परिवर्तित भी होता रहता है. चूंकि ये अनुबंध लिखित न होकर मौखिक होते हैं, अत: भूमिदाता एवं भूमिग्राही के मध्य विवाद भी उत्पन्न होता है, जिसके कारण भूमिग्राही ऋणी को निवेशित कृषि भूमि से हाथ धोना पड़ता है.

(घ) सेवा ऋण एवं समस्याएं:

सेवा ऋण में किसान फसलों के उत्पादन से संबंधित सेवाएं जैसे जुताई, गुड़ाई, बुवाई, कटाई, सिंचाई इत्यादि में दूसरे किसानों की सेवाएं ऋण स्वरूप लेता है एवं इसका भुगतान दूसरे किसानों के कृषि कार्यों में सेवा कार्य करके करता है. कभी- कभी किसानों को स्वयं के कृषि कार्यों में व्यस्तता के कारण सेवाएं न दे पाने की स्थिति में सेवाओं के बदले नगद भुगतान करना पड़ता है.

(ङ) कृषि कार्य के अतिरिक्त ऋण:

कृषि कार्य के अतिरिक्त पशुधन खरीद, गृह निर्माण एवं कई अन्य आकस्मिक कार्य जैसे बीमारी एवं विवाह इत्यादि कार्यों के लिए किसान ऋण लेने के लिए विवश होता है, जिसका भुगतान वह दुग्ध एवं उनके उत्पादों की बिक्री, पशुओं की खरीद-बिक्री से प्राप्त धन एवं कृषि आय से करता है.

किसानों की आधुनिक ऋणग्रस्तता

(क) कृषि फसल ऋण :

विभिन्न प्रकार के वित्तीय संस्थानों द्वारा किसानों को फसल उत्पादन के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है, जिसमें किसान क्रेडिट कार्ड किसानों के प्रत्येक फसल के लिए बार-बार ऋण आवेदन से छूट होने के कारण किसानों के बीच काफी लोकप्रिय है.

(ख) कृषि संसाधन निवेश संबंधी ऋण:

किसानों को नए एवं पुराने कृषि संसाधनों जैसे ट्रैक्टर, ट्रॉली, कल्टीवेटर, थ्रेसर, रोटावेटर, कंबाइन, पानी की मशीनें इत्यादि खरीदने के लिए मियादी ऋण की सुविधा प्रदान की जाती है.

(ग) संयुक्त कृषक ऋण:

इसमें कई किसानों को समूह के रूप में संयुक्त रूप से वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है.

(घ) भूमि विकास के लिए ऋण:

अनुपजाऊ भूमि, बंजर भूमि, ऊसर भूमि इत्यादि में सुधार एवं उन्हें और अधिक उपयोगी व उपजाऊ बनाने के लिए विभिन्न वित्तीय संस्थानों द्वारा ऋण सुविधा उपलब्ध कराई जाती है.

(ड) दुधारू पशुओं की खरीद एवं देखभाल के लिए ऋण :

कृषि के साथ पशुपालन किसानों का मुख्य व्यवसाय है. दुधारू पशुओं की खरीद, कृषि में प्रयुक्त होने वाले पशुओं, डेयरी एवं दुग्ध उत्पाद के लिए भी मीयादी ऋण की सुविधा किसानों को उपलब्ध है.

बृज नंदन तिवारी, वरिष्ठ प्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय, लखनऊ

अरविन्द कुमार

किसान क्रेडिट कार्ड - कार्ड एक-लाभ अनेक

किसान क्रेडिट कार्ड किसानों के लिए एक अच्छी योजना है. इससे किसानों को मदद मिलती है और समय पर खेती की आवश्यकता के लिए आसानी से ऋण मिलता है, जिससे समय रहते किसान खेती के लिए उपकरण, बीज एवं कृषि संबंधी जरुरी कार्यों को निष्पादित कर सकते हैं.

क्या है किसान क्रेडिट कार्ड?

किसान क्रेडिट कार्ड किसानों को पर्याप्त और समय पर ऋण उपलब्ध कराने की अग्रणी ऋण वितरण प्रणाली है. किसान क्रेडिट कार्ड एक बहुत ही सरल और आसानी से उपलब्ध होने वाली प्रक्रिया है, जिसके तहत किसान कृषि संबंधी गतिविधियों के लिए पैसा उधार ले सकता है. किसान क्रेडिट कार्ड के तहत किसानों को एक क्रेडिट कार्ड एवं पासबुक उपलब्ध कराई जाती है, जिसमें उपभोक्ता का नाम, पता, जमीन की जानकारी, उधार की अवधि, वैलिडिटी पीरियड और उपभोक्ता की पासपोर्ट साइज़ फोटो आदि जानकारी के तौर पर इंगित की जाती है. यह कार्ड एक परिचय पत्र की तरह काम करता है.

किसान क्रेडिट कार्ड का इतिहास

किसान क्रेडिट कार्ड योजना वर्ष 1998-99 में वित्तमंत्री यशवंत सिन्हा द्वारा शुरू की गई थी. उस वक्त वित्त मंत्री ने अपने वक्तव्य में कहा था कि किसान क्रेडिट कार्ड योजना के तहत बैंक द्वारा किसानों को एक तरह से गोद लिया जायेगा, जिससे किसान खेती हेतु उर्वरक, बीज, खाद और कीटनाशक खरीद सकें. अगस्त, 1998 में शुरू हुई किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) योजना एक ऐसे अभिनव ऋण वितरण तंत्र के रूप में उभरी है, जिससे किसानों की उत्पादन ऋण संबंधी आवश्यकताएं सही समय पर बिना किसी कठिनाई के पूरी होती हैं. योजना का कार्यान्वयन विशाल संस्थागत ऋण ढांचा, जिसमें वाणिज्यिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और सहकारी बैंक शामिल हैं, के जरिए पूरे देश में

किया जा रहा है और इस योजना को बैंकरों और किसानों के बीच व्यापक स्वीकार्यता प्राप्त हुई है. तथापि, पिछले 15 वर्षों के दौरान नीति निर्माताओं, कार्यान्वयनकर्ता बैंकों और किसानों को इस योजना के कार्यान्वयन से संबंधित अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ा. नाबार्ड ने कुछ प्रमुख बैंकों के साथ विचार-विमर्श करके एक आदर्श किसान क्रेडिट कार्ड योजना तैयार की है. यह योजना रिजर्व बैंक के साथ मिलकर शुरू की गई थी. भारत सरकार द्वारा नियुक्त विभिन्न समितियों की सिफारिशों और नाबार्ड द्वारा आयोजित अध्ययनों में भी इस तथ्य की पुष्टि हुई है. अत: किसानों और बैंकरों दोनों के लिए इस योजना को आसान और कठिनाई मुक्त बनाने के लिए यह आवश्यक समझा गया कि वर्तमान किसान क्रेडिट योजना पर पुनर्विचार किया जाए. तदनुसार वित्त मंत्रालय, वित्तीय सेवाएं विभाग, भारत सरकार ने किसान क्रेडिट कार्ड को स्मार्ट कार्ड-सह-डेबिट कार्ड के तहत लाने हेतु इस योजना में परिवर्तन हेतु सुझाव देने के लिए इंडियन बैंक के अध्यक्ष- सह-प्रबंध निदेशक श्री टी.एम. भसीन की अध्यक्षता में योजना की समीक्षा हेतु एक कार्यदल का गठन किया.

भारत सरकार द्वारा कार्यदल की सिफारिशें स्वीकार कर लेने के बाद नाबार्ड द्वारा सहकारी बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा वाणिज्यिक बैंकों को किसान क्रेडिट कार्ड पर संशोधित परिचालनात्मक दिशानिर्देश वर्ष 2012 में जारी किए गए. बैंकों को सूचित किया गया है कि वे योजना को समयबद्ध रूप से कार्यान्वित करने हेतु यथोचित कार्यनीति बनाएं.

पूर्ववर्ती किसान क्रेडिट कार्ड योजना के दिशानिर्देशों में निम्नलिखित सुधार किए गए हैं :

पेपर कार्ड (पासबुक) प्लास्टिक कार्ड हो गया है - किसान क्रेडिट कार्ड एटीएम समर्थित डेबिट कार्ड के रूप में उपलब्ध है.

व्यापक डिलिवरी चैनल: शाखा/ चेक सुविधा/ बिजनेस करेस्पॉन्डेन्ट/ एटीएम (डेबिट कार्ड)/ पीओएस/ मोबाइल हैण्डसेट के जरिए परिचालन.

ऋण आवश्यकताओं के आकलन में अधिक स्पष्टता (फसलोत्तर/ घरेलू/ उपभोक्ता आवश्यकताओं के लिए लिमिट का 10% एवं रखरखाव खर्चे के लिए 20% तक का प्रावधान)

ऋण सीमा के आकलन के लिए अंतर्निहित लागत वृद्धि दूसरे साल के बाद से ऋण सीमा निश्चित करने के लिए 10% की नोशनल वृद्धि.

मियादी ऋण के अंतर्गत अधिक गतिविधियों का समावेश-

- संयुक्त देयता समूहों के वित्तपोषण पर बल देना.
- पहली बार ऋण लेते समय अर्थात एक ही बार दस्तावेज लेना और उसके बाद दूसरे वर्ष से सामान्य घोषणा.
- भूमि रिकार्ड का ऑनलाइन आकलन और प्रभार क्रिएट करना.

किसान क्रेडिट कार्ड के फायदे : किसान क्रेडिट कार्ड एक बहुत ही सरल प्रक्रिया है, जिसे आसानी से बिना पढ़ा-लिखा या कम पढ़ा-लिखा व्यक्ति समझ सकता है और उसका इस्तेमाल कर सकता है. किसान क्रेडिट कार्ड के तहत किसान को हर वर्ष लोन की प्रक्रिया नहीं करनी पड़ती. इस तरह यह कार्य समय से बचत और तनाव से राहत देता है. इसमें किसान को ऋण कैश क्रेडिट के तौर पर मिल जाता है. किसान क्रेडिट कार्ड के कारण किसान बिना किसी चिंता के अपने खेत के लिए बीज, खाद और कीटनाशक खरीद सकता है. किसान क्रेडिट कार्ड ऋण अदा करने का समय किसान की सुविधानुसार अर्थात फसल के विक्रय के बाद तक होता है. किसान क्रेडिट कार्ड के जरिये किसान बैंक की किसी भी शाखा से धन ले सकता है. किसान क्रेडिट कार्ड के प्रमुख फायदे इस प्रकार हैं:-

चुकौती के अधिक विकल्प:- किसान क्रेडिट कार्ड धारक को ऋण अदा करने के कई विकल्प हैं. यदि वह चाहे तो ऋण राशि एकमुश्त ब्याज के साथ जमा कर सकता है. यदि यह संभव न हो तो ऋण की राशि कई किश्तों में भी उपलब्धता के अनुसार जमा कर सकता है. इस बात का विशेष ध्यान देना है कि नवीकरण हेतु किसान क्रेडिट कार्ड खाता एक दिन क्रेडिट में होना चाहिए.

बाधारहित अदायगी प्रक्रिया:- किसान क्रेडिट कार्ड खाते की अदायगी के कई सारे साधन उपलब्ध है. खाताधारक अपनी जरूरत के अनुसार बैंक शाखा से नकद निकाल सकता है या खाते के डेबिट कार्ड से भी निकाला जा सकता है. खाताधारक बीज आपूर्तिकर्ता के खाते में या अन्य आपूर्तिकर्ताओं के खाते में आरटीजीएस/ एनईएफ़टी भी करवा सकता है.

एकल ऋण सुविधा:- फसल की बुवाई, जुताई व कटाई से संबन्धित समस्त जरूरतों के लिए किसान क्रेडिट कार्ड की ऋण सीमा ही पर्याप्त है. यह ऋण सीमा जिलास्तरीय जिला तकनीकी समिति द्वारा निर्धारित की जाती है तथा सीमा निर्धारित करते समय अन्य सारे खर्चों/ जरूरतों का भी ध्यान रखा जाता है.

भरोसेमंद व कम ब्याज दर:- चूंकि किसान क्रेडिट कार्ड केंद्र सरकार द्वारा शासित है, इसलिए इसमें ज्यादा ब्याज या अन्य प्रोसेसिंग चार्जेस लगने की कोई संभावना नहीं

है, जैसाकि अन्य साहूकारों/ गैर संस्थागत ऋणदाताओं द्वारा वसूला जाता है. यदि ऋण सीमा रु. 3.00 लाख तक हो, तो ब्याज दर 7% ही लगता है, जिसमें भी समय पर चुकाने पर 3% की आर्थिक सहायता (Subvention) मिलती है, जिससे प्रभावी ऋण दर मात्र 4% ही रह जाती है.

विक्रेताओं से नकद छूट:- किसान क्रेडिट कार्ड धारक अपने खाते से नकद निकाल कर विभिन्न व्यापारियों/ विक्रेताओं को अपनी खरीद फरोख्त के लिए दे सकता है, जिससे उसे कई अवसरों पर नकद छूट भी मिलती है तथा बाज़ार में किसान की साख भी बनी रहती है.

ऋण की उपलब्धता:- एक बार मंजूरी होने के बाद ऋण की सीमा का मूल्यांकन पांच वर्षों के बाद ही होता है तथा खाताधारक अपनी जरूरत के अनुसार रुपए निकाल सकता है. बढ़ती महंगाई को देखते हुए, किसान क्रेडिट कार्ड खाते का संचालन संतोषजनक होने पर ऋण सीमा में पिछले वर्ष की अपेक्षा 10% की वृद्धि की जा सकती है. ऋण की उपलब्धता वार्षिक जरूरतों को देखते हुए वर्ष के शुरू में ही उपलब्ध करा दी जाती है.

नकद निकासी सीमा:- किसान क्रेडिट कार्ड सुविधा का सबसे महत्वपूर्ण बिंदु यही है कि अन्य ऋणों की तरह इसमें कोई नकद निकासी सीमा निर्धारित नहीं है अर्थात खाताधारक अपनी जरूरत के अनुसार नकद निकाल सकता है

एकमुश्त चुकौती:- किसान क्रेडिट कार्ड धारक यदि चाहे तो ऋण की राशि को एक ही बार में कटाई का मौसम समाप्त होने के पश्चात एकमुश्त भी जमा करवा सकता है.

कम ब्याज दर, मार्जिन व प्रतिभूति:- किसान क्रेडिट कार्ड खाता धारक को इस सुविधा के लिए नाममात्र का ब्याज देना होता है तथा जिलास्तरीय तकनीकी समिति द्वारा निर्धारित ऋण सीमा में मार्जिन की भी आवश्यकता नहीं होती है. यदि ऋण सीमा रु. 3.00 लाख तक है, तो ब्याज दर मात्र 7% होती है, जिसमें ऊपर से 3% की आर्थिक सहायता (सबवेनसन) भी उपलब्ध होती है. इसके अलावा किसान को अलग से कोई प्रतिभूति भी बैंक के पास बंधक रखने की कोई आवश्यकता नहीं है, कृषि भूमि का ही सामान्य मोर्टगेज कर दिया जाता है.

दस्तावेजीकरण:- आमतौर पर दस्तावेजों के नियम अन्य ऋणों के समान ही हैं; परंतु कई राज्यों ने स्टाम्प ड्यूटी खत्म या नगण्य कर दी है. कई राज्यों में तो सिम्पल मोर्टगेज का भी कोई शुल्क नहीं है. दस्तावेजीकरण की प्रक्रिया संबंधित राज्य में राज्य के नियमानुसार अपनाई जाती है.

किसान क्रेडिट कार्ड के लिए पात्रता: किसान क्रेडिट कार्ड के लिए वे सभी किसान

आवेदन कर एकल या सम्मिलित क्रेडिट कार्ड प्राप्त कर सकते हैं, जो स्वयं के खेत में कृषि उत्पादन या अन्य किसी के खेत में कृषि का कार्य करते हों या किसी भी तरह के फसल उत्पादन से जुड़े हों. किसान क्रेडिट कार्ड किसान को बैंक के ऑपरेशन एरिया में होना जरुरी है. किसान क्रेडिट कार्ड के तहत बीज, उर्वरक, फसल कटाई के बाद का खर्च, जानवरों का खर्च व अन्य कृषि संबंधी गतिविधियों में लगने वाला खर्च एवं रखरखाव हेतु, किसान के घर की आवश्यकताओं के साथ कार्यशील पूंजी का उत्पादन, मत्स्यपालन आदि के लिए लघु अवधि के ऋण उपलब्ध कराता है.

किसान क्रेडिट कार्ड तकनीकी समिति की सुविधा: पर्याप्त सिंचाई की सुविधा, मिट्टी, जलवायु की उपयुक्तता, भंडार की सुविधा, उत्पादन की दृष्टि से ऋण की राशि कितनी होगी, यह अहम सवाल है. ऋण की राशि कृषि योग्य क्षेत्र, पूर्व उत्पादन, जमीन की उर्वरकता एवं खेती को पुन: कृषि योग्य बनाने में लगने वाली लागत आदि पर निर्भर होती है. हर जिले की जिला तकनीकी समिति अलग-अलग फसलों के लिए किसान की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए भूमि धारण के हिसाब से वित्त की मात्रा का निर्धारण करती है.

किसान क्रेडिट कार्ड के अंतर्गत ऋण सुविधा: पहले साल के लिए ऋण सीमा निर्धारित की जाती है, जो फसलों की खेती, प्रस्तावित फसल पद्धति पर निर्भर करती है. आगामी फसल एवं आवश्कतानुसार फसलों की देख-रेख का खर्च, उनका बीमा, किसानों का एसेट बीमा एवं दुर्घटना बीमा आने वाले प्रत्येक वर्ष 1 से 5 में लोन 10% बढाकर दिया जायेगा और जो ऋण सीमा दी गई थी, उसे पांचवे वर्ष में 150% तक बढ़ा दिया जायेगा

कृषि औजार/ उपकरण आदि पर इन्वेस्ट होने वाली क्रेडिट राशि एक वर्ष की अवधि के भीतर लौटाई गई राशि की जानकारी ऋण की सीमा तय करते वक्त देखी जाती है, जो ऋण पांच वर्ष के लिए दिया जायेगा एवं अनुमानित निवेश ऋण इन्हें किसान क्रेडिट कार्ड की अधिकतम अनुमत सीमा के तौर पर इंगित किया जाता है.

ऋण सीमा निर्धारण की विधि:-

प्रथम वर्ष के लिए ऋण सीमा का निर्धारण

ऋण सीमा = भूमि क्षेत्र × वित्त की मात्रा + 10% सीमा जुताई के बाद के खर्चों हेतु + 20% रखरखाव के खर्चों हेतु निर्धारित की जाती है.

खाते का संचालन सही होने पर आने वाले अगले वर्षों से ऋण की सीमा में पिछले वर्ष की अपेक्षा 10% की वृद्धि की जाती है. यह वृद्धि पांच वर्ष तक की जाती है. किसान क्रेडिट कार्ड धारकों को एटीएम कम डेबिट कार्ड दिया जाता है और साथ ही उसे

इस्तेमाल करना भी सिखाया जाता, जिससे वे पैसे निकाल सकें.

जब ऋण सीमा रु.3.00 लाख तक होती है तो ब्याज दर 7% होती है तथा प्रोसेसिंग शुल्क भी माफ़ कर दिया जाता है. खाते का परिचालन संतोषजनक होने व समय पर ब्याज सहित मूलराशि जमा करने पर सरकार द्वारा 3% की सबसिडी भी दी जाती है, जिसका अर्थ है कि संतोषजनक परिचालन व रु. 3.00 लाख की सीमा पर प्रभावी ब्याज दर मात्र 4% है

किसान क्रेडिट कार्ड खाते प्रति वर्ष दी गई शर्तों एवं तिथियों के अनुसार रिन्यू किये जाते है. रिन्यू की प्रक्रिया सामान्य ही है इसके लिए एक गाइडलाइन फॉर्म भरना होगा. शर्तों के अनुसार नयी ऋण सीमा का निर्धारण किया जाता है.

पात्र फसलों को फसल बीमा योजना के तहत कवर किया जाता है, जो कि प्रधानमंत्री कृषि बीमा योजना के तहत आती हैं.

किसानों की जरुरत एवं उनकी आर्थिक स्थिति देखते हुए यह योजना बहुत लाभकारी है. आज प्रकृति के बदलते व्यवहार के कारण सबसे ज्यादा देश का किसान परेशान है. ऐसे में खेती से संबंधी जरुरी उर्वरक, बीज, खाद एवं अन्य समान लेने में मिलने वाली यह मदद किसान को राहत देती है. किसानों को समयानुसार खेती में परिवर्तन करने की भी आवश्यकता है. इसके लिए किसानों को किसान कॉल सेंटर (Kisan Call Center) से जुड़ना चाहिये.

अरविन्द कुमार, सहायक प्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय, उदयपुर

बी. एम. सैनी

लघु व सीमांत कृषकों के लिए ऋण के विभिन्न अवसर

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसमें लगभग 68 प्रतिशत आबादी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है. देश के आर्थिक विकास की नींव प्रमुख रूप से कृषि कारोबार एवं व्यवसाय पर निर्भर है. अत: हम कह सकते हैं कि कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है. लेकिन कृषि में काम करने वाले किसानों की दशा ठीक नहीं है. इसके कई कारण हैं. समय-समय पर सरकार द्वारा कृषकों के उत्थान के लिये विभिन योजनाएं चलाई जा रही हैं. फिर भी कहा जाता है कि "**भारतीय किसान गरीबी में जन्म लेता है और गरीबी में ही मर जाता है**" कृषि एवं इससे संबंधित क्षेत्र भारत की अधिकांश जनसंख्या, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों के लिए आजीविका का मुख्य साधन है. मोटे तौर पर कृषकों को निम्न वर्गों में बांटा जा सकता है.

1) सीमांत किसान

2) लघु किसान

3) मझोले किसान

4) बड़े किसान

यहाँ हम लघु व सीमांत कृषकों के लिए सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं के बारें में चर्चा करेंगे.

सीमांत किसान : वह किसान, जो या तो दूसरों की खेती पर कार्य करता है या जिसके पास खुद की असिंचित खेती कुल 2.5 एकड़ या सिंचित खेती 1.25 एकड़ से ज्यादा न हो.

लघु किसान : वह किसान, जिसके पास 2.5 एकड़ से अधिक और 5 एकड़ से कम जमीन है.

5 एकड़ से अधिक जमीन वाले किसान प्रायः छोटे व मझोले बड़े किसान होते हैं. आर्थिक दृष्टि से लघु व सीमांत कृषक की स्थिति काफी दयनीय है. हालांकि समय- समय पर सरकार द्वारा उनके उत्थान के काफी प्रयास किए जा रहे हैं. एक अध्ययन के अनुसार भारत में 57.9% खेती की होल्डिंग्स 1 हेक्टर से नीचे है. कृषि हमारे देश के लोगों को रोजगार देकर गरीबी ही नहीं मिटाती, बल्कि खाद्य पदार्थ पर आत्म-निर्भर भी बनाती है . कृषि एवं इससे संबंधित क्षेत्र देश की अधिकांश जनसंख्या, खासकर ग्रामीण क्षेत्र के लोगों के लिए आजीविका का मुख्य साधन है.

किसान को हम अन्नदाता भी कहते हैं. वह हमारे लिए, अन्न, फल, सब्जियां आदि उपजाता है. वह पशु पालन भी करता है, लेकिन भारतीय किसान की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है. स्वतंत्रता के 69 वर्षों बाद भी आज किसान गरीब, अशिक्षित एवं शक्तिहीन है. कठोर परिश्रम के बाद भी वह अपना और अपने बाल-बच्चों का पेट बड़ी मुश्किल से भर पाता है. अभी भी लघु व सीमांत कृषकों के पास खेती के पुराने साधन हैं. कृषि भी बहुत अधिक मानसून पर निर्भर है. अगर अच्छी बरसात नहीं होती है, तो उसके खेत सूखे पड़ जाते हैं, अकाल पड़ जाता है और भूखों मरने की नौबत आ जाती है और वह रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन करने लगता है. लघु व सीमांत कृषकों की आय इतनी कम होती है कि वे अच्छे बीज़, खाद, औज़ार और पशु नहीं खरीद पाते. अधिकतर लघु व सीमांत कृषक अशिक्षित और अंध विश्वासी व कुरीतियों के शिकार हैं. अशिक्षित होने के कारण वह समय समय पर सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं से अनभिज्ञ रहता है और सेठ-साहूकार इसका पूरा फायदा उठाकर शोषण करते हैं. पैसों के अभाव में लघु व सीमांत कृषक अपनी संतान को भी पढाने के लिए नहीं भेज पाता, जिसके कारण उनकी यह स्थिति लगातार चलती रहती है.

आजादी के बाद भी भारतीय लघु व सीमांत कृषकों की आर्थिक स्थिति में बहुत ज्यादा परिवर्तन नहीं आया है. आज भी देश में गरीबी रेखा से नीचे ज़्यादातर लघु व सीमांत कृषक ही हैं. किसानों के विकास के लिए सरकार प्रयत्नशील है और समय- समय पर काफी कदम उठाए हैं. हरित क्रांति से श्वेत क्रांति जैसी प्रत्येक स्कीम किसानों के विकास के लिए लागू की गई, विशेषकर लघु व सीमांत कृषकों के लिए. हालांकि उपयुक्त योजनाओं से देश काफी हद तक अनाज के मामले में आत्म-निर्भर बना है. लघु व सीमांत कृषकों के उत्थान के लिए सरकार द्वारा बैंकिंग माध्यम से विभिन्न अवसर उपलब्ध कराये गये हैं . यह प्रायः देखा गया है कि कई बार लघु व सीमांत कृषक समय पर कृषि हेतु प्रर्याप्त बीज, खाद इत्यादि उपलब्ध नहीं होने के कारण खेती नहीं कर पाता है.

वर्तमान में निम्न ऋण सुविधाएं लघु व सीमांत कृषकों के लिए उपलब्ध हैं :

1) **फसल ऋण** : यह देखा गया है कि किसानों के पास खेत तो है, पर उनके पास खाद, बीज और बुवाई के लिए साधन नहीं हैं. अत: समय पर फसल न बोने के कारण अच्छे परिणाम नहीं आते हैं. इसे दूर करने के लिए लघु व सीमांत कृषकों को फसल बोने से लेकर पूरी प्रक्रिया में विविध कृषि सबंधी क्रिया-कलापों के लिए आवश्यक सभी खर्चों हेतु फसल ऋण दिया जाता है.

पात्रता : स्वयं के स्वामित्व वाली भूमि के कृषक/ पंजीकृत पट्टेदार व फसल के बटाईदार किसान.

ऋण की मात्रा : प्रत्येक फ़सल के लिए स्केल ऑफ फ़ाइनेंस, कृषि योग्य भूमि क्षेत्र के अनुसार जिले की तकनीकी समिति द्वारा निर्धारित किया जाता है. बैंक प्रत्येक आवेदक को, पैमाने के अनुसार निर्धारित धनराशि से 100% अधिक राशि अनुमोदित कर सकते हैं. बैंक, किसान की ऋण आवश्यकताओ का स्वयं आकलन फसलानुसार करता है. लघु व सीमांत कृषकों के लिए फसल ऋण वरदान साबित हुआ है. फसल ऋण में बीमा अति आवश्यक है. ब्याज राशि में भी अनुदान सरकार द्वारा दिया जाता है.

2 **किसान क्रेडिट कार्ड** : इसे केसीसी भी कहते हैं. यह ऋण फसल उगाने के लिए कार्यशील पूंजी की जरूरतों को पूरा करने के लिए है.

पात्रता : सभी किसान कृषि सबंधित कार्यों सहित परंपरागत/ नकद ऋण स्कीम में ऋण लेने के पात्र हैं. जो किसान किसी वित्तीय संस्था के चूककर्ता नहीं हैं, इसका लाभ ले सकते हैं. यह नकद साख तरल/ प्रतिभूतियों यथा स्वर्ण आभूषण, राष्ट्रीय बचत पत्र/ सावधि जमा रसीद/ किसान विकास पत्र आदि के पेटे भी लिया जा सकता है.

ऋण की सीमा : फसल ऋण का निर्धारण फसल के लिए निर्धारित स्केल ऑफ फाइनेस + बीमा किस्त + कृषि क्षेत्र + ऋण सीमा का 10%

फसलोपरांत :

घरेलू/ उपभोग आवश्यकताओं हेतु+ कृषि आस्तियों के रखरखाव हेतु ऋण सीमा के 20% के आधार पर किया जाएगा.

सीमांत किसानों के लिये आसान मूल्यांकन के साथ रू.10,000/- से रू.50000/- तक के फ्लेक्सी केसीसी की वैधता 5 वर्ष होगी.

3 **लघु सिंचाई ऋण :** कुओं को खोदना/ गहरा करना/ विभिन्न मरम्मत इत्यादि हेतु. ट्यूब वेल, नलकूप की खुदाई वाली प्रणाली के वितपोषण हेतु भी लघु व सीमांत कृषकों को यह ऋण उपलब्ध है. इस योजना में नाबार्ड की इकाई लागत के अनुसार परियोजना लागत का 85% ऋण मिलता है.

भूमि सुधार एवं विकास के लिए ऋण, भूमि को समतल करने, मिट्टी भराई करने और अन्य भूमि संरक्षण विकास गतिविधि के लिए झंझट रहित वित्त उपलब्ध कराना है.

इस योजना में सभी किसानों को सम्मिलित किया जाता है

पात्रता :

- किसान, जिनके पास स्वयं की भूमि है और जो पंजीकृत पट्टे पर दी गयी भूमि पर खेती करते हैं.
- आवेदक की आयु 21 वर्ष से कम तथा 55 वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए.
- आवेदक शाखा के सेवा क्षेत्र का स्थायी निवासी होना चाहिये, जिसका सत्यापन राशन कार्ड अथवा किसी अन्य दस्तावेज़/ प्रमाण पत्र से किया जाए.

4 **कृषि मॉर्गेज योजना** : लघु व सीमांत कृषकों के लिए कृषि मॉर्गेज योजना उत्पादन, निवेश तथा कृषकों की उपभोग आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए है. योजना के अंतर्गत फसल की बुआई, कृषि उपकरण की खरीद, कृषि सबंधी गतिविधियों तथा कृषकों की उपभोग आवशकताओं जैसे विवाह, चिकित्सा, शिक्षा आदि के लिए ऋण सीमा मंजूर की जाती है.

पात्रता : वित्त की मात्रा वार्षिक कृषि आय के 5 गुना अथवा कृषि बंधक के मूल्य का 50%, जो भी कम है, के आधार पर निर्धारित है. अधिकतम ऋण सीमा रु.10.00 लाख है.

5 **डेयरी हेतु ऋण** : ह्वाइट कार्ड मवेशी स्वामियों/ डेयरी संचालकों को झंझट से मुक्ति प्रदान करता है. मवेशी खरीदने तथा मशीनरी, उपकरण, रोड निर्माण, चारा, परिवहन, पशु चिकित्सा सबंधी जरूरतों के लिए कार्यशील पूंजी दी जाती

है. यह ऋण लघु व सीमांत कृषकों के लिए वरदान साबित हुआ है तथा जीवन सुधारने का एक मौका देता है.

पात्रता : कृषक, भूमिहीन श्रमिक, साझे में खेती करने वाले खेतिहर किसान या डेयरी इकाई स्थापित करने के लोग पात्र हैं.

ऋण की मात्रा : ऋण की मात्रा का निर्धारण प्रोजेक्ट के अनुसार होता है.

उपयुक्त ऋणों में ब्याज दर, मार्जिन, सुरक्षा, बीमा, दस्तावेज़ प्रत्येक बैंक में अलग अलग हैं.

6 **स्वर्ण के रेहन पर ऋण :** सोने के आभूषणों को गिरवी रखकर यह ऋण दिया जाता है, जो कि सावधि ऋण व सीसी के रूप में हो सकता है ?

पात्रता : सभी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह पात्र हैं. स्टाफ सदस्य भी इस ऋण के पात्र हैं.

बाधाएं : सोने के बार या छड़ पर और सोने को खरीदने के लिए यह ऋण नहीं दिया जाएगा.

राशि : अधिकतम रू.20.00 लाख

मार्जिन : 25%

समयावधि : एक वर्ष

अत: हम कह सकते हैं कि लघु व सीमांत कृषकों हेतु कृषि ऋण के विभिन्न अवसर उपलब्ध हैं. इसके अलावा कृषि से सबंधित अन्य ऋण योजनाएं भी सरकार ने समय- समय पर जारी की हैं जैसे :

- भंडारण सुविधाओं हेतु
- गोदाम और शीत गृह हेतु
- गोबर गैस प्लांट हेतु
- मधुमक्खी पालन हेतु
- रेशम उत्पादन हेतु
- बागवानी हेतु

- भेड /बकरी पालन हेतु
- मुर्गीपालन हेतु
- मछली पालन हेतु

उपयुक्त सभी पर रियायती ब्याज दर लागू होती है तथा नियमित खातों को सरकार द्वारा अनुदान भी दिया जाता है.

यही नहीं, सरकार कृषि उत्पादों की बिक्री हेतु भी विभिन्न सहायता करती है; जैसे कृषि मंडी की स्थापना, मार्केटिंग यार्ड आदि. कृषि ऋणों में यह देखा गया है कि सरकार द्वारा दी जाने वाली सुविधाओं के बावजूद बैंकों में काफी मात्रा में एनपीए है. वास्तव में यदि दिया गया ऋण कृषि सबंधी कार्यों में लगे, तो निश्चित रूप से एनपीए कम से कम होगा; पर किसान यह पैसा कृषि की बजाय अपनी निजी जरूरतों में लगा देता है, जिससे कृषि उत्पादन नहीं होता और खाता एनपीए हो जाता है.

अंत में देश के विकास के लिए हमें लघु व सीमांत कृषकों के उत्थान की ओर ध्यान देना होगा. हमें उन कारणों को खोजकर दूर करना होगा, जो उनके विकास में बाधक हैं, तभी देश में किसानों की हालत सुधरेगी एवं विकास की दर बढ़ेगी, देश खुशहाल बनेगा.

जय जवान - जय किसान

बी. एम. सैनी, मुख्य प्रबंधक (संकाय), स्टाफ प्रक्षिशण केंद्र, भोपाल

जयदेव कुमार साव

'स्वयं सहायता समूह - सफलता के आयाम'

भारत एक विकासशील और बड़े भू-भाग में फैला हुआ देश है. विकासशील देशों की अपनी सीमाएं और समस्याएं होती हैं. सीमित संसाधनों में किस प्रकार समाज को आर्थिक रूप से सुदृढ़ किया जाए; इस पर प्राय: विचार किए जाते रहे हैं. भारत के नीति निर्माताओं ने जब आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के विकास के बारे में सोचना प्रारंभ किया, तो उनके मस्तिष्क में एक बात आयी कि इस तबके के लोगों की विशेषता क्या है. तब यह पाया गया कि गांवों में सामाजिकता पर गौर किया जाए, तो ज्ञात होता है कि यहां किसी भी कार्य में मदद लेने और देने की परंपरा सदियों से रही है. ''सामुदायिकता की भावना'' आदिवासी समाज की सबसे बड़ी विशेषता रही है और इसके तार सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पहलुओं से भी जुड़े हुए हैं. हालांकि तथा कथित सभ्य समाज में ये गुण अब प्रत्यक्ष रूप से नहीं दिखते हैं, किन्तु गरीब व सामाजिक तौर से पिछड़े वर्गों में आज भी यह किसी न किसी रूप में विद्यमान है. यहां आज भी यह मान्यता है कि खुद अपनी मदद कर के ही जीवन में आगे बढ़ा जा सकता है.

स्वयं सहायता समूह के इतिहास के पन्नों में जाने पर यह पता चलता है कि इसकी शुरुआत मुख्य रूप से देश की प्रतिष्ठित स्वैच्छिक संस्थाएं यथा सेल्फ एम्प्लाइड विमेन एसोशिएशन (SEWA), अहमदाबाद, मयराडा, बेंगलूरु आदि के माध्यम से हुई थी. 1968 से आरंभ इस संस्था ने सामाजिक कार्य के प्रति अपनी भूमिका निभानी शुरू कर दी थी. चीन युद्ध के पश्चात तिब्बत से तिब्बतियों को पुनर्स्थापित करने का कार्य इस संस्था ने किया. इस संस्था के द्वारा समाज में सामुदायिक क्रियाशील समूह के माध्यम से ग्रामीण साख प्रणाली को पुनर्जीवित कर महिलाओं को उसमें जोड़ा, ताकि स्वयं सहायता समूह बेहतर कार्य निष्पादन कर सकें. इसकी विशेषताएं निम्नवत हैं:-

- यह एक ऐसा समूह है, जिसके आर्थिक एवं सामाजिक पहलुओं में समानता होती है तथा एक छोटे से समूह के माध्यम से सदस्य अपनी-अपनी आवश्यकताओं, अपेक्षाओं की प्रतिपूर्ति करते हैं.

- समान स्तर के सदस्य वही सीखने का प्रयास करते हैं, जो उन्हें रुचिकर लगता है.
- इन समान स्तरीय समूहों के सदस्य अपने-अपने ज्ञान के प्रति जागरूकता का स्वयं के अंदर की क्षमता को विकसित कर अपने व्यवहार में लाने के प्रति उत्साहित करते हैं.
- यह सदस्य समूह मुख्यत: अपने समूह के द्वारा स्वचालित होकर अग्रसर होने का प्रयास करता है.
- यह समान स्तर से समूह के सदस्यों के साथ-साथ दूसरों को भी विकास की ओर लाना चाहते हैं.

भारत की अधिकांश आबादी गावों में निवास करती है, उनमें से 75% से भी अधिक आबादी का प्रमुख आधार खेती है. ऐसे लोगों की कई समस्याएं होती हैं, जिन्हें वे आपस में सहायता की भावना उत्पन्न कर तथा छोटी-छोटी बचत कर सुलझा सकते हैं. इसी विचारधारा को ध्यान में रखकर स्वयं सहायता समूह की अवधारणा रखी गई.

अब प्रश्न यह उठता है कि स्वयं सहायता समूह है क्या ? इसे इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि स्वयं सहायता समूह ऐसे निर्धन ग्रामीणों का समूह है, जिनकी सामाजिक व आर्थिक स्थिति लगभग एक जैसी हो. ये लोग अपनी इच्छा से एक समूह में संगठित होकर नियमित रूप से रु.10, 20 या उससे ज्यादा बचत करके जरूरतमंद सदस्यों के साथ ऋण का लेन-देन करते हैं. हर सप्ताह या 15 दिन या हर माह बैठक में बचत की राशि सदस्यों द्वारा जमा की जाती है तथा ऋण का लेन-देन किया जाता है.

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक ने फरवरी 1992 में स्वयं सहायता समूहों को वाणिज्य बैंकों से जोड़ने की पायलट परियोजना शुरू की थी. कुछ चयनित गैर सरकारी संस्थाओं एवं बैंकों की मदद से ही इस परियोजना का कार्यान्वयन हुआ. स्वयं सहायता समूह के विषय में कुछ प्रश्नों के माध्यम से विस्तार से चर्चा की जा रही है.

1. स्वयं सहायता समूह के क्या लाभ हैं?

सदस्यों को लाभ:

- सभी सदस्यों की थोड़ी-थोड़ी बचत इकट्ठी होकर बड़ी राशि बन जाती है. बचत ही विकास का पहला कदम है.
- नियमित बचत के द्वारा सदस्यों के आर्थिक स्तर में सुधार व सहयोग की भावना, आपसी विश्वास तथा स्वावलंबन में वृद्धि होती है.

- छोटे ऋण, समूह से आसानी से प्राप्त हो जाते हैं. बैंक से भी ऋण मिलने में आसानी होती है.
- आंतरिक ऋण से प्राप्त ब्याज का लाभ सभी सदस्यों को मिलता है.

बैंकों को लाभ

- बैंकिंग की सुविधा बिना कोई अतिरिक्त लागत के अधिक लोगों तक पहुंचना.
- अच्छी वसूली: सामूहिक दबाव से समूह सदस्य द्वारा तत्परता से ऋण वापसी.
- सदस्यों की अल्प बचत द्वारा समूह के माध्यम से बड़ी रकम का जमा होना.
- पुराने एनपीए की वसूली की प्रबल संभावनाएं.
- बैंक की छवि जनसामान्य में ऊंची होना.
- इस प्रकार की सुविधा से बैंकिंग सुविधाओं से वंचित निर्धन ग्रामीणों को बैंकिंग नेटवर्क से जोड़ा जा रहा है.

समाज को लाभ

- सामाजिक सुरक्षा.
- विकास में महिलाओं की सहभागिता

2. इस कार्यक्रम में नया क्या है?

- यह गरीबों का अपना छोटा बैंक है तथा इसको सही रूप से चलाने के लिए नियम भी स्वयं बनाने हैं.
- पंजीकरण की आवश्यकता नहीं है.
- समूह को सरकारी मान्यता प्राप्त है, क्योंकि भारतीय रिज़र्व बैंक तथा नाबार्ड द्वारा इस कार्यक्रम को विशेष मंजूरी दी गई है.
- समूह का गठन स्वैच्छिक संगठन के कार्यकर्ता, गांव के शिक्षक, कर्मचारी व निर्धन लोग स्वयं कर सकते हैं.

3. समूह की नियमावली:

समूह को अपने संचालन के लिए एक नियमावली बनाना आवश्यक है. समूह के

गठन के तुरंत बाद नियमावली बना लेनी चाहिए. निम्न नियमावली उदाहरणस्वरूप अपनाई जा सकती है.

समूह की संरचना

समूह का नाम

एक परिवार से एक से ज्यादा सदस्य न हो.

समूह में 10-20 सदस्य होने चाहिए. समूह स्त्रियों के या पुरुषों के या मिश्रित भी हो सकते हैं.

बैठक

समूह की नियमित बैठकें होनी चाहिए, साप्ताहिक/पाक्षिक/मासिक

बैठक का दिन, समय या स्थान

आकस्मिक बैठक विशेष परिस्थितियों में बुलाई जा सकती है.

बैठक में अनुपस्थित रहने पर जुर्माना समूह तय करेगा

बचत

बचत की राशि सभी सदस्यों के लिए समान होनी चाहिए.

समूह की नकद बचत राशि का संदूक एक सदस्य के पास रहेगा व सन्दूक की चाभी दूसरे के पास रहेगी.

ऋण का लेन-देन

सदस्यों को उनकी आवश्यकता की प्राथमिकता के अनुसार तथा उनकी ऋण वापसी की क्षमता के आधार पर ऋण दिया जाना चाहिए.

वापसी का समय व वापसी किश्तों की संख्या तथा राशि समूह के सदस्य बैठक में तय करेंगे.

किश्त न आने पर जुर्माना समूह द्वारा तय किया जाएगा.

सदस्यों को दिये गए ऋण पर लागू ब्याज दर.

डिफ़ाल्टर सदस्य को बैंक ऋण में से ऋण नहीं देना चाहिए.

पदाधिकारी व बैंक में खाता

प्रबंधकीय समिति (अध्यक्ष,सचिव व कोषाध्यक्ष) का चयन तथा उनका कार्यकाल

बचत बैंक खाता समूह के नाम से खुलना चाहिए न कि सदस्यों के व्यक्तिगत नाम से.

बचत खाते के संचालन में स्वैच्छिक संगठन के प्रतिनिधि का नाम सम्मिलित नहीं होना चाहिए.

4. **समूह संचालकों के दायित्व:**

समूह को आगे बढ़ाने के सभी सदस्यों की बराबर ज़िम्मेदारी होती है, लेकिन फिर भी सर्वसम्मति से चुने गए संचालकों को निम्नलिखित बिन्दुओं के प्रति गंभीर रहना चाहिए. इन बिन्दुओं पर अंतिम निर्णय समूह द्वारा ही लिया जाना चाहिए.

अध्यक्ष के कर्तव्य

बैठकों की अध्यक्षता करना एवं सुचारु रूप से चलाना.

सदस्यों को ऋण देने में पारदर्शिता का माहौल बनाना.

सचिव के कर्तव्य

बैठक की कार्यवाही लिखना/लिखाना.

अध्यक्ष की अनुपस्थिति में बैठक की अध्यक्षता करना तथा बैठकें आयोजित करना.

बैंक से संबंधित कार्य व बचत एवं ऋण संबन्धित रिकॉर्ड रखने में कोषाध्यक्ष की मदद करना.

कोषाध्यक्ष के कर्तव्य

पैसे की सुरक्षा करना.

बचत व ऋण संबंधित लेन-देन का हिसाब-किताब देखना, सदस्यों की पासबुक में प्राप्त राशि को अंकित करना/करवाना.

5. **समूह के नाम से बैंक में बचत खाता खुलवाना**

भारतीय रिज़र्व बैंक के निर्देशानुसार बैंक स्वयं सहायता समूह का बचत खाता

खोल सकते हैं.

बचत खाता कब और कहां खुलवाएं

समूह के गठन के बाद जब समूह की बचत शुरू हो जाती है, तो अपने नजदीक के वाणिज्यिक बैंक/ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक/ ज़िला सहकारी बैंक शाखा में समूह बचत खाता खुलवा लें. भारतीय रिज़र्व बैंक के निर्देशों के अनुसार बैंक शाखाएँ अपने बाहर के समूहों को भी वित्त प्रदान कर सकती हैं.

समूह का बचत खाता बैंक शाखा में खुलने से बैंक से संपर्क बनेगा तथा समूह गठन के 6 महीने पश्चात बैंक से जुडने में भी सुविधा रहेगी.

बचत खाता कैसे खुलवाएं?

बैंक में खाता खुलवाने के लिए निम्न लिखित कागजात साथ में ले जाना जरूरी है.

समूह की नियमावली:

- समूह का प्रस्ताव, जिसमें प्रबंधकीय समिति के सदस्यों को बचत खाता खोलने व खाता संचालन का अधिकार हो.
- प्रबंधकीय समिति के सदस्यों सचिव, अध्यक्ष, कोषाध्यक्ष के तीन फोटो.
- जिस बैंक शाखा में समूह का खाता खुलवाना है, उस शाखा में जिस व्यक्ति का बचत खाता हो, उससे समूह के पदाधिकारियों का परिचय करवाकर खाता खोलने के फॉर्म पर हस्ताक्षर करवा लें.
- बैंक में बचत खाता गैर सरकारी संगठन के पदाधिकारी अथवा गांव के सरपंच आदि से भी परिचय करवाकर खुलवाया जा सकता है.
- समूह की रबड़ की मुहर (ऐच्छिक)

6. बैठक:

समूह के सफल संचालन के लिए नियमित बैठक हेतु तिथि/दिन निश्चित करें.

बैठक में सभी सदस्य बचत राशि को जमा करें.

जिन सदस्यों ने उधार लिया है, उनसे ऋण किश्त की वसूली (ब्याज सहित) करें.

जिन सदस्यों को ऋण की आवश्यकता है, उन्हें सबकी सहमति से ऋण प्रदान करें

सदस्य अपनी आकस्मिक आवश्यकताओं, आय बढ़ाने के कार्यक्रमों, साक्षरता, स्वास्थ्य, स्वच्छता, कृषि संबंधी व आपसी समस्याओं पर विचार करें, जिससे समूह सुदृढ़, सशक्त, दीर्घायु हो.

बैठक में सभी सदस्यों को बोलने का समान अधिकार व स्वतन्त्रता होनी चाहिए तथा एक या दो व्यक्तियों द्वारा लिए गए निर्णय को अन्य सदस्यों पर नहीं थोपना चाहिए.

समूह में मतभेद निपटाने के लिए खुलकर और गहराई से चर्चा होनी चाहिए तथा आपसी समझ से समस्या का निपटारा करना चाहिए.

7. आंतरिक ऋण का लेन-देन

समूह से सुदृढ़ीकरण व परिपक्वता के लिए ऋण का लेन-देन अति आवश्यक है. अतः समूह में 1-2 महीने की बचत के पश्चात समूह द्वारा जरूरतमन्द सदस्यों को ऋण देना आरंभ कर देना चाहिए. सदस्य की ऋण वापसी की क्षमता को देखते हुए ऋण देने का निर्णय बैठक में सर्वसम्मति से लिया जाना चाहिए. ऋण वापसी की किश्तें तथा ब्याज दर सदस्य को बता देनी चाहिए. मूलधन व ब्याज की वापसी बैठक में ही करनी चाहिए.

8. समूह के रजिस्टर व खाते:- समूह का लेन-देन व्यवहार दर्पण की तरह साफ-साफ हो. रिकॉर्ड सही लिखने से सभी सदस्यों का विश्वास बना रहता है तथा बैंक ऋण प्राप्ति में सुविधा रहती है.

समूह को सही लेन-देन के लिए कौन-कौन से रजिस्टर रखने हैं, इसका अंतिम निर्णय समूह को ही करना चाहिए, किन्तु कुछ रजिस्टरों का वर्णन निम्न है.

- **कार्यवाही रजिस्टर:** इस रजिस्टर के आरंभ में सदस्यता सूची, नियमावली तथा बाद के पृष्ठों में कार्यवाही लिखी जाती है.
- **पासबुक :** प्रत्येक सदस्य को यह पुस्तिका दी जाती है. यह पुस्तिका बैंक पासबुक के जैसी होती है. प्रत्येक सदस्य का समूह में बचत व ऋण का हिसाबी लेन-देन इसमें लिखा जाता है. इसे बैठक में ही ऋण के लेन-देन की राशि लिखकर कोषाध्यक्ष द्वारा सदस्य को लौटा देनी चाहिए.

यह पासबुक पाँच साल तक चल सकती है. इसे संभाल कर रखना चाहिए. पासबुक को आग, पानी, गंदगी, बच्चों से दूर रखना चाहिए.

- **बचत तथा ऋण रजिस्टर:** एक ही रजिस्टर के अंदर बचत, ऋण तथा

अन्य आय-व्यय के खातों का रख-रखाव किया जा सकता है. इन खातों का विवरण नीचे दिया जा रहा है.

बचत खाता: बचत खाते में सभी सदस्यों के नाम, बारह महीनों के नाम का फॉर्मेट बनाया जाता है.

व्यक्तिगत व समूह ऋण खाता: प्रत्येक सदस्य को दिये गए ऋण की अदायगी व अवशेष ऋण आदि व्यक्तिगत ऋण खाते तथा सभी सदस्यों के कुल ऋण लेन-देन को माह के अंत में समूह ऋण खाते में लिख देना चाहिए.

बैंक से ऋण प्राप्ति का ब्यौरा: बैंक से ऋण प्राप्ति का ब्यौरा निम्न फॉर्मेट में लिखा जा सकता है.

तिथि/ महीना	ऋण की राशि (रु.)	ऋण अदायगी		अवशेष (रु.) ऋण (2-3)
		मूलधन रु.	ब्याज रु.	
1	2	3	4	5

- **समूह का वार्षिक आय-व्यय खाता:** वर्ष में एक बार 31 मार्च को आय-व्यय खाता बना लेना चाहिए.

9. बैंक से ऋण की प्राप्ति: समूह गठन के छः माह पश्चात अपने बचत समूह के सदस्यों को ऋण देने के लिए राशि कम पड़ने पर नजदीक के बैंक से अपनी बचत तथा परिपक्वता के आधार पर ऋण प्राप्त कर सकता है.

अपनी बचत में बैंक बचत खाते में जमा राशि, सदस्यों को दिया गया ऋण तथा समूह के पास रखा हुआ नकद धन शामिल होगा. समूह को ऋण प्राप्ति के लिए निम्नलिखित कागजात बैंक को देने होंगे.

- बैंक बचत खाता, अगर न हो तो बचत खाता खुलवाना.
- ऋण के लिए समूह का बैंक को आवेदन पत्र.

- स्वयं सहायता समूह के सभी सदस्यों द्वारा हस्ताक्षरित परस्पर क़रारनामा.
- समूह को ऋण प्रदान करते समय बैंक के साथ क़रारनामा(यह क़रारनामा समूह के प्राधिकृत पदाधिकारियों द्वारा किया जाएगा)
- बैंक ऋण के लिए समूह द्वारा पारित प्रस्ताव की प्रति.

10. ऋण देते समय बैंक किन बातों का ध्यान रखें?

- समूह कम से कम छः माह की अवधि से सक्रिय हो तथा नियमित बैठक एवं बचत कर रहा हो.
- रिकॉर्ड का उचित रख-रखाव
- समूह अपनी एकत्रित बचत से आपस में सदस्यों को ऋण वितरण व वापसी में सक्षम हो तथा ऋण अदायगी समय से होती हो.
- समूह के सदस्यों की पृष्ठभूमि एवं विचारधारा में एकरूपता.

11. ऋण सीमा का निर्धारण कैसे करें?

- बैंक स्वयं सहायता समूह को सावधि ऋण तथा नकद साख सीमा स्वीकृत कर सकते हैं, जिसकी गणना निम्नलिखित सूत्र के आधार पर की जाएगी- सावधि ऋण समूह की कुल बचत का अधिकतम 4 गुना.

  नकद साख सीमा 03 वर्ष के लिए स्वीकृत की जाएगी, जिसका आधार समूह की 3 वर्षों की संभावित बचत होगी.

रवि हिंदुजा

संयुक्त देयता समूह (जेएलजी)

स्वयं सहायता समूहों और बैंकों की लिंकेज से, निर्धनों में सबसे निर्धन की औपचारिक बैंकिंग सेक्टर तक पहुंच बनाने में बहुत सफलता मिली है. लघु/सीमांत/पट्टेदार किसानों, मौखिक जोतदारों और बटाईदारों तथा गैर कृषि कार्यों में संलग्न उद्यमियों के लिये प्रभावी क्रेडिट उत्पाद विकसित करने के लिये संयुक्त देयता समूह की योजना आरंभ की गयी है. इस योजना की मुख्य बातें इस प्रकार हैं :

योजना का उद्देश्य

- किसानों खासकर छोटे, सीमांत किसानों, पट्टेदारों, मौखिक किरायेदारों, बटाईदारों/कृषि कार्य करने वाले व्यक्तियों को क्रेडिट का प्रवाह बढ़ाना.
- संयुक्त देयता समूह व्यवस्था से संपार्श्विक मुक्त ऋण प्रदान करना.
- बैंकों और उधारकर्ताओं के मध्य आपसी विश्वास बनाना.
- समूह अप्रोच, क्लस्टर अप्रोच, समान शिक्षा व ऋण अनुशासन से बैंकों के ऋण पोर्टफोलियो की जोखिम न्यूनतम करना.
- कृषि उत्पादन में वृद्धि, जीवनयापन के साधन बढ़ाने में सहयोगी बनकर समाज के कमजोर वर्ग को खाद्य सुरक्षा प्रदान करना.

संयुक्त देयता समूह क्या है ?

- संयुक्त देयता समूह 4 से 6 व्यक्तियों का एक अनौपचारिक समूह है, जो अकेले या समूह व्यवस्था के माध्यम से आपसी गारंटी देकर बैंक से ऋण लेने के लिये बनाया जाता है.
- इस समूह के सदस्य एक ही प्रकार के आर्थिक कार्यकलाप कृषि/संबद्ध/गैर कृषि

में कार्यरत होते हैं.

- समूह के सदस्य बैंक को संयुक्त वचन देते हैं, जिसके आधार पर उनको ऋण मिलता है.
- संयुक्त देयता समूह का प्रबंधन बहुत सरल है, जिसमें बहुत मामूली या शून्य खर्च होता है.
- संयुक्त देयता समूह के सदस्य अपने कामकाज और सामाजिक संबंधों में एक दूसरे की सहायता करते हैं.

संयुक्त देयता समूह कौन बना सकता है ?

- कारोबार सहायक, गैर सरकारी संगठन(एनजीओ), किसान क्लब, किसान एसोसिएशन, पंचायत राज संस्थाएं, कृषि विकास केंद्र, शासकीय कृषि विश्वविद्यालय, कृषि प्रौद्यौगिकी प्रबंधन एजेंसी, बैंक की शाखाएं, प्राथमिक कृषि सहकारी समितियां (पीएसी) अन्य सहकारी संस्थाएं, सरकारी विभाग, व्यक्ति, इनपुट विक्रेता, सूक्ष्म वित्त संस्थाएं (एमएफआई)/एमएफओ आदि.

संयुक्त देयता समूह सदस्यों के चयन के मानदंड :

- भूमि का स्वामित्व न रखने वाले पट्टा किसानों और छोटे किसानों को शामिल कर संयुक्त देयता समूह बनाया जा सकता है.
- समूह में एकरुपता, आपसी सम्मान और विश्वास के लिये इसके सदस्य एक जैसी सामाजिक आर्थिक हैसियत, पृष्ठभूमि और वातावरण के होने चाहिये, जो खेती करते हों या उससे संबंधित काम में संलग्न हों एवं जो जेएलजी बनाने के लिये सहमत हों.
- इसके सदस्य शाखा के परिचालन क्षेत्र में कम से कम 1 साल से कृषि कार्य में संलग्न हों.
- समूह का कोई भी सदस्य किसी औपचारिक वित्तीय संस्था का चूककर्ता नहीं होना चाहिये.
- समूह में परिवार का एक से अधिक सदस्य नहीं होना चाहिये.
- समूह को अपना नेता योग्य/अच्छे /सक्रिय व्यक्ति को बनाना चाहिये, जिससे कि सभी सदस्यों का लाभ सुनिश्चित हो सके. यह ध्यान रखना चाहिये कि समूह के

नेता द्वारा बेनामी ऋण न लिया जाए.

समूह अप्रोच

- समूह के सभी सदस्य नेतृत्व संभालने लायक पर्याप्त सक्रिय होने चाहिये. नेता को एकता, अनुशासन को बढ़ावा देना चाहिये, अदायगी में सहायता करनी चाहिये और साथियों को जानकारियां देनी चाहिये. बैंक के लिये वह समूह के कामकाज का केंद्र बिंदु होगा.
- समूह के आपसी हितों तथा सदस्यों की भूमिका तथा अपेक्षाओं पर चर्चा के लिये समूह की नियमित बैठक होनी चाहिये, जिसमें सभी सदस्य उपस्थित रहें.
- दलहन/फल /सब्जी उत्पादन या बुनाई जैसे विशेष कार्य के लिये समूहों का गांव/ ब्लाक स्तर पर संघ बनाया जाए, जिससे कि उत्पाद का विकास हो सके.
- समूह सुस्थापित होने के बाद मिलकर एक संघ बना सकते हैं, जिससे एक वैल्यू चेन बनायी जा सके और खरीद, प्रोसेसिंग और विपणन में बड़े पैमाने का लाभ प्राप्त किया जा सके.

संयुक्त देयता समूह द्वारा बचत

- समूह का गठन मूलतः ऋण के लिये किया जाता है. अतः सदस्यों द्वारा बचत करना ऐच्छिक है और सदस्यों को बचत हेतु प्रोत्साहित किया जाना चाहिये.
- समूह यदि ऋण के साथ बचत भी करना चाहे, तो उसे बैंक में एक बचत खाता खोलना चाहिये, जो समूह की ओर से कम से कम दो सदस्यों द्वारा संचालित हो.
- समूह को दिये जाने वाले ऋण की मात्रा समूह की आवश्यकता के अनुसार होगी न कि उनके द्वारा की गयी बचत के आधार पर.

संयुक्त देयता समूह मॉडल

शाखाएं संयुक्त देयता समूह का वित्त पोषण दोनों में से किसी मॉडल के हिसाब से कर सकती हैं :

- समूह के व्यक्तियों का वित्तपोषण
- समूह के प्रत्येक व्यक्ति को एक अलग यूनियन ग्रीन कार्ड दिया जायगा. वित्तपोषण करने वाली शाखा पैदा की जाने वाली फसल, उपलब्ध खेती की जमीन और उस

व्यक्ति की ऋण क्षमता के आधार पर ऋण की आवश्यकता का आकलन करेगी.

- सभी सदस्य संयुक्त रुप से मिलकर एक परस्पर(इंटर-सी) दस्तावेज निष्पादित करें, जिसके द्वारा समूह के सभी सदस्यों द्वारा लिये गये ऋणों के लिये प्रत्येक संयुक्त रूप से और अलग-अलग जिम्मेदार होंगे.
- सभी सदस्यों में सृजित की जाने वाली व्यक्तिगत ऋण देयता के बारे में आपसी समझौता और सहमति होगी. समूह में किसी व्यक्ति के निकलने या शामिल होने से नये दस्तावेज की आवश्यकता होगी.
- समूह के रूप में संयुक्त देयता समूह का वित्तपोषण.
- समूह को एक ऋण दिया जायगा, जो समूह के सभी सदस्यों की सम्मिलित ऋण जरूरतों के बराबर होगा.
- समूह की ऋण आवश्यकता समूह के सदस्यों के पास कुल मिलाकर उपलब्ध कृषि योग्य भूमि/ की जाने वाली गतिविधि के आधार पर तय की जायगी.
- सभी सदस्य संयुक्त रूप से दस्तावेज निष्पादित करेंगे और ऋण की जिम्मेदारी संयुक्त एवं एकल रूप से सभी की होगी.
- सृजित की जाने वाली ऋण देयता में प्रत्येक सदस्य की ऋण देयता के बारे में आपसी सहमति सुनिश्चित होनी चाहिये. समूह के संगठन में किसी परिवर्तन से नये दस्तावेज निष्पादित करने होंगे.
- ऋण के साथ-साथ बचत करने वाले समूहों को हिसाब-किताब रखना होगा.
- कामकाज के पैरामीटर के आधार पर शाखा सदस्यों को श्रेणी में विभाजित कर सकेगी.
- समूह की ऋण आवश्यकता की गणना सम्मिलित ऋण योजना और सदस्यों की व्यक्तिगत आवश्यकता के आधार पर की जायगी और इसे स्वयं सहायता समूह के अनुसार बचत से संबद्ध न किया जाए.

ऋण का उद्देश्य:

- समूह को दी गयी वित्तीय सहायताओं में लचीली सुविधा होनी चाहिये, जो सदस्यों की उत्पादन, उपभोग, विपणन तथा अन्य उत्पादक उद्देश्यों को पूरा करती हो.

ऋण के प्रकार

- उद्देश्य और अवधि के अनुसार नकद ऋण, अल्पावधि ऋण या मीयादी ऋण स्वीकार किया जाए.
- भारतीय रिज़र्व बैंक के दिशानिर्देशों के अनुसार समूहों को माइक्रो ऋण, प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को ऋण माना जायगा.

ऋण की सीमा

- दोनों मॉडलों के अंतर्गत प्रत्येक सदस्य को अधिकतम रु. 50,000/- ऋण दिया जा सकता है.

ब्याज दर

- कृषि ऋण पर लगने वाली ब्याज दर जेएलजी ऋण पर लगायी जायगी.
- कृषि अनुदेश परिपत्र 7057 दिनांक 06.12.2004 के अनुसार तत्परता से भुगतान के लिये 0.50% का प्रोत्साहन जेएलजी को मिलेगा.
- फसल ऋण के लिये इस समय 7% ब्याज लिया जायगा, जिस पर 2% छूट भारत सरकार द्वारा दी जाती है. ऋण के एक साल के अंदर भुगतान करने पर सरकार द्वारा 1% अतिरिक्त सहायता दी जायगी.

व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा

- समूह के सदस्य, जिनको ग्रीन कार्ड दिया गया है, वे यूनियन ग्रीन कार्ड के लिये लागू बीमा से कवर होते हैं.

फसल बीमा योजना

भारतीय कृषि बीमा कंपनी की राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना पट्टेदारों और बटाईदारों सहित सभी किसानों को देश में अधिसूचित फसलों के लिये बीमा कवर उपलब्ध कराती है.

रवि हिंदुजा, प्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय, उदयपुर

सुनील दत्त

कृषि एवं सहकारी संस्थाएं

भारत में आधुनिक सहकारी साख संस्थाओं की शुरुआत मार्च 1904 से हुई, जब भारतीय सहकारी साख समिति अधिनियम लागू किया गया. सन 1912 में एक अधिनियम के द्वारा प्राथमिक साख समितियों के साथ-साथ केंद्रीय एवं राज्य सहकारी बैंकों की व्यवस्था की गयी. सहकारी संस्थाओं का विकास स्वतन्त्रता के पश्चात ही शुरू हुआ. वर्तमान में ये शहरी व ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में कार्यरत हैं.

'सहकारी' शब्द का अर्थ है 'साथ मिलकर कार्य करना'. इसका अर्थ हुआ कि ऐसे व्यक्ति, जो समान आर्थिक उद्देश्य के लिए साथ मिलकर काम करना चाहते हैं, वे समिति बना सकते हैं. इसे 'सहकारी समिति'' कहते हैं. यह ऐसे व्यक्तियों की स्वयं-सेवी संस्था है, जो अपने आर्थिक हितों के लिए कार्य करते हैं. यह अपनी सहायता स्वयं और परस्पर सहायता के सिद्धान्त पर कार्य करती है. सहकारी समिति में कोई भी सदस्य व्यक्तिगत लाभ के लिए कार्य नहीं करता है. इसके सभी सदस्य अपने-अपने संसाधनों को एकत्र कर उनका अधिकतम उपयोग कर जो लाभ प्राप्त करते हैं, उसे वे आपस में बांट लेते हैं.

सहकारी समिति, संगठन का एक प्रकार है, जिसमें सभी व्यक्ति अपनी इच्छा से समानता के आधा र पर अपने आर्थिक हितों के लिए मिलकर कार्य करते हैं. उदाहरणार्थ, एक विशेष बस्ती के विद्यार्थी विभिन्न कक्षाओं की पुस्तकें उपलब्ध कराने हेतु एकत्र होकर एक सहकारी समिति बनाते हैं. अब वे प्रकाशकों से सीधे ही पुस्तकें क्रय करके विद्यार्थियों को सस्ते दामों पर बेचते हैं. चूंकि वे सीधे प्रकाशकों से ही पुस्तकें क्रय करते हैं, इसलिए मध्यस्थों के लाभ का उन्मूलन होता है.

वर्तमान सभ्यता का इतिहास सहकारिता का इतिहास है. सहकारिता का इतिहास अत्यंत प्राचीन व गौरवशाली है. आदिकाल में सुरक्षा को दृष्टिगत कर सहायता की स्वभाविक प्रवृत्ति जागरित हुई थी. उस युग में, जबकि धर्म व नैतिकता का ताना बाना

बुना गया, धार्मिक भावना से प्रभावित हुआ और पारस्परिक सहयोग व सहकारिकता की प्रवृत्ति नैतिकता से पूर्णतया प्रभावित रही. इस काल में इस प्रवृति ने धार्मिक नैतिक आवश्यकताओं की पूर्ति अधिक की, परंतु शनैः शनैः सामाजिक एवं आर्थिक समस्यायें अधिक जटिल हो गयीं, तब सहकारिता धार्मिक एवं नैतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने की अपेक्षा सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति करने का अधिक प्रभावशाली साधन बन गयी. आज सहकारिता व्यापार, विनिमय, अर्थव्यवस्था विकास के कारण उत्पन्न परिस्थतियों से बचने का एकमात्र उपाय का मार्ग है.

भारत ने भी सहकारिता के महत्त्व को स्वीकार किया. 1901 की सिफ़ारिश के पश्चात 1904 में सर्वप्रथम सहकारी अधिनियम पारित कर सहकारी साख समितियों की स्थापना की गई और विकास के प्रयत्न किये गये. स्वतन्त्रता के पश्चात पंचवर्षीय योजनाओं में सहकारी विकास कार्यक्रम को आधार बनाया गया. तथापि, सहकारिता की यह प्रवृति आदिकाल से मानव में रही है. मानव जब अकेला था, सभ्यता व संस्कृति का अभाव था. प्रारम्भ से ही मानव प्रकृति सहयोग की प्रवृति को स्वीकार किया गया और सभ्यता का विकास हुआ. वर्तमान में सहकारिता एक महान शक्ति के रूप में स्वीकार की गयी है.

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार है. अन्य उद्योगों की तरह कृषि की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये साख की व्यवस्था करना भी अधिक महत्त्वपूर्ण है. कृषि विचित्र प्राकृतिक व भौगोलिक परिस्थतियों पर आधारति होने के कारण जोखिम व अनिश्चितताओं से प्रभावित होती है. उत्पादन कम होने से साख की आवश्यकता होती है. परंतु स्थिति यह रही है कि किसानों को साख सुविधाओं से पृथक व दूर रखा गया. पूंजी बाजार व अन्य वित्तीय संस्थाओं ने वित्त प्रदान करने में कृषि की उपेक्षा की तथा किसानों की संपत्ति को उचित प्रभार नहीं माना गया. यद्यपि कृषक वर्ग अपनी वित्तीय ईमानदारी के कारण साख बाजार का सहयोग प्राप्त करने का अधिकारी है, फिर भी वित्तीय साख उपलब्ध नहीं हो पाती. संभवतः एक व्यापारी व उत्पादक की अपेक्षा एक कृषक का कार्य जटिल होता है. कृषि कार्यों का चक्र अधिक लम्बा होता है. मौसम आदि के कारण असामान्य जोखिम की संभावनाएं अधिक रहती हैं. इसी कारण भारतीय कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता है.

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था का विकास उसके कृषि क्षेत्र के कुशल व विकसित होने पर निर्भर करता है और कृषि का विकास कृषकों को साख सुविधा दिये बिना नहीं किया जा सकता. यह कृषि उद्योग की पहली आवश्यकता है . कृषि ऋण सुविधा के प्रमुख स्त्रोत निम्न हैं :

सहकारी बैंक-

सहकारी बैंकों के त्रिस्तरीय ढांचे के अतिरिक्त राज्य सहकारी समिति अधिनियम 1984 के अंतर्गत 16 सितंबर, 1985 से कुछ बहुराज्यीय सहकारी समितियों का गठन भी किया गया है, जो एक से अधिक राज्यों में अपने कार्यक्षेत्र का विस्तार कर सकती हैं. मार्च 1993 तक देश में 184 बहुराज्यीय सहकारी समितियां गठित की जा चुकी थीं, जिनमें 20 राष्ट्रीय सहकारी समितियां भी शामिल थीं

प्राथमिक साख समितियां-

ये समितियां ग्राम स्तर पर एक या कुछ ग्रामों के कम से कम 10 व्यक्तियों को मिलाकर गठित की जा सकती हैं और सहकारी समिति के रजिस्ट्रार के पास पंजीकृत कराई जाती हैं. इन कृषि साख समितियों की संख्या 1970-71 में 1,61,000 थी, जो भारत सरकार व रिजर्व बैंक द्वारा पुनर्गठित किए जाने के फलस्वरूप जून 1989 में 93,000 रह गयी. मार्च 2012 के आंकड़ों के हिसाब से देश के ग्रामीण क्षेत्रों में कुल 93,413 प्राथमिक कृषि साख समितियां 9 करोड 20 लाख सदस्यों के साथ कार्यरत थीं.

जिला केंद्रीय सहकारी बैंक-

इन्हें जिला सहकारी बैंक भी कहा जाता है. इनका कार्यक्षेत्र जिले तक सीमित रहता है. भारत में दो प्रकार के केंद्रीय सहकारी बैंक हैं. (1) सहकारी बैंकिंग यूनियन (2) मिश्रित केंद्रीय सहकारी बैंक. 31 मार्च, 2012 को देश में कुल 370 जिला केंद्रीय सहकारी बैंक कार्यरत थे.

राज्य सहकारी बैंक-

इस बैंक को राज्य का शीर्ष बैंक भी कहा जाता है. ये बैंक केंद्रीय सहकारी बैंकों के लिए अंतिम ऋणदाता के रूप में कार्य करते हैं, 1991 के आरंभ में देश में 28 राज्य सहकारी बैंक कार्यरत थे, जो मार्च 2012 में बढ़कर 31 हो गये. इन बैंकों की प्रबंध व्यवस्था भी अन्य सहकारी साख समितियों की तरह है.

भूमि विकास बैंक-

किसानों की दीर्घकालीन साख की आवश्यकताओं की पूर्ति के किए भूमि विकास बैंकों की स्थापना सहकारी साख व्यवस्था अंतर्गत की गयी है. ये संस्थाएं भूमि में स्थाई सुधार, भूमि खरीदेने, सिंचाई साधनों के विकास, पुराने ऋणों के भुगतान आदि के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में दीर्घकालीन ऋण प्रदान करती हैं. भारत में सर्वप्रथम 1920 में पंजाब प्रांत में भूमि विकास बैंक की स्थापना की गयी थी, परंतु इनका वास्तविक प्रारंभ 1929 में मद्रास में

केंद्रीय भूमि बंधक बैंक की स्थापना से हुआ. वर्तमान में 19 राज्यों में ये बैंक कार्यरत हैं. देश में वर्तमान में कुल 19 राज्यस्तरीय तथा 714 प्राथमिक स्तरीय सहकारी कृषि व ग्रामीण विकास बैंक कार्यरत हैं. ये बैंक अपनी पूंजी, शेयर, संरक्षित कोष, जमाराशियों, ऋणपत्रों तथा अन्य स्त्रोतों से लिए गये ऋण से जुटाते हैं. वर्ष 2011-12 में दी गई ऋण राशि रु 17603.42 करोड़ थी.

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक

ग्रामीण और कृषि क्षेत्र में संस्थागत ऋण बढ़ाने हेतु ग्रामीण अर्थव्यवस्था को विकसित करने तथा 'सहकारी ऋण संरचना' का पूरक माध्यम बनाने के उद्देश्य से 26 सितंबर, 1975 को घोषित अध्यादेश तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अधिनियम, 1976 के प्रावधानों के तहत 1975 में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना हुई.

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की अंशपूँजी में भारत सरकार ने 50%, संबंधित राज्य सरकार ने 15% तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक को प्रायोजित करने वाले बैंक ने 35% का अंशदान किया. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का परिचालन क्षेत्र किसी राज्य के कुछ अधिसूचित जिलों तक ही सीमित होता है. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक प्रमुख रूप से ग्रामीण या अर्ध-शहरी क्षेत्रों से जमाराशियाँ संग्रहीत करते हैं तथा प्रमुखत: छोटे और सीमांत किसानों, कृषि श्रमिकों, ग्रामीण काश्तकारों और प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के अन्य खंडों को ऋण प्रदान करते हैं.

जैसाकि भारत सरकार द्वारा सुनिश्चित किया गया है, ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय समावेशन के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक के दिशानिर्देशानुसार बड़ी संख्या में 'अल्प सुविधायुक्त खाते' (नो फ्रिल्स खाते) खोल कर और सामान्य क्रेडिट कार्ड (जनरल क्रेडिट कार्ड-जीसीसी) के अंतर्गत कार्डधारकों को वित्तीय सहायता प्रदान कर एक समूह के रूप में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक एक मजबूत मध्यस्थ के रूप में उभरकर सामने आए हैं. 31 मार्च, 2013 तक अल्प सुविधायुक्त खातों की संख्या 319.59 लाख थी. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शाखाओं की संख्या बढ़कर 31 मार्च, 2013 को 17856 हो गई, जबकि 31 मार्च, 2012 की स्थिति के अनुसार यह 16909 थी.

सहकारी समितियों की विशेषताएं

स्वैच्छिक संस्था: एक सहकारी समिति व्यक्तियों की एक स्वैच्छिक संस्था है. कोई व्यक्ति किसी भी समय सहकारी समिति का सदस्य बना सकता है, जब तक चाहे उसका सदस्य बना रह सकता है और जब चाहे सदस्यता छोड़ सकता है.

खुली सदस्यता: सहकारी समिति की सदस्यता समान हितों वाले सभी व्यक्तियों के लिए खुली होती है. जाति, लिंग, वर्ण अथवा धर्म के आधार पर सदस्यता प्रतिबंधित नहीं होती,

परन्तु किसी विशेष संगठन के कर्मचारियों की संख्या के आधार पर सीमित हो सकती है.

पृथक वैधानिक इकाई: एक सहकारी उपक्रम को 'सहकारी समिति अधिनियम 1912' अथवा राज्य सरकार के संबद्ध सहकारी समिति अधिनियम के अंतर्गत पंजीकरण कराना अनिवार्य होता है. एक सहकारी समिति का अपने सदस्यों से पृथक वैधानिक अस्तित्व होता है.

वित्तीय स्त्रोत: सहकारी समिति में पूंजी सभी सदस्यों द्वारा लगाई जाती है. इसके अलावा, पंजीकरण के बाद समिति ऋण ले सकती है. सरकार से अनुदान भी प्राप्त कर सकती है.

सेवा उद्देश्य: एक सहकारी समिति का प्राथमिक उद्देश्य अपने सदस्यों की सेवा करना है, यद्यपि यह अपने लिए उचित लाभ भी अर्जित करती है.

सहकारी समितियों के प्रकार:-

उपभोक्ता सहकारी समितियां: उपभोक्ताओं को यह उचित मूल्य पर उपभोक्ता वस्तुएं उपलब्ध करवाती हैं. ये समितियां आम उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा के लिए बनाई जाती हैं. ये सीधे उत्पादकों और निर्माताओं से माल खरीद कर वितरण श्रृंखला से मध्यस्थों का उन्मूलन कर देती हैं. इस प्रकार माल के वितरण की प्रक्रिया में मध्यस्थों का लाभ समाप्त हो जाता है और वस्तु कम मूल्य पर सदस्यों को मिल जाती हैं. कुछ सहकारी समितियों के उदाहरण हैं केन्द्रीय भंडार, अपना बाजार, सुपर बाजार आदि.

उत्पादक सहकारी समितियां: ये समितियां छोटे उत्पादकों को उत्पादन के लिए कच्चा माल, मशीन, औजार, उपकरण आदि की आपूर्ति करके उनके हितों की रक्षा के लिए बनाई जाती हैं.

सहकारी विपणन समितियां: ये समितियां उन छोटे उत्पादकों और निर्माताओं द्वारा बनाई जाती हैं, जो अपने माल को स्वयं बेच नहीं सकते. समिति सभी सदस्यों से माल इकट्ठा करके उसे बाजार में बेचने का उत्तरदायित्व लेती हैं. अमूल दुग्ध पदार्थों का वितरण करने वाली गुजरात सहकारी दुग्ध वितरण संघ लिमिटेड ऐसी ही सहकारी विपणन समिति है.

सहकारी वित्तीय समितियां: इस प्रकार की समितियों का उद्देश्य सदस्यों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना है. समिति सदस्यों से धन इकट्ठा करके जरूरत के समय उचित ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराती है. ग्राम सेवा सहकारी समिति और शहरी सहकारी बैंक, सहकारी ऋण समिति के उदाहरण हैं.

सहकारी सामूहिक आवास समितियां: ये आवास समितियां अपने सदस्यों को

आवासीय मकान उपलब्ध कराने हेतु बनाई जाती हैं. ये समितियाँ भूमि क्रय करके मकानों अथवा फ्लैटों का निर्माण कराती हैं तथा उनका आबंटन अपने सदस्यों को करती हैं.

सहकारी समिति के लाभ

व्यावसायिक संगठन के सहकारी स्वरूप के निम्नलिखित लाभ हैं:

स्वैच्छिक संगठन: यह एक स्वैच्छिक संगठन है, जो पूँजीवादी तथा समाजवादी, दोनों प्रकार के आर्थिक तंत्रों में पाया जाता है.

लोकतांत्रिक नियंत्रण: एक सहकारी समिति का नियंत्रण लोकतांत्रिक तरीके से होता है. इसका प्रबंधन लोकतांत्रिक होता है तथा 'एक व्यक्ति- एक मत" की संकल्पना पर आधरित होता है.

खुली सदस्यता: समान हितों वाले व्यक्ति सहकारी समिति का गठन कर सकते हैं. कोई भी सक्षम व्यक्ति किसी भी समय सहकारी समिति का सदस्य बन सकता है और जब चाहे स्वेच्छा से समिति की सदस्यता को छोड़ भी सकता है.

मध्यस्थों के लाभ का उन्मूलन: सहकारी समिति में सदस्य उपभोक्ता अपने माल की आपूर्ति पर स्वयं नियंत्रण रखते हैं, क्योंकि माल उनके द्वारा सीधे ही विभिन्न उत्पादकों से क्रय किया जाता है. इसलिए इन समितियों के व्यवसाय में मध्यस्थों को मिलने वाले लाभ का कोई स्थान नहीं रहता.

सीमित देनदारी: सहकारी समिति के सदस्यों की देनदारी केवल उनके द्वारा निवेशित पूंजी तक ही सीमित है. एकल स्वामित्व व साझेदारी के विपरीत सहकारी समितियों के सदस्यों की व्यक्तिगत सम्पत्ति पर व्यावसायिक देनदारियों के कारण कोई जोखिम नहीं होता.

स्थिर जीवन: सहकारी समिति का कार्य काल दीर्घ अवधि तक स्थिर रहता है. किसी सदस्य की मृत्यु, दिवालियापन, पागलपन या सदस्यता से त्यागपत्र देने से समिति के अस्तित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता.

सहकारी समिति की सीमाएं:-

उपयुक्त लाभों के अतिरिक्त सहकारी समिति संगठन की कुछ सीमाएं भी है:

अभिप्रेरण की कमी: लाभ कमाने का उद्देश्य न होने के कारण सहकारी समिति के सदस्य पूर्ण उत्साह एवं समर्पणभाव से कार्य नहीं करते.

सीमित पूँजी: साधरणतया सहकारी समितियों के सदस्य समाज के एक विशेष वर्ग के व्यक्ति ही होते हैं. इसलिए समिति द्वारा एकत्रित की गई पूंजी सीमित होती है.

प्रबंधन में समस्याएं: सहकारी समिति का प्रबंधन प्राय: विशेष कुशल नहीं होता; क्योंकि सहकारी समिति अपने कर्मचारियों को कम पारिश्रमिक देती है.

प्रतिबद्धता का अभाव: सहकारी समिति की सफलता उसके सदस्यों की निष्ठा पर निर्भर करती है, जिसे न तो आश्वस्त किया जा सकता है और न ही बाध्य किया जा सकता है.

सहयोग की कमी: सहकारी समितियां परस्पर सहयोग की भावना से बनाई जाती हैं. लेकिन अधिकतर देखा जाता है कि व्यक्तिगत मतभेदों और अहंभाव के कारण सदस्यों के बीच लड़ाई- झगड़ा व तनाव बना रहता है. सदस्यों के स्वार्थपूर्ण रवैये के कारण कई बार समितियां बंद भी हो जाती हैं.

अत: यह कह सकते हैं कि सहकारिता ऐसे व्यक्तियों का एक ऐच्छिक संगठन है, जो लोकतंत्र, समानता व आत्म सहायता के आधार पर निजी हित व संपूर्ण समुदाय के लिये कार्य करता है, जिसका आधार सेवा है न कि लाभ.

सुनील दत्त, सहायक प्रबंधक, (राजभाषा), क्षेत्रीय कार्यालय, दिल्ली दक्षिण

यू.बी.ठाकुर

कृषक क्लब

भारत एक कृषि प्रधान देश है. भारतीय अर्थव्यवस्था में 15% से ज्यादा सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान रहता है. 60 प्रतिशत से ज्यादा आबादी कृषि तथा पूरक व्यवसाय में लगी हुई है, इसके बावजूद हम दिये गये लक्ष्य से काफी पीछे हैं. कृषि लक्ष्यों को पूरा करने हेतु किसानों में जागृति निर्माण तथा उन्हें संगठित करना जरूरी है. नये आधुनिक तंत्र से कृषि उपज में वृद्धि करना, आधुनिक तरीके से खेती करके व अन्य खर्चों में कमी करके, कम खर्चे से अधिक आय अर्जित करना, आधुनिक तंत्र ज्ञान का आदान-प्रदान कराना, कृषि में निवेश बढ़ाना, सूक्ष्म ऋण, किसानों में तथा ग्रामीण लोगों का विकास तथा उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के उद्देश्य को पूरा कराने के लिए नवंबर,1982 में राष्ट्रीय कृषि व ग्रामीण विकास बैंक की स्थापना हुई. विकास वालंटियर योजना में सुधार करके कृषक क्लब कार्यक्रम राष्ट्रीय कृषि व ग्रामीण बैंक द्वारा शुरू किया गया. इसका उद्देश्य किसानों को विज्ञान तथा आधुनिक तकनीक का उचित उपयोग कराना, कृषि में निवेश, अतिरिक्त आय से बचत कराना, ऋण की किश्त नियमित रूप से भरना तथा किसानों व ग्रामीण कारीगरों को समय पर ऋण सुविधा प्रदान कराना है. इस हेतु नाबार्ड ने ग्रामीण क्षेत्रों में कृषक क्लब की स्थापना पर ज़ोर दिया.

नाबार्ड के अनुसार कृषक क्लब का गठन निम्न संस्थाओं द्वारा किया जा सकता है :

- सभी वाणिज्य बैंक
- सहकारी बैंक,
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक,
- पोस्ट ऑफिस,

- कृषि विज्ञान केंद्र,
- खादी ग्रामोद्योग कार्पोरेशन,
- एनजीओ
- राज्य कृषि विद्यापीठ

कृषक क्लब स्थापित करने के लिए पात्रता :

1. एक या दो गांव मिलकर कृषक क्लब की स्थापना कर सकते हैं.
2. गांव के प्रतिष्ठित व्यक्ति, प्रगतिशील किसान, ऋण का सही उपयोग करने वाले ऋणी.
3. सदस्यों की संख्या कम से कम 10 होनी चाहिए. अधिकतम सदस्यों हेतु कोई सीमा नहीं है.
4. अतिदेय खातेदार को छोड़कर गांव के सभी नागरिक कृषक क्लब के सदस्य होने के लिए पात्र हैं.
5. कृषक क्लब में सदस्य होने के लिए कोई रजिस्ट्रेशन अथवा शुल्क नहीं लिया जाता है.

कृषक क्लब की कार्यप्रणाली:

कृषक क्लब किसानों के लिए एक अनौपचारिक फोरम है. कृषक क्लब में पदाधिकारी लोकशाही पद्धति द्वारा चुने जाते हैं. पदाधिकारी गांव के प्रतिष्ठित, प्रगतिशील किसानों, जिनका राजनीति से कोई संबंध न हों, में से चुने जाते हैं. सभी सदस्यों को बैंक में अपना बचत खाता खोलना होता है. मुख्य समन्वयक व सहयोगी समन्वयक, इन दोनों का बैंक में बचत खाता संयुक्त रूप से खोला जाता है. पदाधिकारी सदस्य रजिस्टर, बैठक रजिस्टर, कैश रजिस्टर, विजिट रजिस्टर इत्यादि का रखरखाव रखते हैं.

मुख्य समन्वयक व सहयोगी समन्वयक का कार्य हर माह दो-तीन बार आवश्यकतानुसार बैठक का आयोजन ग्राम पंचायत ऑफिस, स्कूल, खातेदार के मकान या अन्य जगह पर जरूरत के अनुसार करना है. बैठक में सामाजिक, आर्थिक, कृषि, आधुनिक तंत्र, स्वास्थ्य, गांव के विकास के बारे में चर्चा की जाती है. कृषक क्लब सदस्य के अलावा गांव के अन्य लोग भी बैठक में उपस्थित हो सकते हैं. सभी सदस्य गांव, बैंक अधिकारी, तहसील ऑफिस, सरकारी कार्यालय, कृषि संस्था, जिला परिषद,

कृषि विज्ञान केंद्र आदि से संपर्क बनाए रखते हैं व योजना अपने गांव के अन्य लोगों को बताते हैं तथा उस पर चर्चा की जाती है. कृषक क्लब सदस्य हर वर्ष प्रगतिशील किसानों/ कृषि विद्यापीठ द्वारा किए गए नए प्रयोग, कृषि तंत्र का प्रसार-प्रचार करते हैं और गांव में बैठक के दौरान अन्य किसानों को इसकी विस्तृत जानकारी देते हैं, जिससे किसानों में आत्मविश्वास बढ़ता है.

कृषक क्लब के लाभ :

हमने अपने बैंक की ग्रामीण शाखा में कृषक क्लब की स्थापना की थी, जिससे हमें बहुत लाभ हुआ, जैसे कि:

- शाखा के ऋण में वृद्धि
- जमा राशि में बढ़ोतरी
- ऋण का सही उपयोग
- ऋण वसूली में भारी वृद्धि
- बचत खातों में तथा आय में वृद्धि

इसके अलावा गांव का विकास हुआ एवं लोगों की सोच में बदलाव आया. कृषक क्लब के माध्यम से बैंकों एवं सरकारी योजनाएं गांवों तक पहुंच सकीं. इसके अलावा कृषक क्लब द्वारा गांव में स्वास्थ्य चेक-अप कैंप, पशु चिकित्सा कैंप, शिक्षा, साक्षरता मिशन, सामाजिक वनीकरण, पर्यावरण, जैविक खेती, टीकाकरण, शराबबंदी, कृषि उपज की मार्केटिंग, आधुनिक तंत्र ज्ञान का कृषि में विस्तार, उसके महत्व, कृषि विद्यापीठ द्वारा आधुनिक टेक्नालाजी का प्रयोग किसानों तक पहुंचाया. अब हर गांव में कृषक क्लब का प्रभाव बढ़ रहा है.

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक(नाबार्ड)द्वारा सहायता :

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक सभी संस्थाओं को कृषक क्लब को बढ़ावा देने के लिए सहायता प्रदान करता है. प्रतिवर्ष रु.10000/- प्रति कृषक क्लब को तीन वर्ष तक सहायता मिलती है, जिसमें रु.5000/ ओरियंटेशन कार्यक्रम रु.2000/ संगठन के रख-रखाव और रु.3000/ सभा के आयोजन व अन्य खर्चों हेतु प्रदान किया जाता है, जिसका लाभ कृषक क्लब को होता है. गैर-सरकारी संगठन तथा कृषि विज्ञान केंद्र को रु.2000/- प्रति क्लब अतिरिक्त प्रोत्साहन राशि दी जाती है. पहाड़ी/ दूर-दराज स्थित स्थान/ नक्सली क्षेत्रों को रु.3000/- की राशि प्रदान की जाती है. राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण

विकास बैंक, कृषक क्लब के जरिये किसानों की क्रय शक्ति, लीडरशिप, आत्मविश्वास इत्यादि बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण देता है. गांव में स्वयं सहायता बचत, संयक्त देयता समूह, बिज़नेस फेसिलिटेटर, बिज़नेस करेस्पांडेण्ट, मार्केटिंग, आधुनिक तंत्र का आदान-प्रदान संबंधी जानकारी किसानों को दी जाती है.

कृषक क्लब को दीर्घकाल तक बनाए रखने के लिए सदस्यों से सदस्यता शुल्क लिया जाता है. सदस्यों द्वारा लिए गए निर्णय के अनुसार मासिक बचत का प्रावधान होता है. बीमा उत्पादों के विक्रय से प्राप्त होने वाले कमीशन, स्वयं सहायता समूह/संयुक्त देयता समूह गठन से प्राप्त कमीशन से कृषक क्लब को सुचारु रूप से चला सकते हैं. कृषि तथा ग्रामीण विकास में कृषक क्लब का बड़ा योगदान रहा है. अतः हर गांव में कृषक क्लब होना जरूरी है, यही समय की मांग है.

यू.बी.ठाकुर, सहायक महाप्रबंधक, ग्रामीण एवं कृषि कारोबार विभाग, के. का., मुंबई

संतोष श्रीवास्तव

सतत हरित क्रांति

भारत की कुल जनसंख्या की 75 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हुए कृषि कार्यों में संलग्न है. यह विडम्बना है कि एक कृषि प्रधान देश होने के बावजूद भारत में कृषि कभी सूखे, तो कभी बाढ़ जैसी आपदाओं से प्रभावित होती रही है. इसी कारण खाद्यान्न के उत्पादन में कमी, खाद्यान्न महंगा होना एवं उसका आयात एक गंभीर चुनौती है. इस समस्या के समाधान हेतु यह आवश्यक था कि लक्ष्य निर्धारित कर प्रभावशाली योजना बनाई जाए. 'हरित क्रांति' की अवधारणा इसी का परिणाम है. हरित क्रांति ने आशा और उम्मीद की किरण दिखाई देती है, जिसने कृषि जगत में आमूल-चूल परिवर्तन के साथ नये आयामों को छुआ है.

हरित क्रांति का शुभारंभ:

हरित क्रांति की शुरुआत वर्ष 1966-67 से हुई. हरित क्रांति का श्रेय नोबल पुरस्कार विजेता प्रोफेसर नॉरमन बोरलॉग को जाता है. इसके बाद डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन, जो भारत के प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक थे, उन्होंने हरित क्रांति में महत्वपूर्ण योगदान दिया.

हरित क्रांति का अर्थ:

हरित क्रांति का अभिप्राय सिंचित एवं असिंचित कृषि क्षेत्रों में अधिक उपज देने वाले संकर तथा बौने बीजों के उपयोग से फसल उत्पादन में वृद्धि करना और अधिकाधिक क्षेत्रों में सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराना है.

पंचवर्षीय योजना में हरित क्रांति:

भारत में कृषि सुधारों के प्रयासों के अंतर्गत चौथी पंचवर्षीय योजना 1969-1974 में कृषि क्षेत्र को महत्व दिया गया. खाद्यान्न स्वावलंबन के संघर्षपूर्ण समय में लाल बहादुर शास्त्री ने 'जय जवान-जय किसान' का नारा दिया.

भारत में हरित क्रांति के प्रयासों के दौरान फसल उत्पादन में सबसे अधिक वृद्धि गेहूं की रही, क्योंकि भारत बड़े पैमाने पर विदेशी गेहूं आयात कर रहा था. इस तरह से हरित क्रांति ने भारत को खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बना दिया और आज भारत 15 अग्रणी कृषि उत्पादक निर्यातकों में से एक है.

हरित क्रांति की उपलब्धियां:

हरित क्रांति के फलस्वरूप भारत में कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति हुई, जो निम्नानुसार है:

- कृषि क्षेत्र में सुधार के फलस्वरूप कृषि उत्पादन बढ़ा.
- खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता आई.
- व्यावसायिक कृषि को बढ़ावा मिला.
- कृषकों के दृष्टिकोण में परिवर्तन आया.
- कृषि आय में वृद्धि हुई.

हरित क्रांति के कारण कृषि में तकनीकी, संस्थागत परिवर्तन एवं उत्पादन में निम्नानुसार सुधार हुए हैं:

- **नवीन कृषि नीति:** नवीन कृषि नीति के परिणामस्वरूप रासायनिक उर्वरकों के उपभोग की मात्रा में वृद्धि हुई. वर्ष 1960-1961 में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग प्रति हेक्टेयर दो किलोग्राम होता था, जो वर्ष 2008-2009 में बढ़कर 128.6 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर हो गया है. इसी तरह वर्ष 1960-1961 में रासायनिक खादों की कुल खपत 2.92 लाख टन थी, जो बढ़कर वर्ष 2008-2009 में 249.09 लाख टन हो गई.

- **उन्नतशील बीजों के प्रयोग में वृद्धि**: देश में अधिक उपज देने वाले बीजों की नई-नई किस्मों की खोज की गई तथा उनके प्रयोग से उन्नतशील बीजों का प्रयोग बढ़ा. अभी तक अधिक उपज देने वाली फसलों में गेहूं, धान, बाजरा, मक्का व ज्वार को शामिल किया गया था, परन्तु सबसे अधिक सफलता गेहूं में प्राप्त हुई है.

  इसी क्रम में वर्ष 2008-2009 में 1,00,000 क्विंटल प्रजनक बीज तथा 9.69 लाख क्विंटल आधार बीजों का उत्पादन हुआ तथा 190 लाख प्रमाणित बीज कृषकों के बीच वितरित किये गये.

- **सिंचाई सुविधाओं का विकास:** सिंचाई सुविधाओं की नई विकास विधि के अंतर्गत देश में सिंचाई सुविधाओं का तेजी के साथ विस्तार किया गया है. वर्ष 1951

में देश में कुल सिंचाई क्षमता 223 लाख हेक्टेयर थी, जो वर्ष 2008-2009 में 1,073 लाख हेक्टेयर हो गई, इसी तरह देश में वर्ष 1951 में कुल सिंचित क्षेत्र 210 लाख हेक्टेयर था, जो वर्ष 2008-2009 में 673 लाख हेक्टेयर हो गया.

- **पौध संरक्षण योजनाएं**: कृषि विकास प्रयासों के अन्तर्गत पौध संरक्षण पर भी ध्यान दिया गया. इसके अंतर्गत खर-पतवार एवं कीटों का नाश करने के लिये दवा छिड़कने का कार्य किया गया और टिड्डी दल पर नियन्त्रण करने के प्रयास किये गए. वर्तमान में समेकित कृषि प्रबन्ध के अन्तर्गत 'अनुकूल कृषि नियंत्रण' कार्यक्रम लागू किया गया है.

- **बहु-फसली कार्यक्रम को बढ़ावा**: 'बहु-फसली कार्यक्रम' का उद्देश्य एक ही भूमि पर वर्ष में एक से अधिक फ़सल उगाकर उत्पादन को बढ़ाना है, अर्थात भूमि की उर्वरता शक्ति को नष्ट किये बिना, भूमि के एक इकाई क्षेत्र से अधिकतम उत्पादन प्राप्त करना. वर्ष 1966-1967 में 36 लाख हेक्टेयर भूमि में यह कार्यक्रम लागू किया गया. वर्तमान समय में भारत की कुल सिंचित भूमि के 71 प्रतिशत भाग पर यह बहु-फसली कार्यक्रम लागू है.

- **आधुनिक कृषि यंत्रों का प्रयोग:** कृषि विकास विधि एवं हरित क्रांति में आधुनिक कृषि उपकरणों जैसे: ट्रैक्टर, थ्रेसर, हार्वेस्टर, बुलडोजर, डीजल एवं बिजली के पम्पसेटों आदि ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है. इसी प्रकार कृषि में पशुओं तथा मानव शक्ति के विकल्पों का प्रयोग किये जाने से कृषि क्षेत्र के उपयोग एवं उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है.

- **कृषि सेवा केन्द्रों की स्थापना**: कृषकों में कृषि के नये प्रयोगों एवं व्यावसायिक क्षमता को बढ़ाने के लिए देश में कृषि सेवा केन्द्र स्थापित करने की योजना लागू की गई. इस योजना में पहले व्यक्तियों को तकनीकी प्रशिक्षण दिया जाता है, फिर इनसे सेवा केंद्र स्थापित करने को कहा जाता है. इसके लिये उन्हें राष्ट्रीयकृत बैंकों से सहायता दिलाई गई. अब तक देश में कुल 1,314 कृषि सेवा केन्द्र स्थापित किये जा चुके हैं.

- **कृषि उद्योग एवं अन्य निगमों की स्थापना**: सरकारी नीति के अंतर्गत 17 राज्यों में कृषि उद्योग निगमों की स्थापना की गई. इन निगमों का कार्य कृषि उपकरणों व मशीनरी की पूर्ति तथा उपज प्रसंस्करण एवं भंडारण को प्रोत्साहन देना है. इसके लिये यह निगम किराया क्रय पद्धति के आधार पर ट्रैक्टर, पम्पसेट एवं अन्य मशीनरी को वितरित करता है.

हरित क्रांति की प्रगति अधिक उपज देने वाली किस्मों एवं उत्तम सुधरे हुये बीजों पर निर्भर करती है. इसके लिये देश में 400 कृषि फार्म स्थापित किये गये हैं. वर्ष 1963 में राष्ट्रीय बीज निगम की स्थापना की गई. वर्ष 1963 में राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम की स्थापना की गई, जिसका मुख्य उद्देश्य कृषि उपज का विपणन, प्रसंस्करण एवं भंडारण करना है. विश्व बैंक की सहायता से राष्ट्रीय बीज परियोजना भी प्रारंभ की गई, जिसके अंतर्गत कई बीज निगम बनाये गये हैं. भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारिता विपणन संघ (नेफेड) एक शीर्ष विपणन संगठन है, जो प्रबंधन, विपणन एवं कृषि संबंधित चुनिन्दा वस्तुओं के आयात-निर्यात का कार्य करता है. इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की स्थापना कृषि वित्त के कार्य हेतु की गई है. कृषि के लिये खाद्य निगम एवं उर्वरक साख गारंटी निगम, ग्रामीण विद्युतीकरण निगम आदि भी स्थापित किए गए हैं.

- **मिट्टी परीक्षण कार्यक्रम:** मिट्टी परीक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत विभिन्न क्षेत्रों की मिट्टी का परीक्षण सरकारी प्रयोगशालाओं में किया जाता है. इसका उद्देश्य भूमि की उर्वरा शक्ति का पता लगाकर कृषकों को तदनुरूप रासायनिक खादों एवं उत्तम बीजों के प्रयोग की सलाह देना है. वर्तमान समय में इन सरकारी प्रयोगशालाओं में प्रतिवर्ष सात लाख नमूनों का परीक्षण किया जाता है. कुछ चलती-फिरती प्रयोगशालाएं भी स्थापित की गई हैं, जो गांव-गांव जाकर मौके पर मिट्टी का परीक्षण करके किसानों को सलाह देती हैं.

- **भूमि संरक्षण कार्यक्रम**: संरक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत कृषि योग्य भूमि को क्षरण से रोकने तथा ऊबड़-खाबड़ भूमि को समतल बनाकर कृषि योग्य बनाया जाता है. यह कार्यक्रम उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात तथा मध्य प्रदेश में लागू है.

- **कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान विस्तार योजना:** सरकार की कृषि नीति के अंतर्गत कृषि शिक्षा का विस्तार करने के लिये पंतनगर में पहला कृषि विश्वविद्यालय स्थापित किया गया है. वर्तमान समय में कृषि और इससे संबंधित क्षेत्रों में उच्च शिक्षा हेतु 4 कृषि विश्वविद्यालय, 39 राज्य कृषि विश्वविद्यालय और इम्फाल में एक केन्द्रीय विश्वविद्यालय है. कृषि अनुसंधान हेतु "भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद" है, जिसके अंतर्गत 53 केन्द्रीय संस्थान, 32 राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्र, 12 परियोजना निदेशालय एवं 64 अखिल भारतीय समन्वय अनुसंधान परियोजनाएं हैं.

इसके अतिरिक्त देश में 527 कृषि विज्ञान केन्द्र हैं, जो शिक्षण एवं प्रशिक्षण का कार्य कर रहे हैं. कृषि शिक्षा एवं प्रशिक्षण की गुणवत्ता बनाये रखने के लिये विभिन्न संस्थाओं को कंप्यूटरीकरण और इंटरनेट की सुविधा प्रदान की गई है.

'हरित क्रांति' के फलस्वरूप खेती के परंपरागत स्वरूप में परिवर्तन हुआ है और खेती व्यावसायिक दृष्टि से की जाने लगी है. देश में गन्ना, कपास, पटसन तथा तिलहनों के उत्पादन में वृद्धि हुई है. हरित क्रांति के अन्तर्गत वर्तमान समय में बाग़वानी, फलों, सब्जियों तथा फूलों की खेती को भी बढ़ावा दिया जा रहा है.

हरित क्रांति की सफलता के लिये सुझाव:

प्रोत्साहन: हरित क्रांति की सफलता के लिए प्रोत्साहन नीति को अपनाना चाहिए. इसके अंतर्गत भूमि सुधार कार्यक्रमों को प्रभावी और विस्तृत रूप से लागू किया जाना, बटाईदारों को स्वामित्व का अधिकार दिलाया जाना, सीमा निर्धारण से प्राप्त अतिरिक्त भूमि को भूमिहीन कृषकों में वितरित किया जाना शामिल है.

वित्तीय सुविधा: कृषि वित्त की सुविधाएं बढ़ाते समय छोटे किसानों को रियायती दर पर साख की सुविधा उपलब्ध करायी जानी चाहिए, ताकि वे आवश्यक उन्नत बीज, रासायनिक खाद तथा कृषि उपकरण क्रय कर सकें. इसके लिए बैंकों एवं अन्य वित्तीय संस्थानों के माध्यम से वित्तीय सुविधाएं उपलब्ध करवाना शामिल है. जिससे किसान सूदखोरों के चंगुल से निकल सकें और हरित क्रांति में अपना योगदान दे सकें.

रोज़गार में वृद्धि: ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की समस्या के समाधान के लिए खाद्यान्न आधारित उद्योगों का तेजी से विस्तार किया जाना चाहिए.

सिंचाई के साधनों का विकास: देश में सिंचाई की सुविधाओं का पर्याप्त विकास किया जाना चाहिए, ताकि अधिक उपज देने वाली किस्मों का पूरा लाभ किसानों को मिल सके. इसके लिए लघु सिंचाई परियोजनाओं के विस्तार पर ध्यान दिया जाना चाहिए.

अन्य फसलों तक विस्तार: हरित क्रांति की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि इसका विस्तार चावल तथा अन्य फसलों की खेती तक किया जाये एवं इन्हें हरित क्रांति के प्रभाव क्षेत्र में शामिल किया जाए.

राष्ट्रीय कृषि नीति: केंद्र सरकार ने 28 जुलाई, 2000 को "नयी राष्ट्रीय कृषि नीति" की घोषणा की. इस नीति में सरकार ने वर्ष 2020 तक कृषि के क्षेत्र में प्रतिवर्ष 4 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य रखा है. इस तरह से हरित क्रांति भारतीय कृषि एवं कृषकों के लिए एक "प्रकाश स्तंभ" है. इसे लक्षित करते हुए, आगे बढ़ने से भारतीय अर्थव्यवस्था, कृषि एवं कृषकों को निश्चित रूप से लाभ हो रहा है एवं इसके परिणाम उत्साहवर्धक होंगे.

संतोष श्रीवास्तव, स्टाफ प्रशिक्षण केन्द्र, भोपाल

पुष्कर कुमार सिन्हा

खाद्य एवं कृषि प्रसंस्करण

खाद्य प्रसंस्करण अर्थात कृषि एवं बागवानी उत्पादों में विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा इस प्रकार गुणवत्ता वृद्धि करना है; ताकि जिससे ये पदार्थ ज्यादा दिनों तक प्रयोग में लाए जा सकें एवं अच्छी पैकिंग द्वारा विभिन्न शहरों, राज्यों एवं देशों तक इन्हें पहुंचाया जा सके, नाना प्रकार के स्वाद समायोजित किए जा सकें व अच्छे मूल्यों पर बेचे जा सकें इत्यादि. यह एक तकनीक है खाद्य पदार्थों को बनाने एवं बचाने की, जिससे गुणवत्ता में वृद्धि हो सके एवं काफी दिनों तक खाने योग्य बनाए रखा जा सके. भारत वर्ष विश्व के श्रेष्ठ खाद्य उत्पादक देशों में एक है तथा यहां शीघ्र नष्ट एवं शीघ्र नष्ट नहीं होने वाले खाद्य पदार्थों की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता है. इसलिए भारत में खाद्य प्रसंस्करण उद्योग के निर्माण एवं विकास की असीम संभावनाएं हैं. आवश्यकता है बस खाद्य प्रसंस्करण उद्योग के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करने की, आधारभूत संरचना के विकास की, फार्म से पॉर्क तक की व्यवस्था का एकीकरण करने की, फूड पार्क की सारी सुविधाओं के साथ निर्माण करने की इत्यादि.

खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र कई कारणों से क्षमता के अनुसार अपनी उपयोगिता सिद्ध करने में असमर्थ रहा है, जिसमें प्रमुख हैं उपयुक्त संरचना का अभाव, डिब्बे बंद खाद्य पदार्थ की जगह ताजे खाद्य पदार्थों को प्राथमिकता, पैकिंग में ज्यादा खर्च इत्यादि. किन्तु वर्तमान परिस्थिति में युवा आबादी के बढ़ने, एकाकी परिवार के बढ़ने, महिलाओं में रोजगार के प्रति झुकाव एवं प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि से प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों की प्रासंगिकता निरंतर बढ़ रही है.

खाद्य प्रसंस्करण उद्योग, भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास के लिए अपरिहार्य है, क्योंकि खेतों एवं उद्योगों के बीच तालमेल बैठाने हेतु यह महत्वपूर्ण कड़ी है. यह सहायता करता है खेती में विविधता लाने में, खेतों के वाणिज्यिकरण में, किसानों की आय बढ़ाने में, एग्रो फूड के निर्यात हेतु बाज़ार तैयार करने में, रोजगार के वृहद अवसर तैयार करने में इत्यादि. इस तरह के उद्योगों के विकास से विविध खाद्य पदार्थों को दूरदराज के क्षेत्रों

में वितरित एवं बेचा जा सकता है.

उपलब्ध सूचनाओं के आधार पर भारत में 146 मिलियन टन दूध (विश्व में प्रथम), 255 मिलियन टन फल एवं सब्जियां (विश्व में द्वितीय), 252 मिलियन टन खाद्यान्न (विश्व में तृतीय), 10 मिलियन टन मछली (विश्व में द्वितीय), 3.8 मिलियन टन मुर्गी (विश्व में चतुर्थ), 7000 मिलियन अंडे (विश्व में तृतीय) उत्पादित होते हैं. साथ ही साथ, सभी तरह के खाद्यान्न यथा गेहूं, धान, ज्वार, बाजरा इत्यादि के उत्पादन में भारत आत्म निर्भर है, जिसके फलस्वरूप निवेशकों के लिए यह क्षेत्र बहुत उपयोगी साबित हो सकता है.

खाद्य प्रसंस्करण के समुचित विकास के लिए सरकार के कदम :

खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय: खाद्य प्रसंस्करण के समुचित विकास हेतु केंद्र सरकार ने एक पूर्ण रूप से समर्पित मंत्रालय का गठन किया है, जिसका नाम है 'खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय'. यह मंत्रालय विभिन्न राज्य सरकारों के साथ समन्वय स्थापित कर खाद्य प्रसंस्करण के विकास के लिए कार्य करता है. इस मंत्रालय का लक्ष्य है खराब होने वाली कृषि उपज की बर्बादी में कमी करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाना, समग्र राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अन्तर्गत नीतियों एवं खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों के लिए योजनाओं का क्रियान्वयन करना, खाद्य उत्पादों के शेल्फ जीवन को बढ़ाना, कृषि का व्यवसायीकरण सुनिश्चित करना, मूल्य संवर्धन सुनिश्चित कर किसानों की आय बढ़ाने में योगदान देना, कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के निर्यात को बढ़ावा देना. आर्थिक उदारीकरण के युग में सभी वर्गों यथा निजी, सार्वजनिक और सहकारी क्षेत्रों की भूमिका को खाद्य प्रसंस्करण के विकास में सक्रिय भागीदारी निभाने को प्रेरित करना भी इस मंत्रालय के विभिन्न लक्ष्यों में एक है.

खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय की विभिन्न भूमिकाएं इस प्रकार हैं:

- किसानों की आय बढ़ाने के लिए कृषि उपज का बेहतर उपयोग एवं मूल्य संवर्धन.
- भंडारण, परिवहन और कृषि खाद्य उत्पादों के प्रसंस्करण के लिए बुनियादी ढांचे के विकास से खाद्य प्रसंस्करण श्रृंखला में सभी चरणों में अपव्यय को कम करना.
- घरेलू और बाहरी स्त्रोतों से खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों में आधुनिक तकनीक को प्रेरित करना.
- उत्पाद प्रक्रिया के विकास एवं बेहतर पैकेजिंग के लिए खाद्य प्रसंस्करण में अनुसंधान एवं विकास को प्रोत्साहन.
- बुनियादी ढांचे का निर्माण, क्षमता विस्तार/ उन्नयन और अन्य सहायक उपाय.

- प्रसंस्कृत खाद्य उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देना.

खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय की विकास संबंधी विभिन्न गतिविधियां इस प्रकार हैं:

- मेगा फूड पार्कों एवं एकीकृत कोल्ड चेन के माध्यम से खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र के विकास के लिए विश्व स्तरीय बुनियादी सुविधाओं का सृजन.
- बूचड़खानों के आधुनिकीकरण और खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र के लिए विभिन्न योजनाओं के तहत योजना सहायता प्रदान करना.
- अनुसंधान एवं विकास गतिविधियों के लिए विभिन्न अनुसंधान एवं विकास संस्थानों की भागीदारी और समर्थन से खाद्य प्रसंस्करण में अनुसंधान एवं विकास का आधार बढ़ाना.
- मानव संसाधन विकास द्वारा खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में प्रबंधकों, उद्यमियों और कुशल श्रमिकों की बढ़ती आवश्यकता को पूरा करने में सहयोग करना.
- परीक्षण प्रयोगशालाओं, खाद्य मानकों और अंतर्राष्ट्रीय मानकों की स्थापना के लिए सहायता.
- हरियाणा में एक राष्ट्रीय स्तर का संस्थान 'खाद्य प्रौद्योगिकी उद्यमिता और प्रबंधन संस्थान (NIFTEM)' की स्थापना की गई है, जिसका उदेश्य है सभी समस्याओं के लिए 'एक स्थान पर समाधान प्रदाता' के रूप में कार्य करना.
- एक एकीकृत खाद्य कानून यानि खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियम अधिसूचित किया गया है, जो खाद्य कानून और नियामक एजेंसियों की बहुलता को दूर करने में सक्षम होगा और खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र के लिए एकल खिड़की प्रदान करेगा.

कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (APEDA): अपेडा की स्थापना दिसंबर, 1985 में संसद द्वारा पारित कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण अधिनियम के अंतर्गत भारत सरकार द्वारा की गई. इस प्राधिकरण को निम्नलिखित कार्य सौंपे गये हैं:

- वित्तीय सहायता प्रदान कर तथा सर्वेक्षण व संभाव्यता अध्ययन संयुक्त उद्यमों के माध्यम से पूंजी लगाकर एवं अन्य राहत व आर्थिक सहायता योजनाओं के द्वारा अनुसूचित उत्पादों के निर्यात से संबद्ध उद्योगों का विकास करना.
- निर्धारित शुल्क के भुगतान पर अनुसूचित उत्पादों के निर्यातकों के रूप में व्यक्तियों का पंजीकरण करना.

- निर्यात उद्देश्य के लिए अनुसूचित उत्पादों के लिए मानक और विनिर्देश तय करना.
- बूचड़खानों, संसाधन संयंत्रों, भंडारण परिसर, वाहनों या अन्य स्थानों में जहाँ ऐसे उत्पाद रखे जाते हैं या उन पर कार्य किया जाता है, उन उत्पादों की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से निरीक्षण करना.
- अनुसूचित उत्पादों की पैकेजिंग तथा विपणन में सुधार लाना.
- भारत से बाहर अनुसूचित उत्पादों के विपणन में सुधार लाना.
- निर्यातोन्मुख उत्पादन को प्रोत्साहन और अनुसूचित उत्पादों का विकास.
- उत्पादन, प्रसंस्करण, पैकेजिंग, विपणन या अनुसूचित उत्पादों के निर्यात में लगे संगठनों या कारखानों के मालिकों या अनुसूचित उत्पादों से सम्बद्ध मामलों के लिए निर्धारित ऐसे अन्य व्यक्तियों से आंकड़े एकत्र करना तथा इस प्रकार एकत्रित किए गए आंकड़ों या उनके किसी एक भाग या उनके उद्धरण प्रकाशित करना.
- अनुसूचित उत्पादों से जुड़े उद्योगों के विभिन्न पहलुओं पर प्रशिक्षण देना.

लघु कृषक कृषि व्यापार संघ (SFAC): इस संघ का मुख्य उद्देश्य सरकारी और गैर सरकारी निवेश एवं समन्वय स्थापित करते हुए किसानों का सशक्तिकरण सुनिश्चित करना है. छोटे किसानों को निजी, सहकारी एवं कॉर्पोरेट सेक्टर की सहायता द्वारा तकनीक से जोड़ना एवं बाज़ार उपलब्ध कराना और यदि जरूरी हो तो पीछे और आगे की गतिविधियों को जोड़ना.

भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा घोषित प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र की नीति :

अप्रैल, 2015 की भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा घोषित प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के लिए ऋण हेतु वर्गीकरण के तहत खाद्य प्रसंस्करण के लिए प्रदत्त रु 100 करोड़ तक के ऋण, कृषि क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं. नीति में इस स्तर का बदलाव सूचक है खाद्य प्रसंस्करण के क्षेत्र की प्रासंगिकता का कृषि, बागवानी, मछली पालन, दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन इत्यादि कार्यों को खाद्य प्रसंस्करण के द्वारा उपयुक्त बाज़ार उपलब्ध कराना एवं ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले नागरिकों के आर्थिक स्वाबलंबन का. प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र की नीति में उपयुक्त बदलाव से बैंक, कृषि क्षेत्र के ऋण लक्ष्य की प्राप्ति, खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र को बढ़ावा देकर आसानी से कर पाएंगे.

खाद्य प्रसंस्करण के विकास में बैंकों की भूमिका :

कृषि क्षेत्र के उधार को तीन वर्गों में बांटा गया है: क) अल्पावधि, मध्यावधि या दीर्घावधि

फसल ऋण, ख) कृषि बुनियादी संरचना, ग) सम्बद्ध गतिविधियां

सम्बद्ध कार्यकलाप या गतिविधियों में प्रमुख हैं खाद्यान्न एवं एग्रो प्रसंस्करण के लिए बैंकिंग प्रणाली से प्रति उधारकर्ता रु.100 करोड़ की समग्र स्वीकृत सीमा तक के लिए ऋण. यदि सम्बद्ध कार्यकलाप यथा खाद्य प्रसंस्करण उद्योग को बैंक द्वारा बढ़ावा दिया जाता है, तो इस उद्योग के प्रमुख कच्चा पदार्थ स्त्रोत यानि फसल और कृषि बुनियादी संरचना में भी समांतर विकास होगा तथा बैंक के लिए स्वस्थ ऋण बढ़ाने में सहायता मिलेगी. आसानी से एवं उपयुक्त मात्रा में कच्चे पदार्थ की उपलब्धता, सरकार की सहयोगी नीतियाँ, लोगों के जीवन स्तर में लगातार सुधार इत्यादि कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु हैं, जो ऋण देने के निर्णय को आसान बनाते हैं.

किसी भी तरह के ऋण के निर्णय के लिए जो बात सर्वप्रथम हमारे ध्यान में बात आती है वह है ऋणी, जो बैंक के पैसे को ब्याज सहित समय पर लौटा पाने में सक्षम होगा अथवा नहीं. इसके लिए पुनः दो बातों का ध्यान रखना पड़ता है कि ऋणी का इरादा ऋण लौटाने का है अथवा नहीं और दूसरा ऋणी की क्षमता ऋण लौटने की है अथवा नहीं. खाद्यान्न एवं एग्रो प्रसंस्करण उद्योग की विशेषता यह भी है कि आर्थिक मंदी का इस उद्योग पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है. क्योंकि इस उद्योग के उत्पाद यानि खाद्य पदार्थों का उपभोक्ताओं द्वारा उपयोग मंदी के असर से अप्रभावित रहता है. यदि ऋणी कृषि पृष्ठभूमि का है, उसके पास मार्जिन के लिए उपयुक्त पूंजी है, उसके द्वारा उपयोग किए गए ऋण किसी भी बैंक में एनपीए नहीं हैं तथा ऋणी जो खाद्यान्न एवं एग्रो प्रसंस्करण उद्योग लगाना चाहता है, उसके बारे में उसकी अच्छी समझ है, तो किसी भी बैंक के लिए ऐसे लोगों को ऋण देना आसान हो जाता है. खाद्यान्न एवं एग्रो प्रसंस्करण उद्योग में ऋण देने से पहले जोखिम से संबंधित कुछ पहलू को समझने की जरूरत होती है, जैसे:

प्रबंधन जोखिम: इस जोखिम को कम करने के लिए जिन पहलुओं का ध्यान रखने की जरूरत है वे हैं प्रबंधकों की साख, ट्रैक रिकॉर्ड, प्रबंधकीय योग्यता, संबंधित क्षेत्र का अनुभव, विशेषज्ञता, प्रतिबद्धता, संरचना और कार्य करने का तरीका इत्यादि. विक्रय और लाभ के लक्ष्य को पाने की क्षमता, भुगतान अभिलेख, बैंक से संबंध जैसे कुछ अन्य बिन्दु हैं जिन पर, प्रबंधकीय जोखिम को कम करने के लिए ध्यान दिये जाने की जरूरत है.

कारोबार जोखिम: जिस उद्योग के लिए वित्त पोषण करना है, उसके लिए कच्चे पदार्थ की उपलब्धता एक महत्वपूर्ण पहलू है. यदि चावल मिल लगाना है तो यह जानकारी होनी चाहिए कि उपयुक्त मात्रा एवं गुणवत्ता के धान क्षेत्र के आस पास उपलब्ध हैं. इसी तरह किसी भी प्रकार के उद्योग के लिए कच्चे पदार्थ की उपयुक्त मात्रा एवं गुणवत्ता के साथ

निरंतर उपलब्धता इकाई की सफलता के लिए जरूरी है. खाद्य उत्पाद के बाज़ार की हालांकि पर्याप्त उपलब्धता है, किन्तु वितरण एवं विपणन की सही योजनाएं, उद्योग की सफलता को सुनियोजित करने में सहायता करती हैं.

वित्तीय जोखिम: इस जोखिम का आकलन करने के लिए ऋणी की वित्तीय स्थिति देखी जाती है, जिससे उसके कारोबार में पूंजी लगाने की क्षमता का पता चलता है. वित्तीय स्थिति का आनुपातिक विश्लेषण करके ऋणी की आर्थिक स्थिति का पता चलता है.

औद्योगिक जोखिम: संबंधित उद्योग की विशेषता जैसे प्रतियोगिता, मांग और आपूर्ति में अंतर, क्षमता के उपयोग का स्तर इत्यादि बिन्दुओं का ध्यान रखकर औद्यौगिक जोखिम को कम किया जा सकता है. एक उद्योग को स्थापित करने के लिए सरकारी तंत्र द्वारा विभिन्न प्रमाण पत्र प्रदान किए जाते हैं, जो उद्योग को वैधानिक मान्यता देते हैं, जैसे उद्योग प्रमाण पत्र, उत्पाद कर संख्या, बिक्री कर संख्या, सर्विस कर संख्या, बिजली कनैक्शन के लिए अनापत्ति प्रमाण पत्र.

भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है और कृषि का राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद में योगदान लगभग 17% है. कृषि क्षेत्र भारत की आबादी के लगभग 65% लोगों को प्रत्यक्ष रूप से जीविका उपलब्ध कराता है तथा कुल निर्यात में लगभग 21% योगदान देता है. कृषि उत्पाद कई उद्योगों में कच्चे पदार्थ के रूप में प्रयोग होता है.

कृषि क्षेत्र के विकास के द्वारा रोजगार सृजन की असीम संभावनाएं हैं, जो ग्रामीण क्षेत्र से गरीबी उन्मूलन में काफी योगदान दे सकती हैं. ये लक्ष्य तभी हासिल किए जा सकते हैं, जब ठोस प्रयास के द्वारा अप्रयुक्त क्षमता का उपयोग किया जाए. विभिन्न फसल के कम उत्पादन, क्षेत्रवार विकास में असमानताएं, फसल कटाई के बाद नुकसान और अपर्याप्त प्रसंस्करण सुविधाएं इत्यादि कृषि क्षेत्र की कुछ प्रमुख कमियां हैं, जिन पर ध्यान दिये जाने की जरूरत है.

यदि खाद्य एवं कृषि प्रसंस्करण द्वारा उत्पादक और उपभोक्ता के बीच सकारात्मक सामंजस्य स्थापित हो पाता है, तो रोजगार के अवसर बढ़ेंगे और कृषि उत्पाद के अच्छे विपणन की सहायता से ग्रामीण आमदनी को बढ़ाया जा सकेगा.

पुष्कर कुमार सिन्हा, वरिष्ठ प्रबंधक (संकाय), स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र, भोपाल

तुषार श्रीवास्तव

जैविक खेती - क्यों और कैसे

पृथ्वी, मानव व पर्यावरण के बीच मधुर, परस्पर लाभदायी तथा दीर्घायु सम्बन्धों की अवधारणा को आधार बनाकर आज की जैविक खेती अपने प्रारम्भिक काल के मुक़ाबले अब और अधिक जटिल हो गई है और अनेक नए आयाम अब इसके अंग हैं. जैविक खेती का नीति निर्धारण प्रक्रिया में प्रवेश तथा अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में उत्कृष्ट उत्पाद के रूप में पहचान इसकी बढ़ती महत्ता का प्रतीक है.

विगत दो दशकों में विश्व समुदाय में खाद्य गुणवत्ता सुनिश्चित करने के साथ-साथ पर्यावरण को स्वस्थ रखने हेतु भी जागरूकता बढ़ी है. अनेक किसानों व संस्थाओं ने इस विधा को भी समान रूप से उत्पादन क्षम पाया है. जैविक खेती प्रणेताओं का तो पूरा विश्वास है कि इस विधा से न केवल स्वस्थ वातावरण, उपयुक्त उत्पादकता तथा प्रदूषणमुक्त खाद्य प्राप्त होगा; बल्कि इसके द्वारा सम्पूर्ण ग्रामीण विकास की एक नई, स्वपोषित, स्वावलंबी प्रक्रिया शुरू होगी. शुरुआती हिचकिचाहट के बाद जैविक खेती अब विकास की मुख्य धारा से जुड़ रही है और भविष्य के लिए आर्थिक, सामाजिक तथा पर्यावरणीय सुरक्षा के नए आयाम सुनिश्चित कर रही है. हालांकि प्रारंभिक काल से अब तक जैविक खेती के अनेक रूप प्रचलित हुए हैं; परंतु आधुनिक जैविक खेती अपने मूल रूप से बिल्कुल अलग है. स्वस्थ मानव, स्वस्थ मृदा तथा स्वस्थ खाद्य के साथ स्वस्थ व टिकाऊ वातावरण के प्रति संवेदनशीलता इसके प्रमुख बिन्दु हैं.

जैविक खेती प्रमुखतया निम्न सिद्धांतों पर आधारित है:

- जैविक खेती चूंकि अधिकाधिक बाह्य उपदानों के उपयोग पर आश्रित नहीं है और इसके पोषण के लिए जल की अनावश्यक मात्रा भी वांछित नहीं है, इस कारण यह प्रकृति के सबसे नजदीक है और प्रकृति ही इसका आदर्श है.

- पूरी विधा प्राकृतिक प्रक्रियाओं के सामंजस्य व उनके एक दूसरे पर प्रभाव की जानकारी पर आधारित होने के कारण इससे न तो मृदा जनित तत्वों का दोहन होता है और न ही मृदा की उर्वरता का ह्रास होता है.
- पूरी प्रक्रिया में मिट्टी एक जीवंत अंश है.
- मृदा में रहने वाले सभी जीव रूप इसकी उर्वरता के प्रमुख अंग हैं और सतत उर्वरता संरक्षण में योगदान करते हैं.
- पूरी प्रक्रिया में मृदा पर्यावरण संरक्षण सबसे महत्वपूर्ण है.

संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग की परिभाषा के अनुसार जैविक खेती एक ऐसी प्रणाली है, जिसमें सभी संश्लेषित आदानों (जैसे रासायनिक खाद, कीटनाशी हार्मोन्स इत्यादि) के प्रयोग को नकारते हुए केवल फसल चक्र, फसल अवशिष्ट, अन्य जैविक आदान, खनिज आदान तथा जीवाणु खादों के प्रयोग से फसल उत्पादन किया जाता है. विश्व खाद्य संगठन की एक अन्य परिभाषा के अनुसार जैविक खेती एक ऐसी अनूठी कृषि प्रबंधन प्रक्रिया है, जो कृषि वातावरण का स्वास्थ्य, जैव विविधता, जैविक चक्र तथा मिट्टी की जैविक प्रणालियों का संरक्षण व पोषण करते हुए उत्पादन सुनिश्चित करती है. इस प्रक्रिया में किसी भी प्रकार के संश्लेषित तथा रासायनिक आदानों के उपयोग के लिए कोई स्थान नहीं है.

दार्शनिक परिभाषा के अनुसार जैविक खेती का अर्थ प्रकृति के साथ जुड़कर खेती करना है. इस प्रक्रिया में सभी अवयव व प्रणालियां एक दूसरे से जुड़ी हैं. चूंकि जैविक खेती का अर्थ है सभी अंगों के बीच आदर्श, समन्वित संबंध; अतः हमें मिट्टी, जल, जीव, पौधे, जैविक चक्र, पशु व मानव तथा उनके आपसी सम्बन्धों की गहन जानकारी होनी चाहिए. इन समस्त सम्बन्धों का सबका सम्मिलित सहयोग जैविक खेती का मूल आधार है.

जैविक कृषि आंदोलन के अंतर्राष्ट्रीय संघ की परिभाषा में जैविक कृषि के मूलभूत सिद्धांत निम्न प्रकार हैं: -

- स्वस्थता का सिद्धांत
- पर्यावरणीय सिद्धांत
- समता का सिद्धांत तथा
- परिचर्या का सिद्धांत

स्वस्थता का सिद्धांत:

जैविक खेती मिट्टी, पौधों, पशुओं, मानव तथा धरती के स्वास्थ्य को टिकाऊ व अक्षुण्ण रखते हुए सबको एक अविभाज्य इकाई के रूप में मान्यता देती है. मानव समुदाय के उत्कृष्ट स्वास्थ्य की परिकल्पना बिना स्वस्थ वातावरण के नहीं हो सकती. स्वस्थ मृदा ही स्वस्थ फसलों को जन्म देती है और स्वस्थ फसलों से पशुओं व मानव का स्वास्थ्य सुनिश्चित होता है.

पर्यावरणीय सिद्धांत:

जैविक खेती जीवंत पर्यावरण, प्राकृतिक जीव चक्र व उनके बीच अक्षुण्ण समन्वय के सिद्धांत पर आधारित है. इस नियम के अनुसार सम्पूर्ण उत्पादन प्राकृतिक प्रक्रियाओं तथा प्राकृतिक स्त्रोतों के पुनः प्रयोग पर निर्भर है.

समता का सिद्धांत:

जैविक खेती साझा पर्यावरण तथा समान जीवन अवसर को सुनिश्चित करते हुए सभी सम्बन्धों में समन्वय स्थापित करती है. समान अवसर, समान न्याय तथा विश्व के प्रति आदर का भाव रखते हुए मानव तथा अन्य जीव स्वरूपों के बीच उचित संबंध समता के सिद्धांत की मूल कड़ी है.

परिचर्या का सिद्धांत:

जैविक खेती प्रबंधन प्रक्रिया में सावधानीपूर्वक पूरी निष्ठा व उत्तरदायित्व के साथ यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि पूरी प्रक्रिया आज की आवश्यकता पूर्ति के साथ-साथ पर्यावरण हितैषी हो एवं आज की तथा आने वाली पीढ़ियों के स्वास्थ्य की देखभाल करे. जैविक खेती एक ऐसी जीवंत तथा लचीली प्रक्रिया है, जो सभी आंतरिक तथा बाह्य कारकों के साथ शीघ्र ही सामंजस्य बना लेती है.

अपने पूर्ण रूप में जैविक खेती एक टिकाऊ उत्पादन प्रक्रिया है, जो प्रक्रियाओं तथा संसाधनों पर आधारित है.

जैविक खेती के प्रमुख बिन्दु निम्नानुसार हैं :

- प्राकृतिक संसाधनों का उपयुक्त प्रयोग
- सूर्य प्रकाश तथा विभिन्न जैव रूपों की जैविक क्षमता का प्रभावी उपयोग.
- मिट्टी की उर्वरता का संरक्षण.

- जैव अंश तथा पौध पोषणों का पुन: चक्रीय रूप में प्रयोग.
- प्रकृति के विरुद्ध किसी भी प्रकार के आदान जैसे रसायन तथा परिवर्तित जैव स्वरूपों के उपयोग पर पूर्ण प्रतिबंध.
- जैव विविधता का संरक्षण तथा उसका उत्तरोत्तर विकास तथा
- सभी जीवों तथा पशुओं के साथ आदर व समता का भाव.

जैविक खेती कैसे ?

आवश्यक उपाय -

जैविक खेती प्रबंधन योजना बनाने से पूर्व आवश्यक है कि स्थान विशेष व फसलों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ण जानकारी एकत्रित कर एक दीर्घावधि रणनीति बना ली जाये.

जैविक खेती प्रक्रिया के प्रथम चरण में सबसे पहले हमें निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देकर प्रक्रिया समाधान करना होगा.

महत्वपूर्ण बिन्दु -

1 मृदा की समृध्दिशीलता

2 तापक्रम प्रबंधन

3 वर्षा जल का संग्रहण

4 सूर्य ऊर्जा का अधिकतम उपयोग

5 आदानों में आत्मनिर्भरता

6 प्राकृतिक चक्र एवं जीव स्वरूपों की सुरक्षा

7 पशुओं का समन्वय तथा पशु-शक्ति व स्थानीय स्त्रोतों पर अधिकाधिक निर्भरता

कैसे प्राप्त करें :

1. **मृदा की समृध्दिशीलता**:- रासायनिक खाद के प्रयोग को नकारते हुए अधिकाधिक फसल अवशेष का उपयोग, जैविक तथा जैव खाद का प्रयोग, फसल चक्र तथा बहु-फसलीय प्रणाली का अपनाया जाना, अधिक व गहरी जुताई का त्याग तथा मृदा को सदा जैविक पदार्थों तथा पौध अवशेषों से ढक कर रखना

(मलचिंग)

2. **तापक्रम प्रबंधन**:- मृदा को ढक कर रखना तथा खेतों की मेढ़ों पर वृक्ष तथा झाड़ियाँ लगाना.

3. **मृदा, जल को सुरक्षित रखना**:- जल संग्रहण गड्ढे खोदना, मेढ़ की सीमा का रखरखाव करना, ढलवा भूमि पर कंटूर की खेती करना, खेत में तालाब बनाना तथा मेढ़ों पर कम ऊंचाई वाले वृक्षारोपण करना.

4 सूर्य ऊर्जा का उपयोग कर विभिन्न फसलों के संयोजन तथा पौध रोपण कार्यक्रम के माध्यम से पूरे वर्ष हरियाली बनाए रखें.

5 **आदानों में आत्मनिर्भरता:**- अपने बीज का स्वयं विकास करें. कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट, वर्मीवाश, तरल खाद तथा पौधों के रस/ अर्क का फार्म पर उत्पादन करें.

6 **प्राकृतिक चक्र तथा प्राकृतिक जीव स्वरूपों की रक्षा**:- पक्षियों व पौधों के जीवनयापन हेतु प्राकृतिक स्थान का विकास.

7 **पशुधन समन्वय:-** जैविक प्रबंधन में पशु एक महत्वपूर्ण अंग है, जो पशु उत्पाद ही उपलब्ध नहीं कराते; बल्कि मृदा को समृद्ध करने हेतु पर्याप्त गोबर एवं गोमूत्र भी उपलब्ध कराते हैं.

8 **प्राकृतिक ऊर्जा उपयोग:-** सौर ऊर्जा, बायोगैस, बैल चालित पम्प, जेनरेटर तथा अन्य यंत्रों का उपयोग

जैविक फार्म का विकास-

जैविक प्रबंधन एक समन्वित प्रक्रिया है, जिसमें केवल एक या कुछ बिन्दुओं को अपनाकर आशानुरूप उपलब्धि या परिणाम प्राप्त नहीं किए जा सकते. उपयुक्त उत्पादन हेतु आवश्यक बिन्दुओं के क्रमबद्ध विकास की आवश्यकता है. ये अंग हैं:

1. आवास विकास
2. आदानों के उत्पादन हेतु फार्म पर सुविधाएं
3. फसल चक्र एवं फसल परिवर्तन योजना
4. 3-4 वर्षीय फसल चक्र नियोजन
5. जलवायु, मृदा एवं क्षेत्रीय उपयुक्तता के आधार पर फसलों का चयन.

सुविधाओं का निर्माण फार्म के कुल क्षेत्रफल का 3-5% स्थान पशुधन, वर्मीकंपोस्ट, कंपोस्ट अर्क आदि बनाने हेतु सुरक्षित करें. छाया हेतु 6-7 वृक्ष इस स्थान पर लगा दें. पानी के बहाव तथा भूमि के ढलान पर निर्भर करते हुए कुछ जल शोषण टैंक (7×3×3मी), वर्षा जल संधारण हेतु (एक टैंक प्रति हेक्टेयर की दर से) उचित स्थानों पर बनाएं. तरल खाद हेतु 200 लीटर क्षमता के कुछ टैंक तथा कुछ पात्र वानस्पतिक अर्क हेतु तैयार करें. 5 एकड़ के फार्म हेतु 1-2 वर्मीकंपोस्ट शय्या, एक नाडेप टैंक, 2-3 वर्मीवाश व 2 कंपोस्ट अर्क इकाई की आवश्यकता होगी. बायोडाइनैमिक सूत्र-501 तथा 502 काफी प्रभावी आदान है. इन दोनों सूत्रों के उत्पादन हेतु आवश्यक सुविधाएं भी जुटानी चाहिए.

आवास एवं जैव विविधता- विभिन्न जीव- स्वरूपों के पालन पोषण के लिए उपयुक्त आवास निर्माण जैविक खेती प्रबंधन का एक प्रमुख अंग है. इसे उस स्थान की विशिष्ट मौसम अनुकूलतानुसार विभिन्न प्रकार की फसलें, अलग-अलग प्रकार के बहुपयोगी वृक्ष एवं झाड़ियाँ लगा कर प्राप्त किया जा सकता है. ये पेड़ एवं पौधे न केवल जमीन की गहराई व वायु में उपलब्ध पोषक तत्वों को अवशोषित कर मिट्टी की ऊपरी सतह में संग्रहीत करते हैं; अपितु पक्षियों, परभक्षियों, मित्र कीटों को आश्रय भी सुनिश्चित कराते हैं.

संभव है कि इन वृक्षों व झाड़ियों की छाया से कुछ कम फ़सलोत्पादन हो, पर इस क्षति को कीटों से बचाव करके एवं जैविक कीट नियंत्रण प्रणाली से होने वाले फ़ायदों से पूरा किया जा सकता है. समस्त भूमि पर लगभग 10 एकड़ के फार्म पर 5 से 6 नीम के पेड़, 2 गूलर के पेड़, 8-10 बेर के पेड़ अथवा झाड़ियाँ, एक से दो आंवले के पेड़ व एक से दो सहजन के पेड़ लगाने चाहिए. कंपोस्ट व पशुधन आरक्षित स्थानों पर बड़े पेड़ों को बढ़ने दिया जाना चाहिए. फार्म के चारों ओर मुख्य मेढ़ों पर कम फासले से ग्लिरिसिडिया की बाड़ लगाएं और निश्चित अंतराल पर इनकी काट-छांट कर खेतों में डालते रहें. यह बाड़ मात्र जैविक घेराबंदी का कार्य ही नहीं करेगी; बल्कि जैविक रूप से स्थिरीकृत नत्रजन से खेतों की भूमि को समृद्ध भी करेगी.

रसायनों पर प्रतिबंध- यह सर्वविदित है कि विभिन्न जैविक प्रक्रिया द्वारा पौधे अपने पोषक तत्वों जैसे नत्रजन को नत्रजन स्थिरीकरण द्वारा प्राप्त करते हैं, परंतु उर्वरकों के अधिक प्रयोग से ये जैविक प्रक्रियाएँ बाधित होती हैं. इसीलिए मृदा वैज्ञानिक हमेशा अधिक से अधिक कंपोस्ट खाद डालने हेतु प्रोत्साहित करते हैं; क्योंकि अगर ऐसा न किया जाए, तो बहुपयोगी सूक्ष्म जीवों व सूक्ष्म मात्रिक तत्वों की मृदा में कमी हो जाएगी. रसायनों के प्रयोग से होने वाले प्रतिकूल प्रभावों के मद्देनजर जैविक कृषि प्रणाली में रसायनों के लिए कोई स्थान नहीं है.

न्यून/ कम आदान विकल्प- प्रथम वर्ष में विभिन्न अवस्थाओं वाली तीन भिन्न-भिन्न

प्रकार की दलहनी फसलों की बुवाई करें, पहली 60 दिनों वाली फसल (जैसे मूंग), दूसरी 90 से 120 दिनों वाली फसल (चौला या सोयाबीन) एवं तीसरी 120 दिनों से ज़्यादा वाली फसल (जैसे अरहर). आधारीय खुराक के तौर पर कंपोस्ट व वर्मीकंपोस्ट का मिश्रण 2:1 के अनुपात में 2.5 टन प्रति एकड़ की दर से 4 किलो एजोटोबैकटोर एवं 4 किलो पीएसबी जैव उर्वरक या 4 किलो जैव उर्वरक मिश्रण बुवाई के समय डालना चाहिए. दलहनी फसलों के बीजों को उस फसल के निर्धारित राइज़ोबियम जैव उर्वरक द्वारा उपचारित करना न भूलें. पूरी सतह पर जैव अवशिष्ट की एक मोटी परत बिछाकर जीवामृत 200 लीटर प्रति एकड़ की दर से फैला दें. पौधों का अंकुरण इस सतह से ऊपर निकल आएगा. अगर मृदा में फास्फोरस की मात्रा कम हो, तो 300 किलो खनिज रॉक फॉस्फेट को कंपोस्ट के साथ मिलाकर डालना चाहिए. जीवामृत की दूसरी खुराक बुवाई के 25 से 30 दिनों के बाद सिंचाई के दौरान या वर्षा के दौरान डालनी चाहिए.

बीजामृत को तैयार करना- पांच किलो ताजा गाय का गोबर लेकर एक कपड़े की थैली में रखकर एक पात्र में रख दें और पात्र को पानी से भर दें. इससे गोबर में विद्यमान सारे तत्व/ अंश छनकर पानी में आ जाएँगे. दूसरे पात्र में 50 ग्राम चूना लेकर एक लीटर पानी में मिलाएँ. 12 से 16 घंटे बाद कपड़े की थैली को दबाकर निचोड़ लें और गोबर के अर्क के साथ पाँच लीटर गौमूत्र मिला दें, 50 ग्राम जंगल की शुद्ध मिट्टी, चूने का पानी और 20 लीटर सादा पानी भी मिला दें. 8-12 घंटो के लिए ये मिश्रण छोड़ दीजिये. इसके पश्चात पूरा मिश्रण छान लें. छाना हुआ मिश्रण बीजोपचार के लिए उपयोग करें.

खाद तथा मृदा समृद्धिकरण- रूपांतरण या परिवर्तन के दौरान जैविक खाद/ वर्मीकंपोस्ट हरी खाद एवं जैव उर्वरक समुचित मात्रा में डालने से मृदा की उर्वरता बढ़ती है और प्रारम्भिक स्तर पर उर्वरता बढ़ाए रखने में मदद मिलती है.

जीवामृत- 10 किलोग्राम गाय का गोबर+ 10 लीटर गौ मूत्र + 2 किलोग्राम गुड़ तथा किसी दाल का आंटा + 1 किलोग्राम जीवंत मृदा को 200 लीटर जल में मिलाकर 5-7 दिनों हेतु सड़ने दें. नियमित रूप से दिन में तीन बार मिश्रण को हिलाते रहें. एक एकड़ क्षेत्र में सिंचाई जल के साथ प्रयोग करें.

अमृत पानी- 500 ग्राम शहद के साथ 10 किलो गाय के गोबर को मिलाकर तब तक फेंटे (लकड़ी की सहायता से) जब तक वह लुगदी (पेस्ट) जैसा न हो जाए, इसके बाद इसमें 250 ग्राम गाय का देशी घी मिलाकर तेजी से मिलाएं. इसे 200 लीटर पानी में मिलाकर घोल लें. इस घोल को एक एकड़ जमीन पर छिड़क दें या सिंचाई वाले पानी के साथ फैला दें.

तुषार श्रीवास्तव, वरिष्ठ प्रबंधक (तकनीकी), क्षेत्रीय कार्यालय, इलाहाबाद

पी.सी.पाणिग्राही

वित्तीय साक्षरता एवं कृषि विकास

गरीबी से समृद्धि की ओर ले जाना ही वित्तीय साक्षरता का प्रमुख उद्देश्य है. कृषि का विकास तभी होगा, जब हमारे कृषक कृषि संबंधी आर्थिक आवश्यकताओं एवं तकनीकी ज्ञान से परिपूर्ण होंगे. यह तभी संभव होगा, जब उन्हें आर्थिक महत्व की जानकारी दी जाए. भारत एक कृषि प्रधान देश है, इसके बावजूद हमारे सकल घरेलू उत्पाद में इसका योगदान काफी कम होता है. यदि हम विश्लेषण करें, तो निम्न तथ्य उभर कर सामने आएंगे:

कृषि पर दबाव: कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है. भारतीय कृषि की प्रमुख समस्या यह है कि विशाल जनसंख्या के कारण अधिसंख्यक लोग कृषि पर ही निर्भर हैं. कृषि क्षेत्र में औसत जोत के आकार छोटे होते जा रहे हैं. उनका कृषि का तरीका भी वैज्ञानिक नहीं है.

ग्रामीण क्षेत्रों का अस्वस्थ वातावरण: भारतीय किसान अशिक्षा, अज्ञानता एवं पुराने रीति-रिवाजों से जकड़े हुए होते हैं तथा वे केवल खाने के लिए अनाज उगाने तक ही सीमित रहते हैं. वे बाहरी आर्थिक विकास की ओर ध्यान नहीं देते, जिससे वे और अधिक विभिन्न फसलें प्राप्त करने के लिए प्रेरित हो सकें.

गैर कृषि सेवाओं की अपर्याप्तता: भारतीय कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता है. अभी भी देश का केवल 40 प्रतिशत कृषि भू-भाग ही सिंचित है. सिंचाई के लिए अभी भी भारतीय कृषक मानसून पर ही निर्भर करते हैं. भारत में अधिकांश खेती गेहूँ और चावल की होती है, जिसके लिए अधिक पानी की आवश्यकता होती है. यदि मानसून अच्छा नहीं आया, तो उसका विपरीत प्रभाव कृषि पर पड़ता है. इसी प्रकार हमारे किसान बीजों, वित्तीयन, विपणन आदि के लिए भी पारंपरिक तरीकों पर ही निर्भर करते हैं.

कृषि उत्पादकता: कृषि की बटाई पर होने अथवा भूमिहीन किसानों द्वारा या किराए पर खेती किए जाने की स्थिति में कृषि उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, क्योंकि उनका कार्य कृषि कार्य को पूर्ण करने तक ही सीमित रहता है. उत्पादन बढ़ाने की दिशा में उनकी कोई रुचि नहीं रहती.

अपर्याप्त निवेश: कृषि में आय सृजन के अवसर कम होने के कारण इस क्षेत्र में निवेश की मात्रा भी कम ही होती है, जिससे भारतीय कृषि में वित्तीय संसाधनों के लिए साहूकारों एवं महाजनों पर निर्भरता बढ़ जाती है.

अज्ञानता एवं अशिक्षा: इसके कारण भारतीय किसान कृषि में पुराने तरीके ही उपयोग करते हैं, जिसके परिणामस्वरुप उत्पादन में वृद्धि नहीं होती. अच्छी फसल के लिए अच्छी किस्म के बीज, खाद की आवश्यकता होती है, जिसका उपयोग वे नहीं कर पाते.

अत: भारतीय कृषि के विकास के लिए ऐसे उपाय अपनाए जाने चाहिएं, जिससे कृषि की उत्पादकता भी बढ़े और साथ में लाभप्रदता भी बढ़े. सुधारों के बावजूद कृषि की लाभप्रदता में 14.2% की गिरावट दर्ज की गई है. दीर्घकालिक कृषि नीति के साथ-साथ किसानों, कृषि से संबंधित इनपुट विक्रेताओं आदि के लिए इस प्रकार की साक्षरता की व्यवस्था होनी चाहिए, जो छोटे स्तर से लेकर बड़े किसानों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सके. कृषि का उत्पादन बढ़े, उत्पादकता बढ़े, वित्तीयन की सुविधा मिले, कृषि उपज के विपणन की व्यवस्था हो, किसानों को उनकी उपज का सही मूल्य मिले और परिणामस्वरूप कृषि एक लाभप्रद व्यवसाय के रुप में उभर कर सामने आए, कृषि का विकास हो, इसके लिए उचित वित्तीय साक्षरता की आवश्यकता है.

वित्तीय साक्षरता: वित्तीय साक्षरता का सामान्य अर्थ यह है कि हम अर्जित धन का प्रबंधन और निवेश इस प्रकार करें, जिससे अधिक लाभ मिल सके. अर्थात् अपने कौशल और ज्ञान से वित्तीय स्त्रोतों को निर्धारित करने हेतु विवेकपूर्ण रुप से निर्णय लेना होता है. हम यह भी कह सकते हैं कि सम्पूर्ण वित्तीय समावेशन के लिए वित्तीय साक्षरता एक जादू की छड़ी का कार्य करती है.

हमने कृषि विकास में बाधक तथ्यों का विश्लेषण किया और पाया कि कृषि क्षेत्र में साक्षरता के अभाव से इसके विकास में रुकावटें आ रही हैं. यदि किसानों को वित्तीय साक्षरता प्रदान की जाए, तो बेहतर परिणाम सामने आएंगे.

- **वित्त की समस्या:** कृषकों के समक्ष वित्त की समस्या सदैव बनी रहती है. इसका प्रमुख कारण धन का सही तरह से प्रबंधन न किया जाना है. वित्तीय साक्षरता के माध्यम से किसानों को हम छोटी-छोटी बचतों के लिए प्रेरित कर सकते हैं. ये

बचतें भावी आकस्मिक आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक बन सकती हैं.

- **ऋण की व्यवस्था:** किसान सामान्य रुप से अपनी ऋण आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए गांवों में उपलब्ध साहूकारों पर निर्भर करते हैं. कहा जाता है कि भारतीय कृषक ऋण ही में जन्म लेता है और ऋण में ही मर जाता है. यह भी कहा जाता है कि भारतीय कृषक अपने पुत्र को विरासत में अपना ऋण देकर जाता है, जिसे चुकाने की जिम्मेदारी उस पर आ जाती है. किसानों को हम वित्तीय साक्षरता प्रदान कर समझा सकते हैं कि:
    - साहूकारों से ऋण लेने में ब्याज की राशि अधिक चुकानी पड़ती है, जिससे कर्ज हमेशा बना रहता है.
    - साहूकार किसानों के खेत, पशुधन, उनका घर आदि सब कुछ गिरवी रख लेता है और ऋण राशि अधिक होने और चुका न पाने के कारण अंत में साहूकार गिरवी संपत्ति का पूरा हिस्सा हड़प कर जाता है.
    - उन्हें औपचारिक संस्थाओं- जैसे बैंकों से ऋण प्राप्त करने हेतु बताया जाना चाहिए, जहां ऋण भी सरलता से मिल जाते हैं और ब्याज की दर भी कम होती है.
    - किसानों को बताया जा सकता है कि कुछ योजनाओं में सरकार द्वारा ब्याज अनुदान का लाभ भी प्रदान किया जाता है. यही नहीं, ऋण सही समय पर चुकाने पर भी ब्याज अनुदान का प्रावधान होता है.
- **कृषि उपज**:
    - किसानों को बताया जाए कि एक साथ एक या उससे अधिक फसलें लगाने पर कम समय में अधिक फसलें ली जा सकती हैं, जिससे उन्हें अधिक लाभ होगा.
    - खाद्य फसलों के साथ-साथ उसे व्यावसायिक फसलें लगाने की विधि से परिचित कराया जा सकता है.
    - फसलों के साथ वे अपने पशुधन के लिए चारा लगा सकते हैं, जिसे बाद में उन्हें बाजार से चारा क्रय नहीं करना पड़ेगा.
- **कृषि हेतु आधुनिक एवं वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग :**
    - किसानों को साक्षर करना चाहिए कि पारंपरिक तरीकों से खेती का कार्य

करने में उपज कम मिलेगी, जिससे उन्हें मुनाफा कम होगा. उन्हें कृषि की नई तकनीक का प्रयोग करना सिखाया जाना चाहिए.

- खाद का निर्माण उन्हें अपने स्तर से करना सिखाया जाना चाहिए. अपने पास उपलब्ध पशुधन के अवशिष्ट से वे न केवल जैविक खाद तैयार कर सकते हैं; वरन इससे वे बायोगैस संयंत्र भी लगा सकते हैं, जो उन्हें रोशनी के साथ ईंधन भी उपलब्ध कराएगा. इससे वे ईंधन व रोशनी के लिए किए जा रहे व्यय को बचा सकेंगे.

- **कृषि उपजों का विपणन :**
  - किसानों को साक्षर करना चाहिए कि वे अपनी कृषि उपज को बिचौलियों को कम दाम में न बेचें; बल्कि सरकार द्वारा निर्धारित कृषि मंडियों में ही अपनी उपज का विपणन करें; ताकि उन्हें उनकी उपज का उचित मूल्य मिल सके.

- **सहायक गतिविधियां :**
  - कृषकों को कृषि कार्य के साथ-साथ कृषि से संबंधित सहायक गतिविधियों जैसे पशुपालन, मछली पालन, मधुमक्खी पालन तथा इसी प्रकार के अन्य कार्यों के लिए भी साक्षर किया जाना चाहिए.

वित्तीय साक्षरता के स्त्रोत :

वित्तीय साक्षरता विभिन्न मंचों से प्रदान की जा सकती है. यदि हम विगत समय में देखें; तो पाएंगे कि आकाशवाणी के माध्यम से किसानों को साक्षरता प्रदान की जाती थी, जिसमें कब कौन सी फसल लगानी है, कब सिंचाई करनी है, कितनी सिंचाई करनी है आदि के बारे में बताया जाता था; ताकि उन्हें कोई वित्तीय क्षति न हो सके. इसी प्रकार दूरदर्शन पर 'चौपाल' नामक कार्यक्रम से किसानों को उनकी वित्तीय स्थिति सुदृढ़ करने के लिए साक्षरता प्रदान की जाती थी. वर्तमान में इनके स्वरुप में विस्तार आया है. वित्तीय साक्षरता के विभिन्न स्त्रोत इस प्रकार हैं:

वित्तीय साक्षरता एवं ऋण परामर्श केन्द्र :

यह एक औपचारिक व्यवस्था है, जहां लोगों, विशेषकर किसान समुदाय को वित्तीय साक्षरता प्रदान की जाती है. वित्तीय साक्षरता अर्थात कृषि क्षेत्र की उस प्रत्येक मद, जो वित्त अथवा लाभ-हानि से जुड़ी होती है, की जानकारी प्रदान की जाती है. इस केन्द्र में किसानों को व्यावहारिक ज्ञान के माध्यम से वित्त के महत्व को समझाया जाता है.

प्रमुख मदें निम्नानुसार हैं:

- बचत करने, ऋण प्राप्त करने, ऋण चुकाने के महत्व, किस एजेंसी से ऋण प्राप्त करना है आदि के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान की जाती है.
- किसानों को यह भी बताया जाता है कि वे किस प्रकार से अपने उन्हीं खेतों में खेती करके फसल को बढ़ाकर अधिक लाभ कमा सकते हैं.
- सिंचाई के साधनों का उपयोग, कम सिंचाई वाले क्षेत्र में किस प्रकार की फसलें लगाई जाएं, अधिक बारिश वाले क्षेत्र में किस प्रकार की फसलें लगाई जाएं आदि की जानकारी प्रदान की जाती है.
- अच्छे परिणामों के लिए कृषकों में कौशल का विकास कराया जाता है.
- किसानों को व्यक्तिगत बीमा, फसल बीमा आदि के बारे में भी बताया जाता है .
- किसानों को उनकी वृद्धावस्था के समय सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा के लिए पेंशन योजना से अवगत कराया जाता है.
- प्रतिस्पर्धा में अपने वित्तीय हितों को बाजार के जोखिमों से बचाना सिखाया जाता है.
- बैंकों में बचत करने, बैंकों से ऋण प्राप्त करने, बैंकों के ऋण को चुकाने के बारे में बताया जाता है. अर्थात कुल मिलाकर वित्तीय आयोजना के बारे में बताया जाता है; ताकि वे स्वयं के ऊपर पड़ने वाले वित्तीय दबाव से बच सकें.

कृषि ज्ञान केन्द्र:

कृषकों को कृषि की विभिन्न तकनीकों, वित्त की उपलब्धता आदि के लिए विभिन्न बैंकों एवं अन्य संस्थाओं के द्वारा कृषि ज्ञान केन्द्रों की स्थापना की गई है.

ग्रामीण स्वरोजगार प्रशिक्षण संस्थान (आरसेटी):

ग्रामीण युवकों में कृषि एवं सहायक गतिविधियों के साथ उद्यमिता के विकास के लिए बैंकों द्वारा आरसेटी स्थापित किए गए हैं, जहां प्रेरणा, प्रशिक्षण एवं सहयोग के माध्यम से उद्यमिता को बढ़ावा दिया जाता है. इनके द्वारा प्रशिक्षण के माध्यम से उद्यम एवं वित्तीय कौशल के विकास का कार्य भी किया जाता है. सरकार द्वारा ग्रामीण युवाओं को विभिन्न विधाओं में प्रशिक्षण देने के लिए देश के प्रत्येक जिले में जिलास्तर पर आरसेटी की स्थापना कराई गई है. इन केन्द्रों में ग्रामीण युवाओं को विभिन्न गतिविधियों जैसे कृषि एवं सहायक

गतिविधियों, जिसमें डेयरी, पोल्ट्री, मधुमक्खी पालन, रेशम कीटपालन, मशरुम खेती, बागवानी, मछली पालन, कपड़े डिजाइन करना, रेक्सीन की वस्तुएं बनाना, अगरबत्ती निर्माण, खेल के सामान का निर्माण, बेकरी उत्पाद, दो पहिया वाहन, रेडियो/टी.वी. की मरम्मत, मोटर रिवाइंडिंग, बिजली के ट्रांसफार्मर, सिंचाई के पंप सेट, ट्रैक्टर, सेल फोन की मरम्मत करना एवं ऐसे ही बहुत से छोटे-छोटे कामों का प्रशिक्षण दिया जाता है. यही नहीं, उनके प्रशिक्षण के बाद उन्हें काम दिलाने में भी सहायता प्रदान की जाती है तथा बैंक से वित्त भी सुलभ कराया जाता है.

उक्त उपलब्ध स्त्रोतों के साथ ही हमें कृषि विकास के लिए वित्तीय साक्षरता हेतु प्रमुख रुप से निम्न स्त्रोतों की ओर भी ध्यान देना चाहिए:

- स्कूल स्तर पर कृषि के विषय को पाठ्यक्रम में अनिवार्य रुप से शामिल कराया जाना चाहिए.
- वर्तमान में कृषि विद्यालय काफी सीमित संख्या में हैं. कृषि विकास के लिए और अधिक कृषि विद्यालयों की स्थापना की जानी चाहिए.
- प्रत्येक जिला शिक्षा कार्यालय को पूरे वर्ष कृषि पर शिक्षा प्रदान करने संबंधी व्यवस्था करनी चाहिए.
- उच्च तकनीकी संस्थाओं द्वारा उत्तम कार्यनिष्पादन करने वाले किसानों को पुरस्कृत किया जाना चाहिए.
- बैंकों को कृषि के संबंध में विशेष प्रशिक्षण अभियान चलाना चाहिए, ताकि कृषि उत्पादों एवं उनके सुरक्षित रखने के संबंध में प्रशिक्षण प्रदान किया जा सके.
- कृषि विकास के लिए अनुसंधान एवं विकास केंद्रों की स्थापना की जानी चाहिए; जहां कृषि के विकास के लिए नई खोज हो.
- कृषि की सहायक गतिविधियों के लिए किसानों को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए.

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कृषि के विकास में वित्तीय साक्षरता की अपनी भूमिका है, जो अत्यंत महत्वपूर्ण है. अर्थात, यदि हम कृषि का सर्वांगीण विकास चाहते हैं, तो हमें वित्तीय साक्षरता का सहारा लेना ही पड़ेगा. कृषि की मुख्य समस्या, जो वित्त से संबंधित है, अधिक ब्याज से संबंधित है, का निराकरण वित्तीय साक्षरता से किया जा सकता है और कृषि उत्पादन बढ़ाया जा सकता है.

पी.सी.पाणिग्राही, महाप्रबंधक, वित्तीय समावेशन विभाग, केंद्रीय कार्यालय, मुंबई

पुष्पांजलि कुमारी

कृषि व्यवसाय केंद्र

दक्षिण भारत के प्रख्यात संत तिरुवल्लूवर की पंक्तियाँ हैं, "हल वाले अगर अपने हाथ जोड़े रहें, तो अपरिग्रही संत भी मुक्ति ना पा सकेंगे". संत ही क्यों असंत, राजनेता, अभिनेता, लेखक, कवि, निजी हवाई जहाजों में उड़ता औद्योगिक जगत और पूरा भारत, किसान-कर्म की ही तो रोटी खाता है. कृषि भूमि सीमित है और अंधाधुंध शहरीकरण उपजाऊ भूमि को निगल रहा है. औद्योगिक विकास की अनंत भूख भी कृषि भूमि को खा रही है, बढ़ती आबादी और लोगों की सबसे महत्वपूर्ण किन्तु बुनियादी जरूरत-भोजन को सभी तक पहुंचाने की जरूरत ने कृषि को एक बार पुन: परिभाषित करने पर विवश किया है. आज देश की खाद्यान्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु हमें कृषि क्षेत्र में 5% से अधिक वृद्धि की जरूरत है; जबकि हम अभी उसके आधे से भी पीछे हैं. ताज़ा ऑकड़े यह बताते हैं कि चालू वर्ष में यह स्थिति बेहतर हो सकती है. कृषि विशेषज्ञों का अनुमान है कि आने वाले 15 वर्षों में खाद्यान्न संकट और बढ़ सकता है और इसका मुक़ाबला कृषि क्षेत्र को सिर्फ परंपरागत खेती के भरोसे रखकर नहीं किया जा सकता. इसमें समावेशी कृषि तथा दुग्ध, फल, मांस जैसे कृषि आधारित कुटीर उद्योगों को शामिल किया जाना अति आवश्यक हो गया है.

इन्हीं जरूरतों के मद्देनजर नाबार्ड और राष्ट्रीय कृषि विस्तार प्रबंधन संस्थान के सहयोग से कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ने देश भर के किसानों तक खेती के बेहतर तरीकों को पहुंचाने हेतु एक अनूठी योजना शुरू की है, जिसका नाम है **कृषि व्यवसाय केंद्र**. इस कार्यक्रम का उद्देश्य बड़ी संख्या में कृषि स्नातकों की विशेषज्ञता को उपयोग में लाना है; ताकि बढ़ती आबादी की आवश्यकता के अनुसार खाद्य की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सके.

कृषि व्यवसाय योजना और उसके उद्देश्य:- कृषि व्यवसाय योजना की शुरुआत अप्रैल 2002 में की गई थी, जिसका मूल उद्देश्य कृषि स्नातकों को रोजगार देकर आर्थिक रूप से व्यवहार्य उद्योगों के माध्यम से सेवा आधार पर शुल्क देकर विस्तार प्रणाली के प्रयासों को बढ़ाना था. इसकी सकारात्मक प्रतिक्रिया हुई और नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एक्सटेंशन मैनेजमेंट द्वारा आयोजित सर्वेक्षण में यह ज्ञात हुआ कि निजी विस्तार सेवाओं के संवर्धन से विस्तार जरूरतों और चुनौतियों के बीच अंतर को कम करने में मदद मिली है. इस योजना हेतु सरकार भी इतनी प्रतिबद्ध है कि इसके लिए सब्सिडी आधारित ऋण भी उपलब्ध कराया जाता है; ताकि योजना के संचालन में किसी तरह की कोई बाधा न आए; क्योंकि पूंजी की कमी ही किसानों के सामने सबसे बड़ी समस्या हो सकती है. और तो और, इसमें न केवल परंपरागत कृषि, वरन् इससे जुड़ी अन्य योजनाओं जैसे मुर्गी पालन, वानिकी, डेयरी, मछलीपालन जैसे कृषि आधारित व्यवसायों को भी बढ़ावा देने हेतु सब्सिडी पर ऋण उपलब्ध कराए गए.

संक्षेप में इस योजना का उद्देश्य इस प्रकार है:-

1 सरकार द्वारा विस्तारित प्रणाली के प्रयासों को पूरा करने हेतु.

2 जरूरतमंद किसानों को इनपुट आपूर्ति के पूरक स्त्रोतों और सेवाओं को उपलब्ध कराना.

3 नए विकसित होते कृषि खंड के क्षेत्र में कृषि स्नातकों को लाभदायक रोजगार मुहैया कराना.

4 इसके माध्यम से कृषि उपकरण किराये पर देना, निर्विष्टियों और अन्य सेवाओं की बिक्री की परिकल्पना भी की गई है. पर यह बैंकों द्वारा परियोजना के मंजूरी के अधीन होगी.

बैंक ऋण, सब्सिडी और परियोजना की अवधि और ऋण की पात्रता :- बैंक ऋण अब लोगों के समक्ष वैसी समस्या नहीं रह गई है, जैसी पहले के समय में हुआ करती थी और इस योजना के लिए तो सरकार ने बैंकों को वैसे भी आसान और अनुदान दर पर योजना के पात्र लोगों को ऋण देने की सलाह दी है. इसके तहत दो तरह की सब्सिडी की व्यवस्था है, जो इस ऋण को काफी लुभावना बनाती है.

पूंजी अनुदान :- बैंक ऋण के माध्यम से निधिक परियोजना की पूंजी लागत के 25% की दर से ऋण की पूंजी सब्सिडी के लिए पात्रता है और यही पात्रता महिलाओं, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और पूर्वोत्तर और पर्वतीय क्षेत्रों के लोगों के लिए 33% है.

एकल परियोजनाओं की उच्चतम सीमा रु.10 लाख और समूह के लिए रु.50 लाख है. प्रति प्रशिक्षित स्नातक के लिए यह सीमा रु.10 लाख और 5 लोगों का समूह, जिनमें एक गैर कृषि स्नातक है, ऐसी समूह परियोजनाओं की उच्चतम सीमा रु.50 लाख और जिन मामलों में परियोजना लागत रु.5 लाख रूपये से अधिक है तथा प्रार्थी मार्जिन मनी जमा करने में असमर्थ है, उन मामलों में प्रार्थियों को बैंकों द्वारा निर्धारित मार्जिन रकम का अधिकतम 50% नाबार्ड द्वारा उधारकर्ता के अंशदान की कमी को पूरा करने के लिए दिया जा सकता है, यदि बैंक संतुष्ट है कि उधारकर्ता मार्जिन रकम की अपेक्षाओं को पूरा करने में वाकई असमर्थ है. नाबार्ड द्वारा बैंकों को ऐसी सहायता बिना किसी ब्याज के दी जाती है, तथापि बैंक उधारकर्ताओं से 2% प्रति वर्ष तक सेवा प्रभार ले सकते हैं. सावधि ऋण की प्रकृति सम्मिश्र होती है और प्रतिभागी बैंक परियोजना लागत के अनुसार बैंक ऋण प्रदान कर सकते हैं, जिसमें पात्र सब्सिडी रकम भी शामिल है.

ब्याज अनुदान:- बैंक ऋण के भाग पर ब्याज सब्सिडी, कृषि उद्यमियों के खाते में जमा करने हेतु बैंकों को वार्षिक आधार पर प्रदान की जाती है. ब्याज सब्सिडी, निर्गमित शुद्ध पूंजी सब्सिडी, ऋण की मूल रकम के समक्ष खातों के बकाया शेष पर बैंकों को जारी की जाती है. पहले वर्ष के लिए एक वर्ष पूरा होने पर और अन्य वर्षों के लिए 2 वर्ष पूरा होने के बाद ही दावा किया जा सकता है.

परियोजना अवधि:- सब्सिडी का लाभ एक प्रार्थी को केवल एक ही बार दिया जा सकता है. अनुदान मंजूर करना और जारी करना, भारत सरकार द्वारा जारी किए गए संबंधित अनुदेशों के पालन तथा निधियों की उपलब्धता के अधीन है.

योजना हेतु पात्रता:- कृषि और संबद्ध विषयों में राज्य कृषि विश्वविद्यालयों/ केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालयों/ भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद/ यूजीसी द्वारा मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालयों से स्नातक की डिग्री प्राप्त छात्र, कृषि और संबद्ध विषयों में कृषि एवं सहकारिता विभाग द्वारा प्राप्त डिग्री या भारत सरकार की सिफ़ारिशों पर राज्य सरकार के अधीन आने वाले संस्थानों के डिग्रीधारी. राज्य कृषि विश्वविद्यालयों से कृषि और संबद्ध विषयों में डिप्लोमा (कम से कम 50% अंकों के साथ)/ पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा धारकों और कृषि और संबद्ध विषयों में कृषि एवं सहकारिता विभाग द्वारा मान्यता प्राप्त अन्य एजेंसियों द्वारा दी गई डिग्री और भारत सरकार की सिफ़ारिश पर राज्य सरकार के अधीन आने वाले संस्थानों के डिग्रीधारी भी इस योजना हेतु पात्र हैं. यहां तक कि जैव विज्ञान में स्नातक तथा कृषि और संबद्ध विषयों में स्नातकोत्तर भी इस योजना हेतु पात्र हैं. इंटरमीडिएट स्तर तक कृषि से संबन्धित पाठ्यक्रम कम से कम 55% अंकों के साथ पूरा करने वाले छात्र भी इस योजना के लिए पात्र हैं.

कृषि व्यवसाय केंद्र योजना के तहत होने वाले विभिन्न क्रियाकलाप :-

- कीट नियंत्रक, निदान शास्त्र और नियंत्रण सेवा ,
- कृषि उपकरणों एवं मशीनों, जिसमें लघु सिंचाई प्रणाली भी शामिल हैं, के रखरखाव, मरम्मत एवं किराये पर लेना .
- बीज संसाधन इकाइयाँ,
- केंचुआ पालन इकाइयों, जैव उर्वरकों का उत्पादन, जैव कीटनाशकों, जैव नियंत्रक कारकों की स्थापना
- मधुमक्खी पालन एवं मधु उत्पादों की संसाधन इकाइयों की स्थापना.
- परामर्श सेवा विस्तार.
- उत्पत्ति शालाओं एवं मत्स्यपालन.
- संशोधित कृषि उत्पादनों हेतु रिटेल विपणन व्यापार.

इस तरह के क्रियाकलापों से न केवल उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है, वरन लोगों की खाद्य समस्याओं और उनकी रोजगार संबंधी समस्याओं को भी दूर किया जा सकता है, क्योंकि आज जिस तरह कृषि एक व्यवसाय का रूप ले चुकी है, उसमें कृषि व्यवसाय केंद्र जान डाल सकता है; क्योंकि किसी भी व्यवसाय के लिए सबसे बड़ी समस्या, जो पूंजी की होती है, वह भी बैंकों के द्वारा पूरी की जा रही है.

निष्कर्ष : भारत जैसे देश के लिए, जहां आज भी 65% आबादी कृषि पर निर्भर करती है, ऐसे में पूर्ण रोजगार की कल्पना इसके बिना करना बेमानी होगी; क्योंकि जीविकोपार्जन के लिए की जा रही परंपरागत कृषि एक उद्योग का रूप ले चुकी है, जिसमें अधिकाधिक पूंजी लगाकर ज्यादा से ज्यादा उत्पादन पर ज़ोर दिया जा रहा है; लेकिन इसके समक्ष जो सबसे बड़ी चुनौती है, वह है ज्यादा से ज्यादा कीटनाशकों और रासायनिक खादों का प्रयोग; जिससे लोगों के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ रहा है. इसके अतिरिक्त इसमें अधिक जल की भी आवश्यकता होती है और साथ ही इससे धरती की उर्वरा शक्ति पर भी बुरा असर पड़ता है. कृषि को व्यवसाय के रूप में अपनाने के पीछे जो मूल उद्देश्य है वह है ज्यादा से ज्यादा लोगों को रोटी उपलब्ध कराना. अगर उनके स्वास्थ्य पर ही बुरा असर होगा, तो वैसी कृषि से क्या लाभ. इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार न केवल कृषि व्यवसाय केंद्र, वरन कृषि क्लीनिक पर भी ज़ोर दे रही है और उन्हें भी अनुदान पर ऋण की सुविधा उपलब्ध करा रही है; ताकि इससे मिट्टी और बीज़ का

प्रयोग अनुसंधान के बाद ही हो और साथ ही उर्वरकों का प्रयोग किस परिमाण में किया जाए, इसकी भी अच्छी तरह से जांच हो, क्योंकि तभी सबका विकास संभव होगा. जीवन चलाने वाले संसाधन खेतों में पैदा होते हैं और जीवन सजाया तभी तक जा सकता है, जब तक ज़िंदगी अस्तित्व में रहे, स्वस्थ रहे; वरना कोई भी व्यवस्था बेकार साबित होगी. किसी भूखे के लिए पिकासो की कला अर्थहीन है. स्वामी विवेकानंद ने सच ही कहा है कि किसी भूखे के सामने भगवान भी आ जाएं; तो वह उन्हें सिर्फ और सिर्फ रोटी के रूप में ही स्वीकार करेगा; लेकिन ज्यादा से ज्यादा लोगों को रोटी देने की कवायद में हमें लोगों के स्वास्थ्य से खिलवाड़ करने का कोई हक़ नहीं है और न ही सिर्फ अपनी पीढ़ी के लोगों तक ही रोटी पहुंचाने के चक्कर में हमें अपनी आने वाली पीढ़ियों को भूल जाना चाहिए; क्योंकि ज्यादा से ज्यादा उत्पादन हेतु इस्तेमाल हो रही रासायनिक खाद न केवल आने वाले समय में जमीन की उर्वरा शक्ति को ही कम कर देगी, वरन पानी की भीषण समस्या भी पैदा करेगी; क्योंकि इसके प्रयोग से खेतों को ज्यादा पानी की जरूरत होती है और इससे पानी रसातल में चला जाता है.

अत: कृषि व्यवसाय केंद्र योजना के तहत ज्यादा पैदावार और ज्यादा लोगों को रोजगार के साथ- साथ हमें इसके सबसे अहम पहलू पर भी ध्यान देना होगा; वरना जैसे हरित क्रांति के दुष्प्रभाव आज नजर आ रहे हैं; कहीं ऐसा न हो कि सरकार की यह नई पहल भी इसी तरह खोखली साबित हो जाए!

पुष्पांजलि कुमारी, उप शाखा प्रबंधक , देवनहल्ली शाखा, बेंगलूरू

डॉ. अजित मराठे

कृषि पर्यटन की बढ़ती संभावनाएं

मैट्रो शहर में रहने वाले एक छोटे से बच्चे से एक सवाल पूछा गया कि बेटा क्या आप हमें बता सकते हो कि हमें प्रतिदिन दूध कहाँ से मिलता है ? उसने तुरंत जवाब दिया 'दूध के पैकेट से'. हालांकि यह जवाब तार्किक एवं विनोदी भी लगता है; परंतु सच्चाई यह है कि इससे हमें यह भी ज्ञात होता है कि वातानुकूलित घरों में पली-बड़ी इस नई पीढ़ी का मिट्टी से रिश्ता टूट चुका है. वह यह भी नहीं जानती कि ग्रामीण परिवेश में हमारे मेहनतकश किसान किस प्रकार अनाज, दाल, दूध, फल, मांस, अंडे, फूल, ऊन, कपास, सब्जियों आदि की पैदावार करते हैं. शायद इसी विचार से कृषि पर्यटन की संकल्पना जागृत हुई होगी.

संकल्पना तो अच्छी लगती है :

सरल शब्दों में यह एक मौज-मस्ती भरा सप्ताहांत (Weekend) है, जहां पर सैलानी अपने परिवार सहित कृषि पर्यटन केंद्र पर जाते हैं. जहां उनके लिए चाय-नाश्ता एवं भोजन के साथ-साथ साफ कमरों में ठहरने की व्यवस्था भी होती है. यहाँ पर यात्री विभिन्न कृषि गतिविधियों को बहुत करीब से देखते हैं एवं उनमें शामिल भी होते हैं. छोटे किसान के लिए यह अतिरिक्त आय के स्त्रोत के साथ स्थानीय युवाओं के लिए रोजगार प्राप्त करने का एक अच्छा अवसर है. यह पर्यावरण के अनुकूल (Eco Friendly) भी है, क्योंकि यह वैश्विक पर्यटक स्थलों की भीड़ को ग्रामीण कृषि पर्यटक स्थलों की ओर केन्द्रित करता है. यहाँ पर स्वस्थ आदतों को बढ़ावा दिया जाता है. साथ ही यह आपकी जेब पर भारी भी नहीं पड़ता.

भारत में इस संकल्पना के जनक :

हमारे देश में इस संकल्पना के जनक श्री पांडुरंग तावड़े थे, जिन्हें वर्ष 2008-09 और

2011-12 का प्रतिष्ठित राष्ट्रीय पर्यटन पुरस्कार भारत के राष्ट्रपति के कर-कमलों से प्राप्त हुआ था. इन्होंने एक साक्षात्कार में कहा कि इस संकल्पना में 90% कृषि एवं 10% पर्यटन का अंश होता है, जहां पर किसान मेजबान, शहरी सैलानी पर्यटक एवं गाँव पर्यटन स्थल होते हैं. आगे उन्होंने यह भी कहा कि इसमें किसान या तो पर्यटकों की आवश्यकतानुसार उत्पादन करें अथवा अपने उत्पादन को उन्हें बेचने का प्रयास करें.

वर्ष 2005 में श्री तावड़े ने महाराष्ट्र में पुणे जिले के बारामती तालुका के एक छोटे से गाँव 'पलाशी' में 'बारामती' कृषि पर्यटक केंद की स्थापना की. इस केंद्र से 218 किसान सम्बद्ध हैं, जो महाराष्ट्र के विभिन्न गांवों में कृषि पर्यटन केंद्र चलाते हैं. पर्यटन पैकेज की शुरुआत पर्यटकों के परंपरागत भारतीय शैली में स्वागत से होती है. इसके बाद बड़ी शिष्टता से उन्हें ठहरने के लिए उनके आरामदायक एवं स्वच्छ कमरे दिखाये जाते हैं. चूंकि कृषि पर्यटन महंगी सुविधा उपलब्ध नहीं करा सकता, इसलिए कमरों में न तो ए.सी. और न ही मनोरंजन के लिए टी.वी. होता है. ग्रामीण परिवेश में चाय-नाश्ता करने के उपरांत पर्यटक उस समय हो रही विभिन्न गतिविधियों जैसे जुताई, बुआई, निराई, फल-सब्जियों को तोड़ना, गाय-बकरियों को दुहना इत्यादि में बढ़-चढ़ कर भाग लेते हैं. पर्यटक बढ़-चढ़ कर बैलगाड़ी अथवा ट्रैक्टर में सवार होकर विभिन्न गतिविधियों में हिस्सा लेते हैं. इसके पश्चात दोपहर के समय स्थानीय महिलाओं द्वारा ताजा जैविक सब्जियों से बना भोजन सैलानियों को परोसा जाता है. दोपहर के भोजन के उपरांत सैलानी अपनी इच्छा के अनुसार बैलगाड़ी अथवा ट्रैक्टर में सवार होकर पास ही के आधुनिक डेयरी फार्म, मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन, रेशम कीट पालन आदि से संबंधित व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करते हैं. पर्यटक इसके बाद चीनी मिल (Sugar Factory), गुड़ विनिर्माण का भी दौरा करते हैं, जहां पर्यटक इनके उत्पादन से संबंधित जानकारी प्राप्त करते हैं. अपनी यात्रा के अंत में पर्यटक पास ही के गाँव में जाकर ग्रामवासियों की जीवन शैली पर चर्चा करते हैं. स्थानीय शिल्पकारों द्वारा बनायी गई हस्त-शिल्प सामग्री देखते हैं, क्रय करते हैं. साथ ही महिलाओं के स्वयं सहायता समूह द्वारा बनाए गए अचार, पापड़ आदि भी खरीदते हैं. नौजवान अपनी रुचि के अनुसार कबड्डी, लगौरी, गिल्ली डंडा, पतंगबाजी जैसे खेलों का भी आनंद ले सकते हैं. रात्रि भोजन के पश्चात पर्यटक स्थानीय ग्रामीणों द्वारा प्रस्तुत किए गए लोक गीत, संगीत एवं नृत्य का भी आनंद लेते हैं. यात्रा पैकेज के दूसरे दिन सैलानी पास के ही मुख्य पर्यटन स्थलों जैसे किले, मंदिर, पक्षी एवं वन्य जीव अभ्यारण्य और जंगलों की सैर का आनंद लेते हैं. घर वापसी से पहले पर्यटक ताजा फल, सब्जी, शहद, गुड़, पापड़, अचार, हस्तशिल्प आदि सामग्री खरीदना नहीं भूलते. इस केंद्र में कृषि उद्यमियों को प्रशिक्षित करने की व्यवस्था भी है.

पूंजी लागत- (Cash Outflow) :

कृषि पर्यटन केंद्र स्थापित करने के लिए कमरे, रसोई घर, भोजन स्थल, मनोरंजन स्थल इत्यादि बनाने/ खरीदने के लिए कम से कम 25 से 30 लाख का शुरुआती निवेश करना पड़ता है. साथ ही एक सक्षम प्रशिक्षित कृषि कर्मी दल की भी आवश्यकता होती है.

नकदी अंतप्रर्वाह (Cash Inflow) :

1. सप्ताहांत पैकेज: रु.600 से रू.1000 प्रति व्यक्ति
2. ग्रीष्मकालीन शिविर: तीन दिवसीय शिविर रु.2500 से रू.4000 प्रति व्यक्ति
3. किसानों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम: साप्ताहिक कार्यक्रम रु.10,000 प्रति कृषक
4. विभिन्न कृषि उत्पादों की बिक्री से हुई आय

इस प्रकार के निवेश का निर्णय लेने से पहले इसका पूरी तरह से व्यवहार्यतापूर्ण अध्ययन करना जरूरी है. विपणन रणनीति जैसे विद्यार्थियों की पिकनिक व्यवस्था हेतु स्कूलों से संपर्क करना, राज्य पर्यटन विभाग की वेबसाइट पर कृषि केंद्र की सूचना एवं बुकिंग सुविधा उपलब्ध कराना, रेलवे स्टेशन और एयरपोर्ट पर बुकिंग सुविधा उपलब्ध कराना और अन्य संबन्धित गतिविधियों के लिए कॉलेज/ कृषि विश्वविद्यालयों से संपर्क करना इत्यादि कार्य किए जा सकते हैं.

विश्वस्तरीय कृषि परिदृश्य :

यह संकल्पना इटली, जर्मनी, ब्रिटेन, कनाडा आदि देशों में बहुत प्रचलन में है, जहां पर कई प्रकार की गतिविधियाँ जैसे कद्दू पैच **(pumpkin patch)**, वाइन टूरिज़्म इत्यादि बहुत लोकप्रिय हैं.

संगठनात्मक समर्थन :

फिलहाल इस संकल्पना को कृषि व्यापार उद्यम के रूप में मान्यता की आवश्यकता है. इससे इस परियोजना की संभाव्यता बढ़ जाएगी, क्योंकि बिजली के दाम, रसोई गैस, ऋण इत्यादि कृषि उद्यम के लिए लागू दरों पर उपलब्ध कराये जा सकते हैं. शुरुआत में सार्वजनिक निजी- भागीदारी के साथ 'कृषि पर्यटन परिषद' का गठन किया जा सकता है. परिषद के कार्यों में संकल्पना को परिभाषित करना, नीति/ नियम बनाना, ऋण प्रोडक्ट बनाना, मार्केट सर्वेक्षण, विपणन नीति बनाना, निवेश के साधन, किसानों के प्रशिक्षण एवं कौशल का विकास, हितधारकों को जोड़ने के लिए सेमिनार आयोजित करना, सूचना केंद्र बनाना, व्यवसायियों एवं सरकारी प्राधिकारियों के साथ मिलकर कार्यशाला करवाना,

वित्तीय संस्थानों के बीच जागरूकता बढ़ाना, सफल उद्यमों के आंकड़े तैयार कराना, स्थानीय निकाय, कृषि मंत्रालय, राजस्व विभाग, पर्यटन मंत्रालय, पशुपालन विभाग, बागवानी विभाग, मछलीपालन विभाग आदि में इस संकल्पना की जागरूकता बढ़ाना, इस कार्य में संभावित जोखिम तथा उनके नियंत्रण के साधन ढूँढना, गुणवत्ता मानक तय करना, उपभोक्ता संरक्षण सुरक्षा मापदंड तय करना, संचालनों के लिए आचार-संहिता बनाना, ध्वनि प्रदूषण, पशुओं द्वारा फैलने वाली संक्रामक बीमारियों जैसे मुद्दों पर जोखिम प्रबंधन आदि कार्य शामिल हैं.

इस संकल्पना में मुझे बहुत सारे व्यावसायिक अवसर नजर आते हैं. मैं आशा करता हूँ कि हमारे नवोन्मेषी ग्रामीण विकास अधिकारी एवं शाखा प्रबंधक भी इस बात से सहमत होंगे. अगर वे उपयुक्त दृष्टिकोण से अपने क्षेत्र का सर्वेक्षण करें; तो उन्हें ऐसे गतिशील कृषक नजर आएंगे; जिनके पास आधुनिक डेयरी, पोल्ट्री, मधुमक्खी पालन, फल/ सब्जी बागान आदि की सुविधा है, वे कृषि पर्यटन को एक अतिरिक्त आय के रूप में देख सकते हैं. अब जरूरत है उन्हें इस दिशा में प्रेरित करने की. इस प्रकार के उद्यमों को प्रोत्साहन देने से एक तरफ जहां हम उन्नतिशील कृषि को बढ़ावा दे सकते हैं, वहीं दूसरी तरफ व्यावहारिक बैंकिंग के लिए नए स्त्रोत भी उत्पन्न कर सकते हैं.

डॉ. अजित मराठे, उप महाप्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय, जालंधर

राजीव श्रीवास्तव

कृषि ऋण- अनर्जक आस्तियों के कारण एवं निवारण

अनर्जक आस्ति (संपत्ति) से तात्पर्य बैंकिंग उद्योग में ऐसे ऋण से है, जिसकी वापसी संदिग्ध हो जाती है. बैंक अपने ग्राहकों को जो ऋण प्रदान करता है, यदि किसी कारणवश ग्राहक ऋण की रकम लौटा नहीं पाए, तो ऐसे ऋणों को अनर्जक आस्ति कहा जाता है. किसी भी बैंक की आर्थिक सेहत को मापने का यह एक महत्त्वपूर्ण पैमाना है तथा इसमें वृद्धि होना किसी भी बैंक के लिए चिंता का विषय होता है.

इसके पहले कि हम अनर्जक कृषि ऋणों की बात करें; यह जान लेना उचित होगा कि कृषि ऋण कितने प्रकार के होते हैं. भारतीय रिजर्व बैंक के अनुसार कृषि ऋण मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं :

प्रत्यक्ष कृषि ऋण: प्रत्यक्ष कृषि ऋण सीधे किसानों को या उनके संयुक्त देयता समूहों अथवा स्वयं सहायता समूहों को कृषि कार्यों के साथ-साथ कृषि उपकरणों को क्रय करने एवं अन्य गतिविधियों जैसे- डेयरी, मुर्गीपालन और अन्य कार्यों के लिए दिया जाता है.

अप्रत्यक्ष कृषि ऋण: कृषि में उपयोग होने वाले संसाधनों के कारोबार जैसे उर्वरक, बीज आदि के व्यवसाय हेतु, बिजली बोर्डो एवं सहकारी समितियों को दिया गया ऋण.

कृषि क्षेत्र में अनर्जक आस्तियों का प्रभाव

हम जानते हैं कि भारत एक कृषि प्रधान देश है. कृषि का हमारे देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान है. लगभग 60% आबादी कृषि कार्य मे लगी है; जबकि कृषि क्षेत्र की कुल सकल उत्पाद (जीडीपी) मे हिस्सेदारी 15% है. जैसाकि हम जानते हैं कि भारतीय कृषि मॉनसून का जुआ मानी जाती है. अर्थात बेहतर मानसून होने पर कृषि बेहतर होने की उम्मीद होती है और मानसून में किसी भी प्रकार की कमी कृषि को कुप्रभावित करती

है, जिसका परिणाम होता है कृषकों की बदहाली. कई प्रदेशों जैसे महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना आदि में कृषक वर्ग कृषि ऋण के असह्य बोझ से दबा हुआ है. दूसरी तरफ पैदावार का उम्मीद के अनुरुप नहीं होना उन्हें आत्म हत्या तक करने पर मजबूर कर देता है. यह भारतीय कृषकों की दुर्दशा को परिलक्षित करता है. फसल खराब होने के पश्चात किसान न तो अपना घर चलाने लायक रह जाता है और न ही वह बैंक से लिए कृषि ऋण को लौटाने में सक्षम होता है. यह स्थिति अत्यंत भयावह होती है तथा ऋण के अनर्जक आस्ति बनने की संभावना बढ़ जाती है. इसका सीधा प्रभाव कृषि उत्पादन पर पड़ता है, जो देश की अर्थव्यवस्था को भी प्रभावित करता है.

कृषि ऋण के एक बार अनर्जक आस्ति हो जाने के बाद बैंकों से उस किसान को पुनः ऋण प्राप्त करने में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है. यहां तक कि कभी-कभी वह किसान बैंक से दोबारा ऋण प्राप्त करने में सफल भी नहीं हो पाता है. यह भी एक कारण है कि कृषि में ऋण प्रवाह की गति दूसरे क्षेत्रों की तुलना में कम है.

यदि हम भारतीय कृषि के बारे में गहराई से अध्ययन करें, तो पाते हैं कि भारतीय कृषक दो भागों में विभाजित है. पहला वर्ग उन कृषकों का है, जो नई तकनीक का प्रयोग करते हुए उन्नतिशील खेती करते हैं; जबकि दूसरा वर्ग अभी भी पुरानी तकनीक पर ही खेती कर रहा है. दूसरे वर्ग के किसानों को ऋण लेने में तकनीकी कठिनाई होती है. इसलिए आवश्यक है कि उनकी कठिनाइयों को पहचान कर एवं पुरानी तकनीक में सुधार के उपाय लागू करके प्रत्येक वर्ग में उन्नयन किया जाये, जिससे स्थायी वृद्धि हो सके.

इन सब के बावजूद हम पाते हैं कि किसानों की आर्थिक स्थिति ज्यों की त्यों बनी हुई है. आज भी किसान आत्म-हत्या करने को मजबूर है. ऐसा देखा गया है कि भारत में कृषि हमेशा ही घाटे का सौदा रही है. तथापि किसान के पास कोई अन्य विकल्प नहीं होने के कारण वह इससे दूर भी नहीं हो सकता है. किसानों को बैंकों से ऋण तो दिये जाते हैं; परंतु बैंकों को इन ऋणों की समय से वापसी में कठिनाई आ रही है. परिणामतः ऐसे ऋण अनर्जक श्रेणी में वर्गीकृत होने लगते हैं. कृषि एवं कृषकों से संबंधित ऋणों के अनर्जक होने के कुछ संभावित कारण निम्नलिखित हैं :-

कृषि शिक्षा का अभाव:-

हम जानते हैं कि भारत की 70 प्रतिशत आबादी अपने जीवनयापन के लिए अभी भी कृषि पर आश्रित है. बावजूद इसके देश भर में कृषि शिक्षा का घोर अभाव है. कृषि विश्वविद्यालयों की संख्या काफी कम है और जहां ये हैं भी, उनमें गुणत्तापरक शिक्षा का अभाव है. भूमंडलीकरण के इस दौर में बहु-राष्ट्रीय कंपनियों के माध्यम से कृषि की

आधुनिक तकनीक जो इस देश में आती है, उसे कृषि का प्रचार-प्रसार तंत्र उन किसानों तक पहुंचाने में विफल रहता है, यह एक गंभीर और विचारणीय विषय है. आज भी किसान कृषि की अच्छी पैदावार के लिए ईश्वरीय कृपा पर विश्वास रखता है. परिणामतः यदि भगवान भरोसे कृषि अच्छी पैदावार दे गई तो ठीक, नहीं तो कृषि चौपट होती है और किसानों पर दोहरा प्रहार होता है. एक तो उसे अपने परिवार के पालन-पोषण की कठिनाई हो जाती है. दूसरी ओर बैंकों से लिए गए ऋण को वापस चुकता करने में असफल होता जाता है. फलतः वह ऋण अनर्जक संपति के रुप में परिवर्तित हो जाता है.

भूमि प्रबंधन का अभाव:-

हम देखते हैं कि आजादी के इतने वर्षों बाद भी भूमि एवं फसल के बेहतर प्रबंधन की बात देश के किसी कोने में दिखाई नहीं देती है और तदर्थ आधार पर नीतियों एवं प्रबंधन का संचालन वे लोग करते हैं; जिन्हें इस क्षेत्र की कोई जानकारी नहीं होती है. यदि राष्ट्रीय स्तर पर यह नीति बनाई जाए कि देश के अंदर विभिन्न वस्तुओं की कितनी खपत है और वह किस क्षेत्र में है तथा भविष्य के लिए कितने भंडारण की आवश्यकता है; तो इसके प्रबंधन से किसानों की स्थिति में सुधार तो आ ही सकता है; साथ ही किसानों को आवश्यकता के अनुसार फसल लगाने हेतु भूमि प्रबंधन की सलाह दी जा सकेगी. ऐसा नहीं होने से किसान अपनी मर्जी से कभी एक ही फसल को इतनी मात्रा में लगा देते हैं कि पूरे देश में उसकी बहुत ज्यादा पैदावार हो जाती है तथा किसानों को उनकी फसल का सही मूल्य नहीं मिल पाता है. परिणामतः किसानों की आर्थिक स्थिति ज्यों की त्यों बनी रहती है. वे अपने कृषि ऋण को चुकता नहीं कर पाते हैं तथा उनके द्वारा लिए गए ऋण अनर्जक हो जाते हैं .

फसलों के समुचित क्रय-विक्रय की व्यवस्था का अभाव:

यह एक विडंबना है कि जब भी कृषि उत्पाद बाजार में आता है, उसके मूल्य निरंतर गिरने लगते हैं और मध्यस्थ सस्ती दरों पर उसे क्रय कर लेते हैं. इस प्रकार कृषि घाटे का व्यवसाय बनकर रह जाती है. दुर्भाग्य है कि संबंधित लोग औद्योगिक क्षेत्र के उत्पादों की दरें उसकी लागत, मांग और पूर्ति को ध्यान में रखते हुए निर्धारित करते हैं; किंतु किसान की फसलों का मूल्य या तो सरकार या क्रेता द्वारा निर्धारित किया जाता है; उसमें भी तत्काल नष्ट होने वाले उत्पादों की बिक्री के समय किसान असहाय दिखाई देता है.

उत्पाद मूल्य के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए सूचना विभाग भी जिम्मेदार है. आज भी किसान के पास कोई ऐसा सूचना तंत्र नहीं है, जो यह तय कर सके कि उसके उत्पाद का उचित मूल्य आज किस बाजार में क्या है और भविष्य में मूल्य घटने- बढ़ने की क्या

संभावनाएं हैं ? जब वह अपने उत्पाद को मंडी में ले जाता है; तब उसे उस दिन का भाव पता चलता है. उत्पाद को पुन: घर वापस लाने पर किराये- भाड़े का बोझ, परेशानी आदि को देख मजबूर होकर क्रेता के चुंगल में फंसता है और क्रेताओं का संगठित गिरोह उसके उत्पाद को मनमाने दामों में क्रय कर लेते हैं. इसलिए किसानों को उनके उत्पाद का उचित मूल्य मिलने के लिए उन्हीं के बीच के व्यक्तियों के माध्यम से कोई सम-सामयिक रणनीति बनाई जानी चाहिए. मंडी में गोदामों में सहकारी समितियों के माध्यम से यह व्यवस्था की जानी चाहिए कि यदि किसी दिन किसान को उसके उत्पाद का उचित मूल्य नहीं मिल पा रहा है; तो उसके उत्पाद का भंडारण सहकारी क्रय- विक्रय समिति के गोदामों में कर दिया जाए और उसके उस दिन के ताजा मूल्य का 50 से 80 प्रतिशत अग्रिम दे दिया जाए; ताकि वह अपने घरेलू व सामाजिक कार्य को कर सके. जब बाजार मूल्य उच्च स्तर पर हो; तो बिक्री कर समिति का किराया और लिए गए अग्रिम को वापस कर अपनी बचत पूंजी को अपने उपयोग में ला सके. यह अत्यंत गंभीर और विचारणीय विषय है. इससे लघु और सीमांत कृषकों की तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति और फसल के उचित मूल्य प्राप्त करने में सुविधा होगी. परंतु ऐसा नहीं होने से किसानों के द्वारा लिया गया ऋण अनर्जक होने लगता है एवं किसान चाहकर भी ऋण चुकता नहीं कर पाता है.

भंडारण व्यवस्था का अभाव:

किसान का ऐसा उत्पाद, जो विभिन्न समितियों के माध्यम से क्रय किया जाता है, उसे किसी न किसी गोदाम में रखने की व्यवस्था अथवा निर्यात की व्यवस्था की जानी चाहिए. उस क्रय किए गए उत्पाद की ग्रेडिंग व्यवस्था भी होनी चाहिए; ताकि कुल उत्पाद की मात्रा पर उसके ग्रेड के अनुसार बिक्री मूल्य मिल सके.

भंडारण की अनुपलब्धता के कारण किसानों को अपनी फसल की तत्काल बिक्री करनी पड़ती है, जिसके कारण उसे यथोचित लाभ नहीं हो पाता है. प्राप्त रकम से वह अपने परिवार का गुजर-बसर तो कर लेता है, परंतु बैंकों से लिया गया ऋण चुकता करने में अक्षम होता है एवं ऐसे ऋण अनर्जक होने लगते हैं.

इसके अलावा भी कई अन्य कारण हैं, जो भारतीय कृषि एवं कृषकों को विपरीत स्थितियों में प्रभावित करते हैं एवं किसानों द्वारा प्राप्त किया गया ऋण अनर्जक होने लगता है.

कृषि ऋण माफी योजना:-

जैसाकि हम जानते हैं कि किसानों की आर्थिक स्थिति को देखते हुए सरकार द्वारा कई

बार कृषि ऋण माफी योजनाएं लाई गईं, जिसके अंतर्गत किसानों के बकाया कृषि ऋणों को माफ कर दिया गया. इन योजनाओं ने किसानों के ऋण भुगतान को भी प्रभावित किया है. जिन किसानों के कृषि ऋण बैंकों में बकाया हैं, वे सरकार द्वारा लाई जाने वाली ऋण माफी योजनाओं का इंतजार करते रहते हैं तथा जमा करने की सामर्थ्य के बावजूद बकाया कृषि ऋण जमा नहीं करते हैं. इस तरह ऐसे ऋणों के एनपीए होने की संभावना कई गुना बढ़ जाती है.

कृषि ऋणों के अनर्जक आस्ति होने से बचाने के उपाय:-

हम यह भी जानते है कि बैंकों का बढ़ता एनपीए बैंकों के लिए न केवल चुनौती है; बल्कि यह परेशानी का सबब भी है. वर्ष 1995 के पूर्व तक बैंकों के बढ़ते एनपीए में कृषि क्षेत्र का योगदान काफी कम था. लेकिन धीर-धीरे किसानों की आर्थिक स्थिति में निरंतर गिरावट आती गई तथा किसान अपने कृषि ऋण को अदा करने में अक्षम होते गए. अब तक एनपीए से अछूता रहने वाला कृषि क्षेत्र, अब एनपीए के भंवर में बुरी तरह से फंसने लगा है. भारतीय रिजर्व बैंक और वित्त मंत्रालय के पास उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार सरकारी बैंकों के एनपीए में कृषि क्षेत्र का योगदान लगातार बढ़ता जा रहा है.

कृषि ऋणों के अनर्जक होने से बचाने के कई उपाय बैंकों/ सरकार द्वारा अपनाए गए हैं; परंतु इसका कोई अंतिम उपाय दिखता नहीं प्रतीत हो रहा है. कृषि ऋणों को अनर्जक आस्तियां बनने से बचाने हेतु निम्नलिखित उपाय कारगर हो सकते हैं:-

बैंक में व्याप्त अंदरूनी तथा दूसरी खामियों का इलाज:-

जैसाकि हम जानते हैं कि किसी भी संगठन/ संस्था में कई अंदरुनी तथा अन्य खामियां विद्यमान होती हैं. यदि इन खामियों को समाप्त करने का प्रयास किया जाए, तो बढ़ते कृषि ऋण को एनपीए होने से बचाया जा सकता है. इन खामियों में सबसे महत्वपूर्ण है गुणवत्तापूर्ण कृषि ऋणों का चयन एवं संवितरण. बैंकों को सुनिश्चित करना चाहिए कि उनकी शाखाओं द्वारा केवल उन्हीं किसानों को कृषि ऋण प्रदान किये जाएं; जो सचमुच कृषि कार्य मे संलग्न हों. ऐसा देखा जा रहा है कि कई ऐसे लोग हैं, जो कृषि का कार्य तो नहीं करते हैं; परंतु कृषि ऋण स्वीकृत कराकर इसका उपयोग कई अन्य कार्यों हेतु करते हैं. ऐसे में लाजमी है कि इस प्रकार का ऋण एनपीए ही होगा.

बैंक के कार्यकलापों में बेवजह दखलंदाजी पर रोक:

बैंकों के कार्यकलापों में बेवजह आंतरिक एवं बाह्य दखलंदाजी देखने को मिलती है. परिणामस्वरुप ऐसे लोग ऋण प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं; जिन्हें ऋण की जरुरत ही

नही हैं. यदि बैंकों के ऊपर इस प्रकार के दबाव को रोका जा सके, तो ऐसे कृषि ऋणों को एनपीए होने से बचाया जा सकता है.

कृषि ऋण प्रवाह में समय-समय पर परिवर्तन हुए हैं और वृद्धि की गति भी समय-समय पर परिवर्तित हुई है, जिसके मुख्य कारण निम्नानुसार हैं:-

- खेती का मानसून पर निर्भर होना
- अवैज्ञानिक पद्धति से खेती का प्रचलन
- वैकल्पिक कृषि पद्धति का अविकसित होना
- ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण प्रणाली

कृषि ऋण से जुड़े अन्य तथ्य :

(I) सहकारी बैंकों एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की अनियंत्रित ब्याज दर.

(II) सरकारी बैंकों के दो लाख से अधिक के ऋणों पर अनियंत्रित ब्याज दर.

(III) कुछ चयनित ग्रामीण बैंकों का पुनर्वित्तपोषण.

(IV) ग्रामीण ऋण एजेंसी के विवेकपूर्ण लेखा मापदंड एवं प्रावधान (प्रोविजिनिंग) का लागू होना.

(V) भारतीय रिजर्व बैंक से पुन-र्वित्त और नाबार्ड का पूँजी सहयोग.

(VI) आधारभूत परियोजनाओं के लिए नाबार्ड में ग्रामीण इन्फ्रास्ट्रक्चर विकास पूँजी (आर.आई.डी.एफ.) का प्रावधान.

(VII) किसान क्रेडिट कार्ड का प्रावधान एवं सरकारी बैंक द्वारा रु.50,000/- तक के केसीसी के लिए 9% से कम ब्याज का प्रावधान.

(VIII) सरकारी एवं निजी बैंकों में कृषि ऋण का प्रावधान.

साधारणतया किसानों को बेहतर कृषि उत्पादन हेतु बैंकों द्वारा कई प्रकार के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष ऋण प्रदान किए जाते हैं. कृषि व संबद्ध क्रियाकलापों के लिए प्रत्यक्ष ऋणों में व्यक्तिगत किसानों या किसानों के एसएचजी/ जेएलजी को निम्न उद्देश्यों के लिए ऋण शामिल हैं -

1. फसल उगाने के लिए अल्पावधि ऋण.

2. पारंपरिक बागान और बागबानी के लिए ऋण.

3. किसानों द्वारा फसल ऋण प्राप्त करने या न करने पर ध्यान दिए बगैर 12 महीनों में देय रु.10 लाख तक के बंधक ऋण.

4. कृषि व संबद्ध कार्यकलापों के लिए उत्पाद व निवेश जरुरतों के वित्तीयन हेतु कार्यकारी पूँजी तथा सावधि ऋण.

5. कृषि के उद्देश्य के लिए भूमि खरीदने हेतु लघु व सीमांत किसानों को ऋण.

6. उचित सामूहिक या संपार्श्विक प्रतिभूति के प्रति गैर संस्थागत उधारदाताओं के ऋणी आपदाग्रस्त किसानों को ऋण.

7. व्यक्तियों, स्वयं सहायता समूहों तथा सहकारी संस्थाओं द्वारा की जाने वाली स्प्रेयिंग, वीडिंग, कटाई, ग्रेडिंग, सोर्टिंग, प्रोससिंग तथा परिवहन जैसे कटाई पूर्व व कटाई के बाद के कार्यों के लिए प्रदत्त ऋण.

8. संबंधित गतिविधियां जैसे डेयरी, मत्स्य पालन, सूअर पालन, मुर्ग़ी पालन, मधुमक्खी पालन आदि के लिए प्रदत्त अल्पावधि ऋण.

9. कृषि उपकरणों व मशीनरी की खरीद- लोहे के हल, हैरो, होज़, भूमि समतल बनाने वाला यंत्र, बाँध बांधने वाले, दस्ती औजार, स्प्रेयर, डस्टर, है-प्रेस, गन्ना पीसने वाले यंत्र, थ्रेशर आदि.

10. कृषि मशीनों की खरीद- ट्रैक्टर, ट्रेलर, बिजली के हल, ट्रैक्टर के सहायक उपकरण जैसे तवेदार हल आदि.

11. ट्रक, मिनी ट्रक, जीप, पिकअप वैन, बैल गाडी व अन्य परिवहन उपकरणों की खरीद.

12. हल चलाने वाले जानवरों की खरीद.

13. उथले व गहरे नलकूप, टंकियां आदि का निर्माण और ड्रिलिंग यूनिट की खरीद.

14. ऊपरी तल के कुएं बनाना, कुओं की गहराई बढाना, उनको साफ करवाना, कुएं खोदना, कुएं का बिजलीकरण, तेल इंजन खरीदना और लगाना.

15. टरबाइन पंप खरीदना व लगाना, फील्ड चैनल बनाना.

16. लिफ्ट सिंचाई परियोजनाएं.

17. छिड़काव सिंचाई यंत्र लगाना (मैक्रो सिंचाई).

18. कृषि प्रयोजनों के लिए जनरेटर सेट्स खरीदना.

19. कृषि भूमियों पर बांध लगाना, भूमि को समतल बनाना, शुष्क धान खेतों की सीढ़ीदार खेती से सिंचाई योग्य गीली धान के खेत बनाना, कृषि जल निकास का विकास, भूमि का उद्धार और लवणता का संरक्षण, बुलडोजर खरीदना.

20. बैल शेड, उपकरण शेड, ट्रैक्टर व ट्रैक्टर शेड, खेती भण्डार आदि का निर्माण.

21. माल गोदाम, गोदाम, साइलों (खत्ती) व शीतागार का निर्माण व संचालन.

22. फ़सलों के संकर बीज का उत्पादन व संसाधन.

23. सिंचाई प्रभार का भुगतान, कुएं व नलकूप से जल किराए पर लेने पर प्रभार, नाली नहर पानी प्रभार, तेल इंजनों का अनुरक्षण, इलेक्ट्रिक मोटर, मज़दूरी का भुगतान, बिजली प्रभार, विपणन प्रभार, रूढ़िगत सेवा इकाइयों संबंधी सेवा प्रभार, विकास उप-कर का भुगतान आदि.

24. डेयरी तथा पशुपालन के सभी पहलुओं का विकास.

25. मत्स्य पालन का विकास.

26. मुर्ग़ी पालन, सूअर पालन, मधु मक्खी पालन आदि का विकास.

27. रेशम उत्पादन का विकास.

28. जैव गैस संयंत्र आदि.

यह देखा गया है कि कृषि क्षेत्र कहीं न कहीं सदैव उपेक्षित रहा है. सरकारी विभाग हो या किसानों के लिए काम करने वाले समूह, सभी उस समय किसानों को मदद नहीं कर पाते हैं, जब उन्हें इसकी जरुरत होती है. फसल का नुकसान होते ही ऐसे कृषि ऋणों पर काले बादल मंडराने लगते हैं. परिणास्वरुप कृषि कार्य तो प्रभावित होता ही है, साथ ही बैंकों द्वारा दिए गए कृषि ऋण भी अनर्जक आस्तियों में बदलने लगते हैं. इसमें एक यह भी महत्वपूर्ण तथ्य है कि एक बार एनपीए हो जाने के बाद वह किसान पुन: वित्तपोषण प्राप्त करने की पात्रता खो देता है और वह अतिदेय कृषि ऋण के बोझ तले दब जाता है. हम यह भी देखते हैं कि अन्य क्षेत्रों के मुकाबले भारत में कृषि ऋणों को वह अहमियत नहीं प्रदान की जाती है. नीचे दिए गए चार्ट से भी हम इस बारे में अनुमान लगा सकते है:-

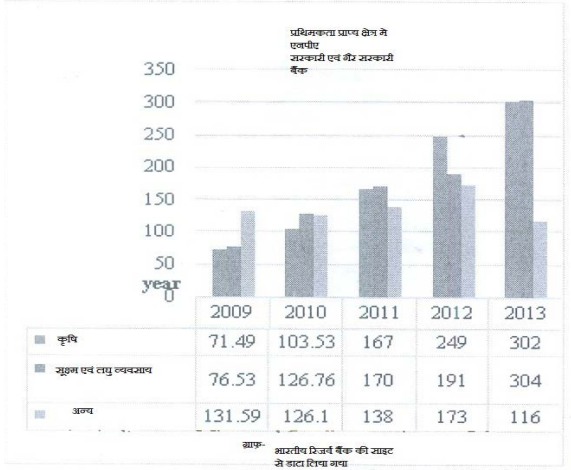

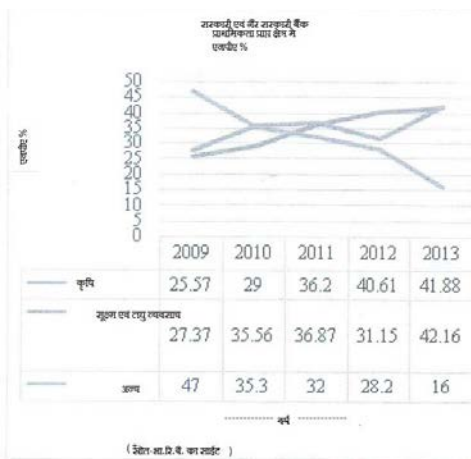

उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि कृषि क्षेत्र में अभी भी ऋण का संवितरण काफी कम है; जबकि भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, जहां कृषि उत्पाद, देश के सकल घरेलू उत्पाद को प्रत्यक्ष या परोक्ष रुप से प्रभावित करते हैं, कृषि ऋण के माध्यम से बेहतर परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं . यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि हम जो कृषि ऋण स्वीकृत करते हैं, वह उसी फसल की पैदावार हेतु उपयोग में आ रहा है या नही; क्योंकि प्राय: यह भी देखा गया है कि कृषि कार्य हेतु आवंटित ऋण का विचलन भी हो जाता है तथा जिस कार्य हेतु ऋण स्वीकृत किया गया है, उस उद्देश्य हेतु उसका उपयोग नहीं होता है. यह कृषि ऋण के अनर्जक होने के प्रमुख कारणों में से एक है. इसके साथ ही निम्नलिखित तथ्यों को भी ध्यान में रखा जाए -

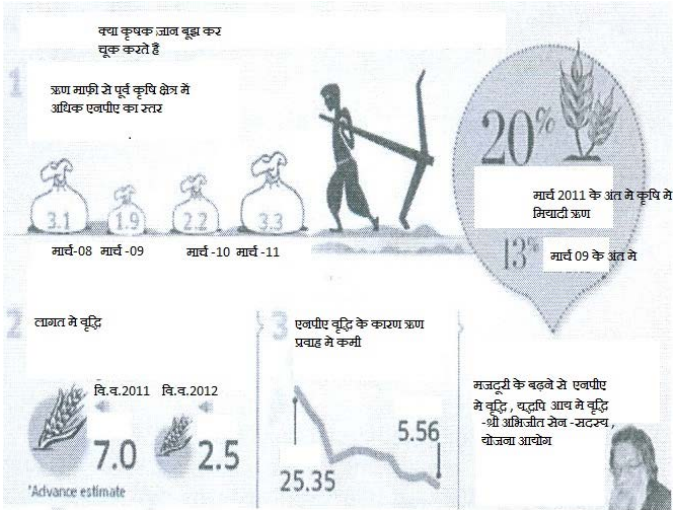

1) ऋणी का चुनाव सावधानीपूर्वक करते हुए सभी नियमों का पालन किया जाना चाहिए.

2) प्रोजेक्ट का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन कर उसकी तकनीकी एवं आर्थिक व्यवहार्यता का भी विवेचन करना चाहिए. साथ ही प्रोजेक्ट पर होने वाली आय की भी गणना करना चाहिए. जिसमें यह देखना चाहिए कि होने वाली आय, देय किश्त एवं लगने वाले ब्याज़ से अधिक हो .

3) दिये गए ऋण का समुचित उपयोग हो, जिसकी समय-समय पर बैंक द्वारा जांच भी होनी चाहिए.

4) बैंक द्वारा ऋणी को समय-समय पर किश्त एवं ब्याज़ देने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए एवं इसके बारे में शिक्षित भी करना चाहिए.

इन उपायों को यदि सदैव ध्यान में रखा जाए, तो बैंक अपने कृषि ऋण को एनपीए होने से बचा सकते हैं या काफी सीमा तक कम कर सकते हैं.

राजीव श्रीवास्तव, सहायक महाप्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय, पटना

प्रतिभू बनर्जी

ग्रामीण भंडारण योजना

पृष्ठभूमि:

विगत कुछ दशकों में कृषि क्षेत्र में लगातार हुए सकारात्मक बदलावों, विशेषकर आधुनिक तकनीक व कृषि यंत्रीकरण के उपयोग से देश में अनाज का उत्पादन आशानुरूप पहले से कई गुना बढ़ा है. इससे न केवल देश अन्न के मामले में आत्मनिर्भर हुआ है, वरन अब उत्पादन आधिक्य की स्थिति है. वर्ष 1950-51 में सकल खाद्यान उत्पादन 508.3 लाख टन था, जो वर्ष 2015-16 में अनुमान से बढ़कर 2522.3 लाख टन हो गया. किन्तु दूसरी ओर इस बढ़े उत्पादन अतिरेक को संभालने व वैज्ञानिक तरीके से संरक्षित करने के लिए जरूरी भंडारगृहों की उपलब्धता वांछित गति से नहीं बढ़ी है. फलतः हर साल बड़ी मात्रा में अनाज खुले में पड़े- पड़े सड़ जाता है. साथ ही 6 से 10 प्रतिशत अनाज चूहों, कीटों व अन्य के द्वारा नष्ट कर दिया जाता है. इसी तरह लगभग 30% सब्जियाँ भंडारण व विपणन की उचित सुविधाओं के अभाव में प्रतिवर्ष नष्ट हो जाती हैं. कमोबेश यही हाल दूध, फल, माँस व मत्स्य उत्पादों का है.

वैज्ञानिक रूप से बनाये गए भंडारगृहों की उपलब्धता कृषि व सहायक गतिविधियों से संबधित चीजों के उत्पादन, विपणन, उपभोग व उनके व्यवसाय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है. परंतु देश में, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में भंडारगृहों के नेटवर्क की समुचित तथा सर्वव्यापी व्यवस्था का अभाव है. इस अभाव का खामियाजा न केवल उत्पादक वरन अंतिम उपभोक्ता को या कहें तो समग्र रूप से देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को झेलना पड़ता है. इससे उत्पादकों की आय कम होती है एवं अंतिम उपभोक्ता की थाली आधी खाली रहती है, निर्यात के माध्यम से अर्जित की जा सकने वाली विदेशी मुद्रा भी वांछित मात्रा में प्राप्त नहीं होती.

समुचित भंडारण की इस कमी को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण भंडारगृहों के निर्माण के लिए वर्ष 2001 में 'ग्रामीण भंडारण योजना" लागू की गई थी. वर्ष 2004 में एक दूसरी योजना 'एएमआईजीएस" कृषि विपणन आधारभूत संरचना के विकास तथा उपज के ग्रेडिंग व मानकीकरण के लिए लाई गई. किन्तु ये प्रयास नाकाफी रहे.

बारहवीं पंचवर्षीय योजना(2007- 2012) के अंत तक देश में सरकारी, सहकारी तथा निजी सभी क्षेत्रों को मिलाकर 1087.50 लाख मीट्रिक टन के लगभग भंडारण क्षमता मौजूद थी. देश में भंडारगृहों की पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए अतिरिक्त 350 लाख मीट्रिक टन क्षमता विकसित करने की विशाल आवश्यकता का आकलन योजना आयोग (अब नीति आयोग) द्वारा बारहवीं पंचवर्षीय योजना के आरंभ में किया गया. साथ ही बारहवीं योजना के 'कृषि विपणन आधारभूत संरचना तथा घरेलू व बाहरी व्यापार" से संबंधित एक कार्यदल ने विपणन आधारभूत संरचना व वेल्यू चेन के विकास हेतु रु 56,000 करोड़ के निवेश की आवश्यकता होने का अनुमान किया. इसमें से अकेले बारहवीं योजना के काल में देश में 4000 कृषि विपणन आधारभूत संरचना परियोजनाओं के माध्यम से 230 लाख मीट्रिक टन भंडारण क्षमता विकसित करने का लक्ष्य रखा गया है.

बारहवीं पंचवर्षीय योजना को ध्यान में रखते हुए, योजना आयोग द्वारा श्री दिनेश राम की अध्यक्षता में एक कार्यदल का गठन किया गया था. इस कार्यदल ने भंडारण के बेहतर विकास व नियमन हेतु 30 सितंबर 2011 को अपनी संस्तुतियाँ दीं. इस कार्यदल ने तत्कालीन 'ग्रामीण भंडारण योजना" का अध्ययन कर उसमें कई महत्वपूर्ण बदलाव करने के सुझाव दिए. तदनुसार तत्कालीन योजना में कई परिवर्तन किए गए.

कृषि विपणन अधोसंरचना :

उद्देश्य: उपयुक्त दोनों योजनाओं को मिलाकर 1 अप्रैल, 2014 से एक नई योजना 'एकीकृत कृषि विपणन योजना' (आईएसएएम) लागू की गई. इसकी सबसे महत्वपूर्ण उप योजना 'कृषि विपणन आधारभूत संरचना' (एग्रीकल्चरल मार्केटिंग इन्फ्रास्ट्रचर- एएमआई) है.

इस उप योजना के तहत कृषि तथा सहायक गतिविधियों यथा डेयरी, मत्स्यपालन, पोल्ट्री व लघु वनोपज़ के उत्पादन अतिरेक के उचित प्रबंधन व विपणन तथा उनका वैज्ञानिक तरीके से संरक्षण करने हेतु न केवल ग्रामीण भंडारगृहों का निर्माण/ मरम्मत वरन कोल्ड स्टोरेज का निर्माण, आधारभूत संरचना का विकास, ग्रेडिंग व मानकीकरण एवं परिवहन (प्रशीतक वाहनों सहित) के लिए वेल्यू चेन विकसित करना है. यहाँ वेल्यू चेन से आशय उन अंतर-सम्बद्ध गतिविधियों की शृंखला से है, जो किसी कृषि (डेयरी, कुक्कुट पालन, बागवानी आदि सहायक गतिविधियों को शामिल कर) उत्पाद के उत्पादन

से लेकर अंतिम उपभोक्ता को खुदरा विक्रय तक में शामिल हैं. गतिविधियों की इस शृंखला में उत्पाद की सफाई, ग्रेडिंग, प्राथमिक स्तर तक की प्रोसेसिंग, पैकिंग, माप-तौल, प्रशीतक वाहनों द्वारा परिवहन तथा वितरण आदि शामिल हैं.

साथ ही, इस क्षेत्र में नवोन्मेष व आधुनिक तकनीक को बढ़ावा देना व बिचौलियों की संख्या को कम कर कृषि क्षेत्र के उत्पादकों के आय को बढ़ाना भी इसका उद्देश्य है. इसके अतिरिक्त कृषि मार्केटिंग आधारभूत संरचना को सुदृढ़ कर राष्ट्रीय स्तर पर कृषि उत्पादों के लिए वेयर हाउस रसीद व्यवस्था की शुरुआत करना भी इसका उद्देश्य है, ताकि कृषि उत्पादकों को उपज को कम मूल्यों पर न बेचना पड़े.

क्रियान्वयन तथा अनुदान:

इस योजना के क्रियान्वयन का दायित्व भारत सरकार, कृषि मंत्रालय के तहत डायरेक्टरेट ऑफ मार्केटिंग एंड इन्सपेक्शन (डीएमआई) को सौंपा गया है. पूंजीगत अनुदान नाबार्ड द्वारा उन परियोजनाओं को प्रदान किया जाता है, जो व्यावसायिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, राज्य सहकारी बैंक, अनुसूचित शहरी सहकारी बैंक, अनुसूचित प्राथमिक सहकारी बैंक आदि से वित्तपोषित हों.

नाबार्ड द्वारा अनुदान दो भागों, 50% अग्रिम अनुदान तथा 50% अंतिम अनुदान में प्रदान किया जाता है. बैंक की वित्त प्रदायी शाखा द्वारा अग्रिम अनुदान हेतु दावा सावधि ऋण की प्रथम किश्त के वितरण के 90 दिनों के भीतर करना होता है, जबकि अंतिम अनुदान हेतु निर्माण पूरा होने के बाद नाबार्ड, डीएमआई तथा वित्त प्रदायी बैंक द्वारा किए गए संयुक्त निरीक्षण के 60 दिनों के भीतर दावा करना होता है.

स्पष्ट रूप से 'ग्रामीण भंडारण योजना' अब 'कृषि विपणन आधारभूत संरचना' का एक भाग है. इसके अंतर्गत भंडारगृह निर्माण परियोजना हेतु अधिकतम रु. 4 करोड़ तथा अन्य अधोसंरचना निर्माण हेतु अधिकतम रु. 5 करोड़ तक के अनुदान का प्रावधान है. हालाँकि मूल रूप से यह योजना पूंजीगत अनुदान समर्थित है, किन्तु वर्ष 2014- 2015 के मध्य से इस अनुदान की पात्रता केवल अनुसूचित जाति/ जनजाति के उद्यमियों व सिक्किम को मिलाकर पूर्वोत्तर राज्यों के समस्त उद्यमियों तक सीमित कर दी गई थी. यूनियन बैंक में उद्यमियों के लिए ग्रामीण भंडरगृह निर्माण हेतु बिना अनुदान वित्तपोषण योजना उपलब्ध है.

वर्तमान में लागू 'कृषि विपणन आधारभूत संरचना' (एएमआई) एवं उसके एक भाग के रूप में ग्रामीण भंडारगृहों के निर्माण की गतिविधि हेतु लाई गई स्कीम की मूलभूत रूपरेखा निम्नानुसार है:

पात्र गतिविधियाँ:

कृषि विपणन आधारभूत संरचना(एएमआई) के तहत निम्नलिखित गतिविधियाँ स्वीकार्य हैं:

- वे सारी गतिविधियां, जो भंडारण या प्राथमिक स्तर की प्रोसेसिंग तक की अन्य विपणन आधारभूत संरचना से संबधित हैं.
- यहाँ प्राथमिक स्तर की प्रोसेसिंग से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है, जिसमें कच्ची कृषि उपज का मूल्य संवर्धन बिना उत्पाद के मूल रूप में परिवर्तन के होता है. उपज की सफाई, छंटाई, कटाई, छिलका उतारना, विरंजन, मोम लगाना, पकाना, ठंडा करना, पाश्चुरीकृत करना, जमाना आदि इसके उदाहरण हैं.
- विपणन स्थल पर नीलामी हेतु चबूतरा, लादने- उतारने, जोड़ने, सुखाने, सफाई करने, तौल करने आदि गतिविधियों के लिए प्लेटफार्म बनाने हेतु.
- पार्किंग शेड, आंतरिक सड़कें, कचरा निपटान व्यवस्था, पेयजल व्यवस्था जैसी सहायक आधारभूत संरचना संबंधी गतिविधियों हेतु. पर ये मुख्य परियोजना के अंग होने चाहिए, केवल सहायक गतिविधियाँ अनुदान हेतु पात्र नहीं होंगी.
- सुखाने, सफाई करने, मोम लगाने, संयोजन, संचयन, मानकीकरण, लेबलिंग, ग्रेडिंग आदि से जुडी वृत्तिमूलक आधारभूत संरचना हेतु.
- उपज कटाई पश्चात के कामों जैसे ग्रेडिंग, पैकेजिंग, जाँच आदि कामों के लिए प्रशीतक वाहनों सह अन्य चल-आधारभूत संरचना हेतु. किन्तु इसमें यातायात वाहन जैसे ट्रक, वैन आदि पात्र नहीं हैं.
- सहायक सुविधाओं सहित भंडारण आधारभूत संरचना (जैसे गोदाम) हेतु. इसमें रेलवे साइडिंग को छोड़ कर अन्य जरूरी सहायक सेवाओं जैसे लादना, उतारना आदि सुविधायें शामिल हैं.

स्थल चयन (लोकेशन) :

- ग्रामीण भंडारगृह कहाँ निर्मित होगा, यह आर्थिक व्यवहार्यता की शर्त पर उसे निर्माण करने वाले उद्यमी के व्यावसायिक निर्णय पर आधारित होगा. हालाँकि इसे अनिवार्य रुप से शहरी निकाय जैसे नगर निगम या नगर पालिका की सीमा से बाहर निर्मित होना चाहिए.

- अपवाद स्वरूप राज्य या केंद्रीय एजेंसियों द्वारा प्रायोजित फूड पार्क, मार्केट परिसर व औद्योगिक क्षेत्रों में निर्माण किया जा सकता है.
- यदि आधारभूत संरचना का निर्माण स्वयं की भूमि पर किया जा रहा है, तो परियोजना लागत में भूमि के मूल्य का अधिकतम 10 प्रतिशत लिया जा सकता है. यह मूल्य, जमीन के बाजार भाव तथा रजिस्ट्री में दर्शाये खरीद भाव में से जो कम हो, होगा.
- यदि जमीन शहरी विकास प्राधिकरण, औद्योगिक विकास निगम या फूड पार्क जैसे राज्य या केंद्र शासन की किसी एजेंसी से पट्टे पर ली गई हो, तो परियोजना लागत में भुगतान किये जा चुके लीज़ प्रीमियम या जमीन हेतु किये गये एकमुश्त भुगतान का अधिकतम 10 प्रतिशत लिया जा सकता है.

पात्रता:

ग्रामीण भंडारगृह निर्माण परियोजना हेतु निम्नलिखित सभी पात्र हैं:-

- व्यक्ति, कृषक व उनके समूह, पंजीकृत कृषक उत्पादक संस्था (एफ़पीओ)
- प्रोप्राइटरशिप/ पार्टनरशिप फर्म, कंपनी,
- गैर सरकारी संस्थायें (एनजीओ), स्वयं सहायता समूह,
- सहकारी संस्थायें, सहकारी विपणन फेडरेशन,
- कृषि उपज विपणन बोर्ड, कृषि उत्पादक कार्पोरेशन, राज्य वेयरहाउसिंग कार्पोरेशन, राज्य नागरिक आपूर्ति निगम एवं राज्य शासन की अन्य एजेंसियां
- स्वायत्त सरकारी संस्थायें, पंचायत व अन्य स्थानीय निकाय आदि
- केवल शहरी स्थानीय निकायों व शहरी सहकारी संस्थाओं को इस योजना के लिए अपात्र माना गया है.

भंडारण क्षमता:

- पूर्व में ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकतम 10 हजार मीट्रिक टन क्षमता तक के भंडारगृहों के निर्माण व नवीनीकरण हेतु पूंजीगत अनुदान की पात्रता थी. बाद में दिनेश राम कार्यदल की संस्तुति के अनुसार इसे बढ़ा कर अधिकतम 25,000 मीट्रिक टन किया गया.

- वर्ष 2012-13 से कृषि मंत्रालय, भारत सरकार के दिशानिर्देशों के अनुसार वर्तमान में न्यूनतम 100 मीट्रिक टन तथा अधिकतम 30,000 मीट्रिक टन क्षमता के भंडारगृहों के निर्माण को अनुदान की पात्रता है. सिक्किम को मिलाकर पूर्वोत्तर राज्यों में न्यूनतम भंडारण निर्माण की यह क्षमता 50 मीट्रिक टन है.
- आधारभूत संरचना की भंडारण क्षमता का आंकलन 4.5 मीटर ऊंचाई से बड़ी परियोजनाओं के लिए प्रति वर्ग मीटर तल क्षेत्र 1.8 मीट्रिक टन की दर से तथा 4.5 मीटर से कम ऊंचाई वाली परियोजना में प्रति वर्ग तल क्षेत्र 0.4 मीट्रिक टन की दर से किया जाता है.
- आधारभूत संरचना की ऊंचाई का निर्धारण फर्श से लेकर छत की कैंची (truss) के निचले सिरे तक होता है.
- यदि आधारभूत संरचना की छत एस्बेस्टस के बजाय पक्की ढलाई वाली है, तो फिर ऊँचाई का निर्धारण भीतरी छत की ऊँचाई से एक मीटर कम करके किया जाता है.

मार्जिन तथा सावधि ऋण :

- परियोजना में प्रमोटर की सहभागिता अर्थात मार्जिन कुल परियोजना लागत का कम से कम 20 प्रतिशत होना चाहिये.
- वित्तीय संस्था द्वारा स्वीकृत न्यूनतम सावधि ऋण (अनुदान सहित) कुल परियोजना लागत का 50 प्रतिशत होना चाहिये.
- मार्जिन की यह सीमा राज्य शासन तथा राज्य शासन के निकायों के मामले में भिन्न होगी.

आधारभूत संरचना संबन्धित अन्य पहलू :

- आधारभूत संरचना उचित रूप से हवादार, जलरोधी तथा चूहे व पक्षियों से सुरक्षित होनी चाहिये.
- रु. 500 लाख तक की परियोजना लागत वाले निर्माण का पूर्ण होना तथा अंतिम अनुदान दावा प्रस्तुति, ऋण की प्रथम किश्त जारी करने से अधिकतम 18 माह के भीतर हो जाना चाहिये.
- रु. 500 लाख से अधिक की परियोजना लागत वाले निर्माण का पूर्ण होना तथा

अंतिम अनुदान दावा प्रस्तुति, ऋण की प्रथम किश्त जारी करने से अधिकतम 24 माह के भीतर हो जाना चाहिये.

- अपरिहार्य दशा में इस समय सीमा को अधिकतम 6 माह बढ़ाया जा सकता है. परंतु इसके लिए जुर्माने के रूप में अनुदान में कटौती का प्रावधान है.

निष्कर्ष :

बारहवीं योजना के योजना काल में देश में 4000 कृषि विपणन आधारभूत संरचना परियोजनाओं के माध्यम से 230 लाख मीट्रिक टन भंडारण क्षमता विकसित करने के लक्ष्य को, विशाल पूंजीगत निवेश की दरकार को देखते हुए, बिना बैंकों के सहयोग के पूरा नहीं किया जा सकता. इस रूप में बैंकों के लिए ग्रामीण भंडारण क्षमता विकसित करने के क्षेत्र में ऋण देकर अपने संसाधनों के बेहतर नियोजन व अधिक आय अर्जन की व्यापक संभावना मौजूद है. इस संभावना के दोहन का यह उचित समय भी है.

प्रतिभू बनर्जी, मुख्य प्रबंधक (संकाय), स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र, भुवनेश्वर

विक्रांत कुमार महतो

गैर पारंपरिक ऊर्जा : एक वैकल्पिक स्त्रोत

आज भी ऊर्जा के परंपरागत स्त्रोत महत्वपूर्ण हैं, इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता, तथापि ऊर्जा के गैर परंपरागत स्त्रोतों अथवा वैकल्पिक स्त्रोतों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता महसूस की जा रही है. इससे एक ओर जहां ऊर्जा की मांग एवं आपूर्ति के बीच का अंतर कम हो जाएगा, वहीं दूसरी ओर पारंपरिक ऊर्जा स्त्रोतों का संरक्षण भी होगा. वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोत अथवा गैर परंपरागत ऊर्जा स्त्रोत का तात्पर्य ऊर्जा के उन स्त्रोतों से है, जिसे हमने पहले कभी प्रयोग नहीं किया; परंतु वर्तमान में उसे नई प्रौद्योगिकी द्वारा ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोत के रूप में देख रहे हैं या अब प्रयोग कर रहे हैं.

भारत में जैव ईंधन यानि बायोफ़्यूल को भी वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोत के रूप में देखा जा रहा है. कई मंचों से यह बात उठाई जा रही है कि हमें देश में जैव ईंधन यानि बायोफ्यूल का उत्पादन बढ़ाना चाहिए; ताकि हम आयातित तेल ईंधन पर अपनी निर्भरता कम कर सकें. वनस्पतियों से उत्पादित ईंधन को बायोफ्यूल कहा जाता है. यह तीन प्रकार की वनस्पतियों से बनाया जाता है - 1) जहरीले फल जैसे जेट्रोफा से 2) खाद्यान्न जैसे सोयाबीन से 3) गन्ने के रस से. जेट्रोफा को रतनजोत के नाम से भी जाना जाता है. जेट्रोफा को बंजर भूमि पर भी उगाया जा सकता. जेट्रोफा के उत्पादन को बढ़ावा भारत में नहीं दिया जा सकता है; क्योंकि उत्पादक द्वारा बायो डीजल की बिक्री सीधे करने पर प्रतिबंध है. कोलकाता की एक कंपनी द्वारा बायोडीजल कोलकाता की किसी कंपनी को सीधे बेचा जा रहा था. पेट्रोलियम मंत्रालय द्वारा आपत्ति जताने के कारण उस कंपनी ने यह खरीद बंद कर दी और बायोडीजल की फैक्ट्री भी बंद हो गई. बायोडीजल की फैक्ट्री के लिए यह अनिवार्य है कि वह उत्पादित माल को तेल कंपनी को बेचे. तेल कंपनी इसे डीजल मिलाकर बेचती है. इस बिक्री पर तेल कंपनी टैक्स अदा करती है. वर्तमान में बायो-डीजल की उत्पादन लागत लगभग 35 रुपए प्रति लीटर है. डीजल के बाज़ार भाव

से यह कम है, इसलिए उत्पादक इसे सीधे उपभोक्ता को बेचकर लाभ कमा सकता है. परंतु तेल कंपनियों द्वारा बायोडीजल का दाम लगभग 25 रुपए प्रति लीटर दिया जा रहा है, क्योंकि इन्हें इस पर टैक्स देना पड़ता है. अतः बायोडीजल की सीधी बिक्री की छूट देने से किसानों और फैक्ट्रियों के लिए बायोडीजल का उत्पादन करना लाभप्रद हो जाएगा. सीधे बिक्री की छूट देने पर सरकार को विचार करना चाहिए.

जेट्रोफा से बायोडीजल का उत्पादन वर्तमान में केवल बीज से हो रहा है. पौधे के तने में सेलुलोज होता है, जो कि ज्वलनशील होता है. परंतु सेलुलोज को ईंधन में परिवर्तित करने की तकनीक फिलहाल विकसित नहीं हुई है. यद्यपि इस पर वैश्विक स्तर पर शोध चल रहा है. सेलुलोज से उत्पादन हो जाए, तो बायोडीजल बनाने में लागत कम आयेगी. अतएव बायोडीजल के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए सरकार को इस रिसर्च को बढ़ावा देना चाहिए. इस समस्या का समाधान हो जाए, तो भी दूसरी समस्या बनी रहती है. जेट्रोफा द्वारा सूर्य की केवल 2 प्रतिशत ऊर्जा को बायोडीजल में परिवर्तित किया जाता है. इसकी तुलना में सोलर पैनल से 15 से 25 प्रतिशत ऊर्जा का संग्रह किया जा सकता है. अतः देश की ऊर्जा सुरक्षा के लिए बायोडीजल की तुलना में सोलर पैनल ज्यादा कारगर साबित होंगे. जेट्रोफा के स्थान पर सोलर पैनल लगाए जाएँ, तो ऊर्जा का उत्पादन अधिक होगा. इस ऊर्जा को बैट्री में संग्रह करके तेल ईंधन के स्थान पर उपयोग किया जा सकता है. बिजली से चलने वाली कारों का निर्माण शुरू हो चुका है. इस विकल्प को देखते हुये सेलुलोज से ईंधन बनाने की सफलता में भी संदेह उत्पन्न होता है, लेकिन इस तकनीक पर अगर कार्य किया जाए, तो इसे ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोत के रूप में देखा जा सकता है.

बायोफ्यूल का दूसरा स्त्रोत खाद्यान्न है. अमेरिका में उत्पादित लगभग 40 प्रतिशत मक्के का उपयोग बायोफ्यूल बनाने में किया जा रहा है. बायोफ्यूल का यह स्त्रोत हमारे लिए उपयोगी नहीं है, क्योंकि यह पहले ही खाद्य तेलों के लिए आयातों पर निर्भर है. बायोफ्यूल बनाने के लिए यदि सोयाबीन की खेती की जाएगी, तो खाद्यान्न और खाद्य तेलों के उत्पादन में गिरावट आएगी. खाद्य तेलों के लिए आयातों पर हमारी निर्भरता बढ़ेगी.

बायोफ्यूल का तीसरा स्त्रोत गन्ना है. चीनी बनाने की प्रक्रिया में मोलेसिस का उत्पादन होता है. इसमें कचरे के साथ कुछ मात्रा में चीनी भी विद्यमान रहती है. इस बची हुई चीनी से इथेनाल नामक ईंधन बनाया जाता है. लेकिन देश में उपलब्ध मोलेसिस की मात्रा सीमित है. इथेनाल का उत्पादन बढ़ाने के लिए गन्ने के रस का उपयोग चीनी बनाने के स्थान पर सीधे इथेनाल बनाने के लिए किया जा सकता है. गन्ने के उत्पादन के लिए अधिक भूमि का उपयोग करने से गेहूं और चावल का उत्पादन प्रभावित होगा. नागपुर में चीनी मिलों की एक लॉबी है. इस लॉबी द्वारा ज़ोर दिया जा रहा है कि सरकार

द्वारा इथेनाल को बढ़ावा दिया जाए. इथेनाल की मांग बढ़ेगी, तो इनका व्यापार और लाभ बढ़ेगा. इस लॉबी को इस बात की चिंता नहीं है कि इथेनाल के उत्पादन से देश की खाद्य सुरक्षा पर क्या प्रभाव पड़ेगा.

बायोफ़्यूल की सीमाओं को देखते हुये हमें ऊर्जा के दूसरों स्त्रोतों पर ध्यान देना होगा. दूसरा स्त्रोत कोयला का है, लेकिन समस्या यह है कि अपने देश में कोयले का भंडार सीमित है. अनुमान है कि डेढ़ सौ साल में हमारे भंडार समाप्त हो जाएंगे. इसके अतिरिक्त अच्छी क्वालिटी का कोयला निकाल लेने के बाद शेष की क्वालिटी नरम होगी. इसमें धूल मिट्टी ज्यादा होगी. घटिया कोयले से ऊर्जा के उत्पादन में लागत ज्यादा आयेगी. लेकिन अगले सौ वर्षों में ऊर्जा के अन्य स्त्रोतों का विकास हो सकता है. हमारे कोयला के भंडार समाप्त होने पर इन नए स्त्रोतों को अपनाया जा सकता है. इस जोखिम को उठाकर वर्तमान में कोयले से ऊर्जा के उत्पादन को बढ़ावा दिया जा सकता है. यहाँ समस्या कार्बन उत्सर्जन की है. इसके लिए प्राथमिकता देते हुए खेतों की मेड़ों पर वृक्षारोपण एवं जंगलों का संरक्षण करना चाहिए.

ऊर्जा का तीसरा स्त्रोत हाइड्रोपावर का है. इसके तमाम पर्यावरणीय दुष्प्रभावों एवं जनविरोधी चरित्र को देखते हुए वर्तमान में लगी इकाइयों को बंद करने अथवा इनके डिजाइन में परिवर्तन करने की जरूरत है.

ऊर्जा का चौथा स्त्रोत यूरेनियम आधारित परमाणु ऊर्जा है. कोयले की तुलना में यह साफ है; बशर्ते कि इन संयंत्रों को रिहायशी इलाकों से दूर लगाया जाए. लेकिन अपने देश में यूरेनियम कम ही पाया जाता है. अत: आयात पर निर्भरता बनी रहती है.

ऊर्जा का अन्य वैकल्पिक स्त्रोत थोरियम आधारित परमाणु ऊर्जा का है. हमारे देश में थोरियम का अपार भंडार उपलब्ध है. लेकिन थोरियम से परमाणु ऊर्जा बनाने की तकनीक अभी विकसित नहीं हुई है. चीन द्वारा विश्व का पहला थोरियम आधारित ऊर्जा संयंत्र बनाया जा रहा है. इस दिशा में अभी हम बहुत पीछे हैं.

सारांश यह है कि बीज आधारित बायोफ़्यूल, गन्ने से बना एथेनाल, हाइड्रो- पावर तथा यूरेनियम आधारित परमाणु ऊर्जा हमारे लिए उपयुक्त प्रतीत नहीं होते. देश की ऊर्जा सुरक्षा के लिए सेलुलोज आधारित बायोफ़्यूल और थोरियम आधारित परमाणु ऊर्जा हमारे पास विकल्प के रूप में उपलब्ध हैं. इनके रिसर्च को बढ़ावा देना चाहिए. कोयले का उपयोग कम करना चाहिए. विशेषकर शूगर लॉबी के दबाव में इथेनाल के उत्पादन को बढ़ावा देकर देश की खाद्य सुरक्षा को नष्ट नहीं किया जाना चाहिए.

विक्रांत कुमार महतो, सहायक प्रबंधक (राजभाषा), क्षेत्रीय कार्यालय, इलाहाबाद

नितिन गोसावी

कृषि विपणन

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसकी अधिकांश जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है. भारतीय कृषि का देश के कुल घरेलू उत्पाद में लगभग 25% योगदान है. चूंकि अन्न ही मानव जाति की सर्वोच्च जरुरत है, अत: कृषि उत्पाद को व्यावसायिक बनाने पर महत्व दिया जा रहा है. इसी कारण से अन्न का पर्याप्त उत्पादन तथा समान वितरण वैश्विक चिंता का प्राथमिक विषय है.

कृषि विपणन का मुख्य रूप से अर्थ है कृषि उत्पादों की खरीद तथा बिक्री. पहले गाँव की अर्थव्यवस्था लगभग आत्मनिर्भर थी और कृषि उत्पादों के विपणन में परेशानी नहीं होती थी; क्योंकि किसान अपना उत्पाद उपभोक्ता को पैसे या वस्तु के बदले वस्तु देकर बेचता था. आज के जमाने में कृषि विपणन को आदान-प्रदान से गुजरना पड़ता है, जिसमें मुख्य रूप से तीन प्रकार के कार्य शामिल हैं- उत्पाद इकट्ठा करना, उपभोग के लिये तैयार करना और उसका विपणन करना. किसी भी प्रकार के कृषि उत्पाद की बिक्री कुछ घटकों पर निर्भर है, जैसे कि उस समय उस उत्पाद की मांग, सामग्री की उपलब्धता आदि. बाजार में उत्पादों की सीधी बिक्री की जा सकती है अथवा स्थानीय तौर पर कुछ समय के लिये उसका संचय/ भंडारण किया जा सकता है. इसके अलावा यह कि खेत से प्राप्त उत्पाद उसी रूप में बेचा जा सकता है अथवा उसकी सफाई, वर्गीकरण एवं प्रक्रिया कर बेचा जा सकता है. कृषि उत्पादों पर उपभोक्ता की मांग के अनुसार और उसकी गुणवत्ता को सुरक्षित रखने के लिये अनेक प्रक्रियाएँ की जाती हैं. वितरण प्रणाली का यह काम है कि मांग के अनुसार प्राथमिक, द्वितीयक तथा अंतिम बाजार में माल की थोक अथवा खुदरा बिक्री करके मेल कराना (to match). भारत में अधिकतम कृषि उत्पाद किसानों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से साहूकार (जिससे वह ऋण लेते हैं) अथवा गाँव के व्यापारी को बेचे जाते हैं तथा उत्पादों की बिक्री विभिन्न बाजारों, साप्ताहिक बाजारों, मंडियों आदि

में होती है.

भारत में कई सरकारी संस्थाएं हैं, जो कृषि विपणन से जुड़ी हैं, जैसे कृषि लागत एवं मूल्य आयोग, भारतीय खाद्य निगम, भारतीय कपास निगम, भारतीय जूट निगम आदि. रबर, चाय, कॉफी, तम्बाकू, मसाले और सब्जियों के लिये विशेष विपणन संस्थाएं भी कार्यरत हैं.

वैज्ञानिक रूप से कृषि विपणन का मतलब- कृषि निवेशों की प्राप्ति तथा उत्पादों की खेती से लेकर उपभोक्ता तक उसकी पहुंच से जुड़ी सभी गतिविधियों, संस्थाओं तथा नीतियों का अभ्यास है. कृषि विपणन प्रणाली कृषि तथा गैर-कृषि क्षेत्रों को जोड़ने वाली कड़ी है. देश के आर्थिक विकास को बढ़ावा देने में कृषि विपणन की अहम भूमिका है. कृषि विपणन ही निर्णायक कीमत के इशारों को प्रसारित करता है.

कृषि उत्पाद बाजार समिति :

कृषि उत्पादों के विपणन को कृषि का एक अभिन्न अंग माना जाता है, क्योंकि यही कृषक को अधिक निवेश करने के लिये और उत्पादन बढ़ाने के लिये प्रोत्साहित करता है. आज किसानों में जागरुकता बढ़ती जा रही है. फसल एवं पशु उत्पादों का निर्माण करना ही काफी नहीं है; बल्कि उसका विपणन भी आवश्यक है. इस संबंध में कृषि विपणन को बढ़ावा देने में कृषि उत्पाद बाजार समिति की भूमिका निर्णायक होती है. देश के अधिकांश भागों में कृषि बाजारों की स्थापना राज्य कृषि उत्पाद बाजार समिति कानून के अंतर्गत हुई है तथा यह बाजार इसी कानून से विनियमित है. राज्य के सभी बाजार राज्य के भौगोलिक क्षेत्र के अनुसार विभाजित किए जाते हैं और राज्य सरकार द्वारा स्थापित बाजार समितियां इनका प्रबंधन करती हैं. एक बार यह क्षेत्र बाजार क्षेत्र के अंतर्गत आने पर कोई भी किसान अथवा संस्था मुक्त रूप से थोक विपणन गतिविधियां नहीं कर सकती. उसे समितियों के नियमों का पालन करना पड़ता है. सरकार द्वारा विनियमित थोक बाजारों के एकाधिकार ने प्रतियोगी विपणन प्रणाली के विकास को रोका है. कृषि उत्पाद बाजार समिति राज्य सरकार द्वारा स्थापित विपणन मंडल है. कृषक की उपज को बेचने तथा उचित मूल्य की प्राप्ति के लिये राज्य सरकार ने बहुत सारे शहरों में कृषि उत्पाद बाजार समिति की स्थापना की है. अधिकतर कृषि उत्पाद बाजार समिति में बड़े आँगन हैं, जिसमें व्यापारी तथा अन्य विपणन आढ़तियों को गोदाम एवं दुकान प्रदान किए गये हैं. कृषि उत्पाद बाजार समिति के पर्यवेक्षण में कृषक अपनी उपज व्यापारियों को बेच सकते हैं.

कृषि उत्पाद बाजार समिति में उत्पादों का प्रवाह

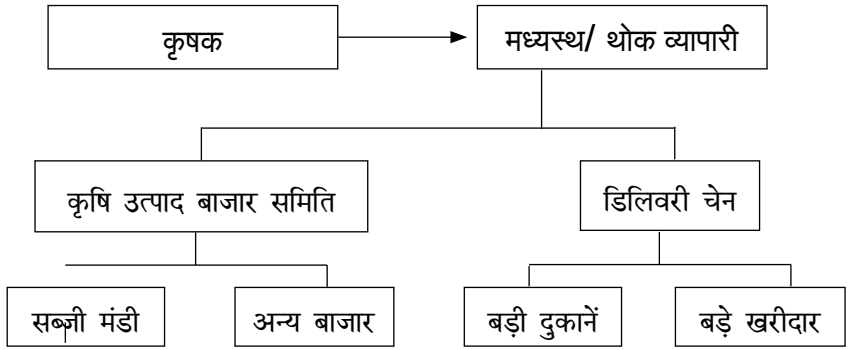

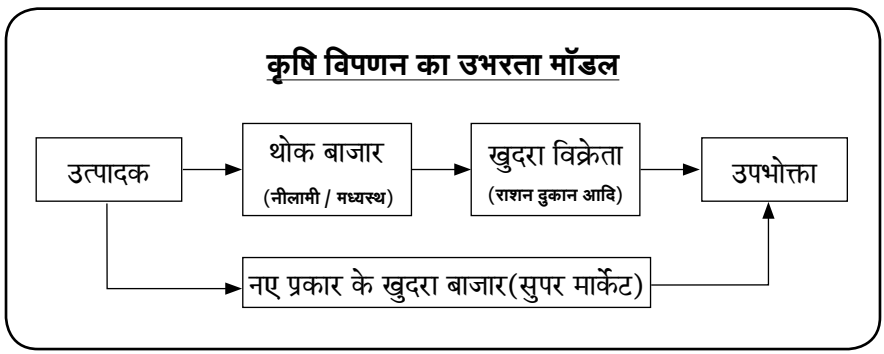

कृषि विपणन का उभरता मॉडल

कृषि विपणन के कार्य:

1. संकेंद्रण
2. ग्रेडिंग
3. प्रसंस्करण
4. भंडारण
5. पैकेजिंग
6. वितरण

कृषि विपणन के लिये बुनियादी सुविधाओं की जरुरत:

1. उचित भंडारण सुविधाएं
2. पर्याप्त धारण क्षमता
3. पर्याप्त एवं सस्ती परिवहन सुविधाएं
4. उचित जानकारी प्रणाली
5. कम से कम मध्यस्थ

भारत में कृषि विपणन के दोष:

1. अपर्याप्त भंडारण सुविधाएं
2. कम इंतजार की क्षमता
3. परिवहन की खराब स्थिति
4. पर्याप्त गोदाम तथा भंडारण की कमी
5. अधिकाधिक मध्यस्थों की उपस्थिति

कृषि विपणन क्षेत्र में सरकार द्वारा किए गये उपाय:

1. विपणन का सर्वेक्षण
2. ग्रेडिंग और मानकीकरण प्रणाली का विकास तथा मजबूतीकरण
3. विनियमित बाजारों की स्थापना तथा कृषि विपणन प्रणाली का मजबूतीकरण
4. भंडारण सुविधाओं के प्रावधान को मजबूत बनाना
5. सहकारी विपणन प्रणाली का संगठन
6. विशेषीकृत मंडल तथा संगठनों की स्थापना
7. विपणन अनुसंधान एवं जानकारी प्रसार योजना
8. कृषि विपणन सुधारों पर अंतर मंत्रालयी टास्क फोर्स की नियुक्ति
9. राष्ट्रीय कृषि बाजार का निर्माण

राष्ट्रीय कृषि बाजार:

राष्ट्रीय कृषि बाजार एक अखिल भारतीय इलेक्ट्रोनिक ट्रेडिंग पोर्टल है, जिसने मौजूदा कृषि उपज विपणन समितियों (एपीएमसी) और अन्य कृषि मंडियों को नेटवर्क से जोड़कर एक विशाल बाजार का निर्माण किया है. राष्ट्रीय कृषि बाजार कहने को तो एक 'वर्चुअल' बाजार है, लेकिन यह किसी भी किसान/व्यापारी को देश की किसी भी कृषि मंडी में सामान खरीदने व बेचने की सहूलियत देता है.

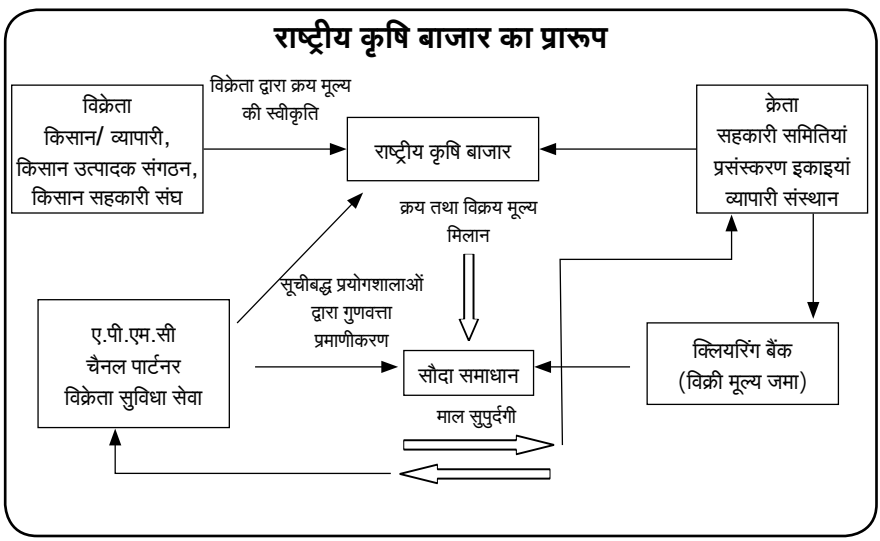

आनंद (अमूल) का विपणन प्रारूप - मध्यस्थों का उन्मूलन करके किसानों को अपनी उपज की कीमत दिलाने में एक यशस्वी पैटर्न भारत की सबसे बड़ी खाद्य उत्पाद विपणन संस्था - गुजरात सहकारी दूध वितरण महासंघ लिमिटेड है.

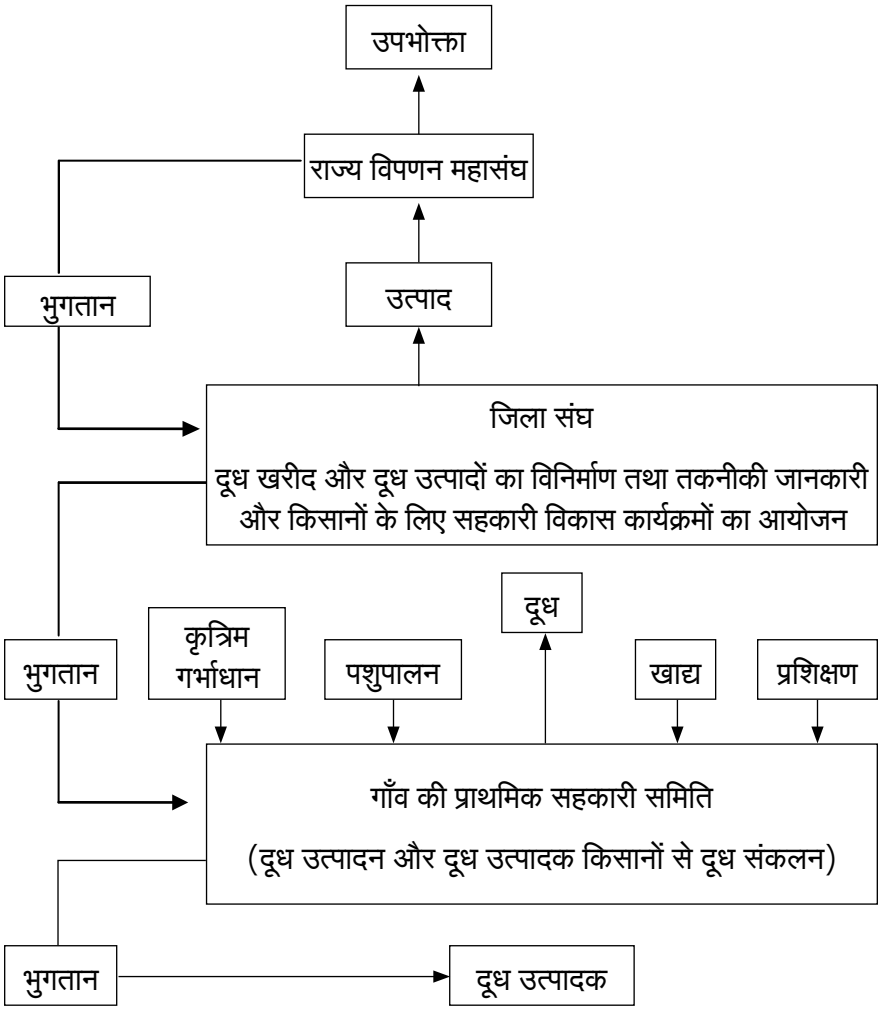

नितिन गोसावी, प्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय, कोल्हापुर

श्री दयानंद चौधरी

भारत में कृषि उत्पाद बाज़ार

वक्त कहां से कहां आ गया. विपणन, वस्तु विनिमय से मुद्रा विनिमय में कब तब्दील हो गया; पता ही नहीं चला. नयी पीढ़ी के लिए तो यह कहानी हो गयी. भारतीय कृषि की प्रथम हरित क्रांति से देश खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो गया. दूसरी हरित क्रांति का उद्देश्य किसानों की आय बढ़ाना है. इसके लिए राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर मण्डी/ कृषि बाजार का जाल सम्पूर्ण देश में बिछाया गया है, जिससे किसानों को अपने उत्पाद का उचित मूल्य मिले और उपभोक्ता सही मूल्य पर वांछित उत्पाद प्राप्त करे. दोनों को संतुष्टि का अनुभव हो.

भारतवर्ष की अर्थव्यवस्था में कृषि का अहम योगदान है. सकल घरेलू उत्पाद में कृषि और सम्बद्ध गतिविधियों का योगदान लगभग 25% है. वर्ष 2011-12 के सापेक्ष वर्ष 2015-16 में कृषि और सम्बद्ध गतिविधियों की जीवीए (जीवीए=जीडीपी- अप्रत्यक्ष कर + सब्सिडी) में भागीदारी 15.35% है. किसी भी कृषि उत्पाद का महत्व उसके क्षेत्र विशेष की गुणवत्ता, माँग और विपणन से आंका जाता है. भारत मसाला और मसाला उत्पादों का सबसे बड़ा उत्पादक, उपभोक्ता और निर्यातक है. भारत फल उत्पादन के क्षेत्र में विश्व में दूसरा स्थान रखता है. निर्यात के क्षेत्र में कृषि उत्पाद का योगदान कुल निर्यात का 10% है और निर्यात होने वाली सामग्री में कृषि उत्पाद का स्थान चौथा है. स्पष्ट है कि कृषि बाजार जितना सशक्त होगा, भारत और कृषक की आर्थिक संपन्नता उतनी बढ़ती जाएगी .

1. **कृषि उत्पाद बाजार के प्रकार:** भारतीय कृषि बाजार को व्यापक रूप से तीन संवर्गों में विभक्त क़िया जा सकता है.

   i. थोक बाजार

II. खुदरा बाजार

III. बाजार मेला

i. **थोक बाजार:** वास्तव में कृषि उत्पादों का संग्रह सह वितरण केंद्र है. थोक बाजार को भी तीन उप- भागों में विभाजित किया जा सकता है.

अ) प्राथमिक थोक बाजार: यह बाजार साप्ताहिक या सप्ताह में दो बार लगता है, जहां नजदीक के गाँवों से कृषि उत्पाद संग्रहित होते हैं.

आ) सहायक थोक बाजार: इसे मण्डी भी कहते हैं. यह तालुका या जिला मुख्यालय में बनाया गया है. यहां छोटे व्यापारी प्राथमिक थोक बाजार से क्रय किया कृषि उत्पाद विक्रय करते हैं या बड़े किसान अपने उत्पाद के सीधे विक्रय हेतु आते हैं.

इ) टर्मिनल बाजार: इस वृहत् बाजार से कृषि उत्पाद उपभोक्ता के पास जाता है, फूड प्रोसेसर के पास जाता है या संग्रहित एवं पैकिंग कर निर्यात कर दिया जाता है.

ii. **खुदरा बाजार:** खुदरा बाजार में छोटे व्यापारी, थोक बाजार से कृषि उत्पाद लाकर विभिन्न कस्बों, मुहल्लों, चौक-चौराहों या स्टोरों पर खुदरा दुकान के माध्यम से उपभोक्ताओं को बेचते हैं.

iii. **मेला:** विभिन्न मौसम या धार्मिक अवसर पर इस बाजार में विभिन्न फल, फूल विशेष रूप से परिष्कृत सब्जियां एवं परिष्कृत भोज्य व स्वास्थ्यवर्धक पदार्थ बेचे जाते हैं. आजकल स्वयं सहायता समूह अपने कृषि उत्पाद के साथ बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रहे हैं.

वैसे कृषि बाजार को क्षेत्र, सुविधा, अवधि के अनुसार भी विभक्त किया जाता है. इसके तहत लगभग सभी बड़े मध्यम शहरों में निजी कंपनियां विभिन्न मॉलों में अपने-अपने स्टोर के माध्यम से कृषि उत्पादों के विक्रय में काफी रूचि ले रही हैं.

2. भारतीय कृषि बाजार का आकार: भारतीय कृषि बाजार उपभोक्ताओं की आय में वृद्धि, देश में फूड प्रोसेसिंग क्षेत्र में विस्तार और कृषि उत्पाद के निर्यात में वृद्धि, निजी क्षेत्र की रूचि, जैविक कृषि उत्पाद की मांग और उपज तथा तकनीक के विकास के कारण उत्तरोत्तर विकास के मार्ग पर प्रशस्त हैं.

फसली वर्ष 2015-16 में लगभग 252.23 मिलियन टन अनाज और 17.06 मिलियन

टन दालों का उत्पादन हुआ. 146.31 मिलियन टन उत्पादन के साथ भारत दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में विश्व में शीर्ष स्थान पर है. भारत 'चीनी' का द्वितीय सर्वाधिक उत्पादक देश है और छठा बड़ा निर्यातक है. भारत नारियल उत्पादन और उत्पादकता दोनों में विश्व के शीर्ष श्रेणी में अपना स्थान रखता है. वर्ष 2015-16 हेतु जारी रिपोर्ट के अनुसार वार्षिक उत्पादन रु.2044 करोड़ नारियल तथा प्रति हेक्टेयर उत्पादकता 10345 नारियल है. भारतीय एग्रो केमिकल उद्योग का उत्पादन 7.5% की दर से बढ़ रहा है और 2020 तक वार्षिक 6.5% घरेलू माँग तथा 9% निर्यात मांग के अनुमान पर इसे अमेरिकी $6.3 बिलियन तक पहुंचने का अनुमान है.

3. **कृषि उत्पाद में निवेश:**- देश के साथ विदेशी निवेशकों ने भी कृषि उत्पाद क्षेत्र में निवेश करने की रुचि दिखाई है. कुछ मुख्य निवेशक इस प्रकार हैं:-

   - यूके आधारित इंटरटेक समूह, जो हैदराबाद में एग्रीटेक प्रयोगशाला लगा रहा है.
   - भारत का एफएमसीजी के क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभा रहा आईटीसीलि. आन्ध्र प्रदेश में कृषि व्यवसाय हब बना रहा है.
   - महिंद्रा एंड महिंद्रा, जो ट्रैक्टर और कृषि मशीन निर्माण में अग्रणी भूमिका में है, दाल के खुदरा व्यापार में 'नूप्रो' ब्राण्ड के साथ आ रहा है. साथ ही दुग्ध उत्पाद के ई-रिटेल में प्रवेश हेतु इच्छुक है.
   - इफको ने जापानी फर्म मित्सुबिशी के साथ संयुक्त उद्यम के तहत एग्रो केमिकल उत्पादन हेतु हाथ मिलाया है.

   इस प्रकार अनेक देशी एवं विदेशी कंपनियां भारतीय कृषि बाजार में कृषि उत्पाद की बढ़ोत्तरी और मांग को देखते हुए अपनी संभावनाएँ तलाशने हेतु जुड़ रही हैं.

   भारत सरकार भी कृषि को विशेष महत्व देते हुए 2022 तक कृषि आय को दोगुना करने के लिए वृहत् कार्यक्रम को अंजाम देने मे लगी है.

4. **समेकित कृषि विपणन योजना (Integrated Scheme for Agriculture Marketing-ISAM):** उपभोक्तओं द्वारा अधिक भुगतान के बावजूद किसानों को कम मूल्य पर कृषि उत्पाद बेचने को बाध्य होना पड़ता है. इस समस्या से निपटने के लिए भारत सरकार कृषि मंत्रालय, कृषि एवं सहकारिता

विभाग ने सभी राज्य सरकारों को कृषि विपणन अधिनियम में राष्ट्रीय कृषि विपणन के अनुकूल परिवर्तन के निर्देश दिए हैं. इस प्रकार कृषि विपणन एक ही नियमन, जो समेकित कृषि विपणन योजना है, के तहत संचालित होंगे.

समेकित कृषि विपणन योजना, बारहवीं पंचवर्षीय योजना (वर्ष2012-2017) के अनुसार निर्मित है. इसमें पांच प्रमुख उप योजनाएँ शामिल हैं.

(I) कृषि बाजार बुनियादी ढाँचा

(II) विपणन अन्वेषण एवं सूचना नेटवर्क

(III) कृषि बाजार ग्रेडिंग सुविधा का सुदृढ़ीकरण

(IV) कृषि व्यवसाय के माध्यम से उद्यम पूंजी का सहयोग और प्रोजेक्ट विकास सुविधा तथा

(V) चौधरी चरण सिंह कृषि विपणन संस्थान

सभी उप योजनाओं के लिए विस्तृत दिशानिर्देश दिए गए हैं.

5. **राष्ट्रीय कृषि बाजार (National Agriculture Market-NAM)**: राष्ट्रीय कृषि बाजार की परिकल्पना के तहत कृषि उत्पाद बाजार समिति को पूरे भारत वर्ष को इलेक्ट्रॉनिक पोर्टल के नेटवर्क से जोड़ा गया है, जिससे अप्रत्यक्ष बाजार के साथ प्रत्यक्ष रूप में विद्यमान मंडी भी आपस में विपणन हेतु जोड़ी गयी हैं.

'नाम' (NAM) के माध्यम से देश के सभी राज्यों की मंडियों को ऑनलाइन जोड़ने की योजना है. इसके तहत सभी राज्यों के क्रेता बाजार की स्थिति जान सकते हैं और क्रय-विक्रय कर सकते हैं.

'नाम' एक इलेक्ट्रानिक ट्रेडिंग प्लेटफार्म है, जिसकी स्थापना भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के निवेश से हुई है. यह राज्यों में स्थित बाजार प्रांगणों (नियामक या निजी-सभी) के लिए, जो इससे सम्बद्ध हैं; के लिए एक "प्लग-इन" प्रदान करता है, जिसके माध्यम से सभी राज्यों की सम्बद्ध मंडियां आपस में जुड़ रही हैं.

राष्ट्रीय कृषि बाजार ('नाम') से लाभ:

i. देश भर के किसान व्यापारी कृषि उत्पाद का अंतर्राज्यीय भाव जानकर मजबूरन क्रय-विक्रय से बच सकते हैं.

ii. किसान को बिचौलियों की ठगी से बचने में मदद होगी.

iii. किसान अपनी लागत और मंडी के वर्तमान भाव जानकर ही मंडी जाएंगे तथा व्यापारी से उचित मूल्य पा सकेंगे.

iv. व्यापारी को भी स्वस्थ मोल-भाव करने में आसानी होगी.

v. यहां तक कि किसान घर बैठे भी उचित मूल्य पाने में सक्षम होंगे. उनका समय भी बचेगा और वह आगे की कार्ययोजना भी बना सकते हैं कि उनकी मिट्टी के अनुसार आगे कौन सा कृषि उत्पादन करने में लाभ है.

vi. परिष्कृत बीज, खाद आदि कृषि के लिए उपयोगी सामान भी घर बैठे मंगा सकते हैं.

vii. किसान, व्यापारी, उपभोक्ता, राज्य व केंद्र सरकार सभी के लिए नाम, मुख्य कृषि उत्पाद के लिए समन्वित व संवर्धित कड़ी बनाकर सब को आपस में जोड़ेगा, जिससे कृषि उत्पाद के वैज्ञानिक संग्रहण, संचालन में सुविधा से देश के हर कोने में विभिन्न कृषि उत्पाद उचित मूल्य पर सुलभ होंगे.

विभिन्न राज्य निम्नांकित शर्तों को पूराकर अपनी मंडियों को राष्ट्रीय कृषि बाजार से जोड़ सकते हैं:-

a) इलेक्ट्रॉनिक ट्रेडिंग हेतु विशेष व्यवस्था

b) राज्य की सभी मंडियों में ट्रेडिंग हेतु एकल ट्रेडिंग लाइसेंस एवं

c) कारोबार फीस की लेवी हेतु एकल प्वाइंट

वर्तमान मे सैद्धांतिक स्तर पर कुल 12 राज्यों/ केंद्र शासित राज्यों से जुड़ी 365 मंडियों को e-NAM से जोड़ा गया है. अभी तक जोड़े गए राज्यों और उनकी मंडियों की संख्या इस प्रकार है:-

1. आंध्र प्रदेश -12 मंडियां

2. चंडीगढ़ - 01 मंडी

3. छतीसगढ़ -05 मंडियां

4. गुजरात - 40 मंडियां

5. हरियाणा - 54 मंडियां

6. हिमाचल प्रदेश - 19 मंडियां

7. झारखंड - 19 मंडियां

8. मध्य प्रदेश - 50 मंडियां

9. महाराष्ट्र - 30 मंडियां

10. राजस्थान - 25 मंडियां

11. तेलंगाना - 44 मंडियां

12. उत्तर प्रदेश - 66 मंडियां

पायलट ट्रेडिंग के तहत 14 अप्रैल, 2016 को 24 कृषि उत्पादों की आठ राज्यों स्थित 21 मंडियो को इ नाम के पोर्टल से जोड़ा गया. सितम्बर 2016 तक लगभग 200 मंडियो को इ नाम से जोड़ने की सूचना है. www.enam.gov.in

6. **एग्री मार्केट:** इसका नारा है, "सबको सही मोल" और बात भी सही है. यदि कोई क्रेता, विक्रेता या प्रचारक एग्री मार्केट के पोर्टल का उपयोग अपनी आवश्यकता के अनुसार करना चाहता है, तो KisanMandi.com पर ऑनलाइन जाकर इसका उपयोग कर सकता है. यह सेवा किसानों के लिए शत प्रतिशत मुफ्त है.

अब किसान इस पोर्टल के माध्यम से अपने उत्पाद सीधे उपभोक्ता, संस्थान, को-आपरेटिव सोसाइटी या किसी भी समूह को सीधे बेचकर बेहतर आय अर्जित कर सकता है. इतना ही नहीं, कृषि कार्य हेतु मशीनें और अन्य उपकरण सीधे वितरक या निर्माता से उचित मूल्य पर मंगवाए जा सकते हैं.

इन कार्यों को सुगमतापूर्वक निष्पादित करने के लिए इन्हें तीन पोर्टलों में विभक्त किया गया है.

अ) **खुदरा: बी 2 सी:** यह भारत के मुख्य शहरों हेतु ऑनलाइन सब्जी स्टोर के लिए समर्पित है.

आ) **ऑनलाइन किसान (थोक बिक्री): बी 2 बी:** इस पोर्टल पर किसान अपने कृषि उत्पाद को विक्रय हेतु प्रस्तुत कर सकता है.

इ) **विक्रेता (चैनल पार्टनर):** यह ऑन लाइन पोर्टल निर्माता/ बड़े वितरकों

के लिए है; जिसके माध्यम से वे किसानों को कृषि-मशीन और कृषि उत्पाद सहायिकी सीधे बेच सकते हैं.

7. **भारत में कृषि बाजार का भविष्य:** भारतीय कृषि बाजार एक नया सबेरा लिए प्रगति के पथ पर आधुनिक टेक्नोलॉजी पर सवार होकर चल पड़ा है. कृषि हेतु ढाँचागत सुविधा यथा- सिंचाई, वेयर हाउस, कोल्ड स्टोरेज, कूल चेन, पोर्ट गेट प्रबंधन, टीशू-कल्चर, पॉली हाउस, अन्वेषण एवं विकास, नई वैज्ञानिक खेती तथा बाजार हेतु नेटवर्किंग में निवेश से अगले कुछ वर्षों में कृषि एक लाभप्रद व्यवसाय में तब्दील होने जा रही है.

नीति आयोग द्वारा जारी रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2016-17 में कृषि क्षेत्र में लगभग 6% विकास की सम्भावना है. 12वीं पंचवर्षीय योजना में अनाज गोदाम की क्षमता 35 मीट्रिक टन बढ़ाई गयी है.

उपयुक्त दर्शाये गये आँकड़े और तथ्य इस बात के संकेत हैं कि भारतीय कृषि बाजार देश, कृषक और युवा भारत के लिए आर्थिक समृद्धि का द्वार खोलने को तैयार है. बैंकों के लिए यह एक स्वर्णिम संदेश है, जहां कृषि क्षेत्र में अपनी साख बढ़ाकर ऋण का विकेंद्रीकरण कर, बैंक अपना जोखिम कम कर सकता है. इससे बैंकों की सेवा क्षेत्र और कॉरपोरेट पर निर्भरता घटेगी, जहां मंदी के कारण तनाव युक्त साख बैंकों की लाभप्रदता और पूंजी पर्याप्तता को प्रभावित कर रही है.

आइए, तकनीक युक्त भारतीय कृषि बाजार का लाभ उठाएं और किसानों युवाओं को कृषि रोजगार की ओर उन्मुख कर भारतीय अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में अपना योगदान दें.

श्री दयानंद चौधरी, सहायक महाप्रबंधक, जोखिम प्रबंधन विभाग, केंद्रीय कार्यालय, मुंबई

प्रदीप सिंह

हाइटेक कृषि

हाइटेक कृषि की जब भी बात आती है, तो मस्तिष्क में दो विचार कौंधते हैं: एक यह कि ऐसी कृषि, जिसमें उच्च तकनीक का प्रयोग कर कम समय में, कम से कम जगह में, कम से कम संसाधनों से अधिक से अधिक, उत्तम एवं अधिक उत्तम पैदावार प्राप्त करना है.

दूसरा, पारंपरिक कृषि से अलग हटकर इसे ज्ञान आधारित कृषि भी कहा जाता है. कृषि में उत्पादन को बढ़ाने के सहायक संसाधन उपकरण हो सकते हैं या फिर कृषि उत्पादों की गुणवत्ता एवं उत्पादन को बढ़ाने के लिए वैज्ञानिक तकनीकों का प्रयोग किया जाता है.

ये दोनों ही हाई-टेक कृषि के प्रमुख आधार हैं. निश्चित रूप से इसका प्रमुख उद्देश्य कृषि को एक समृद्ध व्यापार, कारोबार का स्थान प्रदान करना एवं जनसंख्या के लिए पर्याप्त उत्पादन करना है. इसमें उच्च गुणवत्ता और उच्च पैदावार हेतु तराई, खाद देना और पेस्ट कंट्रोल इत्यादि कार्यों में भी कम्प्यूटर तकनीक और आटोमेशन को सुनिश्चित करना होता है.

जहां उच्च श्रेणी के आधुनिकतम उपकरणों यथा तराई के उपकरण, बुआई के उपकरण, आधुनिक ट्रैक्टर, कटाई के आधुनिक उपकरण, कीटनाशक छिड़कने के उपकरण इत्यादि का कृषि कार्य में प्रयोग खेती को सरल तो बनाता है; परंतु खेती की भूमि का शत प्रतिशत उपयोग सुनिश्चित नहीं करता है और न ही साल भर भूमि का लाभ फसल को फसल चक्र के अनुसार बदल- बदल कर प्राप्त किया जाता है. वहीं वैज्ञानिक तरीके से की जाने वाली कृषि में कम कृषि भूमि का प्रयोग किया जाता है.

उच्च तकनीकी कृषि में प्रारंभ में इस प्रकार की कृषि के लिए मूलभूत

सुविधाओं को तैयार करने और तकनीकी शिक्षा उपलब्ध कराने में काफी मात्रा में पूंजी की आवश्यकता होती है. इसमें प्रयोग में लाई जा रहीं तकनीकों में ग्रीन हाउस, पॉली हाउस, हाइड्रोपोनिक्स, एयरोपोनिक्स प्रमुख हैं.

ऐसे शहरों में, जहां जनसंख्या का घनत्व बहुत अधिक है और कृषि के लिए भूमि बहुत कम है या बहुत अधिक मंहगी है, वहां पर ये सभी तकनीकें बेहद सफल एवं लाभदायक हैं. कई देशों में इन्हें अपनाया भी जाता है. यूरोप और उत्तरी अमेरिका में ऐसी कृषि को विशेष महत्व दिया जाता है और इन तकनीकों को अपनाने में जापान और सींगापुर अन्य देशों से कहीं आगे हैं. इन तकनीकों को अपनाने एवं इनके प्रचार प्रसार का प्रमुख उद्देश्य है किसानों को आधुनिक विकास की ओर मोड़ना, उन्हें किसान से एक कारोबारी बनाने हेतु कृषि को व्यापार का एक रूप देना है. ऐसी तकनीकों से हुई पैदावार की गुणवत्ता एवं उत्पादों की हर मौसम में उपलब्धता के कारण या तो स्थानीय बाजारों में बिक्री बनी रहती है या फिर उन्हें मुनाफे के लिए अन्य देशों में निर्यात किया जाता है. वास्तव में ये तकनीकें विश्व में बढ़ती जनसंख्या की खाद्य आपूर्ति की मांग पूरा करने के लिए भी बेहद महत्वपूर्ण हैं.

ग्रीन हाउस

हरित गृह या ग्रीन हाउस जिसे ग्लास हाउस भी कहा जाता है, एक भवन के रूप में होता है, जहां पौधों को उगाया जाता है. यह विधि रोमनकाल में अस्तित्व में आई थी. टाइबेरियस नाम के एक रोमन सम्राट को ककड़ी खाने का बेहद शौक था और वह रोज एक ककड़ी जैसी सब्जी खाता था. प्रति दिन उनकी मेज पर उसकी उपलब्धता के लिए उस सब्जी को कृत्रिम तरीके से किसान उगाने लगे थे और वह स्थान, जहां वे ऐसी कृषि करते थे, दुनिया के वे प्रारंभिक ग्रीन हाउस थे. 13वीं शताब्दी में इटली देश में पहला आधुनिक ग्रीन हाउस बनाए जाने की जानकारी मिली है. आज हॉलैंड, जिसे नीदरलैंड भी कहा जाता है, में दुनिया के सबसे बडे ग्रीन हाउस, लगभग 1500 वर्ग हेक्टेयर जमीन पर फैले हैं और उनमें से कुछ इतने विशाल हैं कि वे हर साल लाखों की मात्रा में सब्जियों के उत्पादन में सक्षम हैं.

ग्रीन हाउस संरचनाओं में कांच या पॉलीथीन फिल्म की चौड़ी चादरों का प्रयोग होता है, जिनसे उत्पादक ग्रीन हाउस बनाते या बनवाते हैं. एल्युमीनियम, जस्ते के अरने से उसके आवरण वाली इस्पात की टयूबिंग या उपयुक्त लंबाई की पानी की स्टील या पीवीसी पाइप के उपयोग से इनके निर्माण की लागत में काफी कमी हो गई है. इसीलिए लघु खेतों और उद्यानों में भी अधिक से अधिक ग्रीन हाउसों का निर्माण हुआ है.

ग्रीन हाउस में कांच या प्लास्टिक की छत और दीवारों की एक संरचना होती है, जो भवन के समान होती है. ये ग्रीन हाउस अंदर से बेहद गर्म होते हैं, क्योंकि सूर्य की इन्फ्रारेड किरणों की तीव्र उर्जा को मिट्टी, पौधों और भवन के भीतर स्थित अन्य चीजों द्वारा अवशोषित किया जाता है; क्योंकि ये कांच पारदर्शी होने के कारण इन विकिरणों को सीधे अंदर आने देते हैं और भीतर गरम संरचनाएं और पौधे इस ऊर्जा को पुनः विकीर्ण करते हैं, जो कांच से बाहर नहीं जा पाती है और यह ऊर्जा ग्रीन हाउस के भीतर ही कैद हो उष्णता पैदा करती है, जो अंदर पौधों को प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में बेहद सहायक होती है. आधुनिक तकनीक से गर्म आंतरिक सतहों के ताप से गरम हुई हवा को छत और दीवार द्वारा इमारत के अन्दर बरकरार रखा जाता है. इन ग्रीन हाउसों की संरचनाओं का आकार छोटे से शेड से लेकर बहुत बड़ी इमारतों तक हो सकता है.

ग्रीन हाउस कांच के या प्लास्टिक के हो सकते हैं. कांच के व्यावसायिक ग्रीन हाउस में अक्सर सब्जियों या फूलों के लिए उच्च तकनीक वाली उत्पादन सुविधाएं होती हैं. कांच के ग्रीन हाउस पूर्ण तकनीकी उपकरणों यथा स्क्रीनिंग स्थापना, गर्म करने, ठंडा करने, प्रकाशमान करने जैसे उपकरणों से परिपूर्ण होते हैं, जिन्हें एक कंप्यूटर द्वारा स्वचालित एवं नियंत्रित किया जा सकता है.

कांच का ग्रीन हाउस अंदर की ओर हवा के प्रवाह को रोकने का काम करता है, जो पौधों और इसके अंदर की जमीन दोनों को गर्म करता है. यह जमीन के पास की हवा को गर्म करता है और तापमान उल्लेखनीय रूप से काफी नीचे आ जाता है.

पौधों के विकास हेतु शेल्टर देने और आवश्यक वातावरण प्रदान करने के लिए ग्रीन हाउस बनाए जाते हैं. इन ग्रीन हाउस को ग्लास हाउस भी कहा जाता है.

विशेष भवनों में तापमान और आद्रता के मानक स्तर को बनाए रखने के लिए आटोमेशन डिवाइसों और कम्प्यूटरों की सहायता ली जाती है. बाजार मांग को पूरा करने के लिए पैदावार को बढ़ाने एवं गुणवत्ता में सुधार हेतु विद्यमान तकनीक में सुधार एवं विकास हेतु सतत रूप से आवश्यकता एवं बाजार के अनुसार रिसर्च किया जाता है.

सिंगापुर के कई शहरों यथा, नी सूं, लूम चू कांग, मंदाई इत्यादि में ऐसे फार्मों को, जहां हाई तकनीक से कृषि की जाती है, को एग्रोटेक्नोलॉजी पार्क का नाम दिया गया है. ये पार्क लगभग 1500 हेक्टेयर आकार के भी होते हैं.

इसके लाभों में सबसे महत्वपूर्ण लाभ यह है कि कृषि के अतिरिक्त अन्य आय स्त्रोत के रूप में उपयोग के लिए किसान के पास भूमि उपलब्ध रहती है, जिससे उसकी आय में अपेक्षित वृद्धि हो सकती है. ऐसी पैदावार को और अधिक जनप्रिय या किसान

प्रिय बनाने में उस जगह रहने वाले नागरिकों का सबसे बडा सहयोग रहता है; क्योंकि वे यहां पैदा की जाने वाली उपज का उपभोग कर अप्रत्यक्षरूप से किसानों की मदद करते हैं और ऐसे में किसान को अपनी पैदावार को बेचने के लिए यहां-वहां नहीं दौड़ना होता है. हाइटेक कृषि का सबसे कठिन भाग है इसमें लगने वाली बड़ी पूंजी या निवेश. ऐसी कृषि में काम करने वाले कामगारों की यदि आवश्यकता हो, तो आवश्यक है कि वे ऐसे कार्यों में दक्ष हों, शिक्षित हों; परंतु ऐसे कामगारों का उपलब्ध होना काफी कठिन कार्य है. ये सामान्य किसानों को उपलब्ध नहीं होते हैं. यदि उपलब्ध हों भी, तो उनके वेतन या पारिश्रमिक काफी अधिक होते हैं. अधिक निवेश या पूंजी के कारण ऐसी कृषि के उत्पादों की आयात किये जाने वाले सस्ते कृषि उत्पादों के साथ प्रतिस्पर्धा बनी रहती है. यदि सामान्य कामगार रखें जाएं, तो हाइटेक किसानों को इन्हें ऐसी कृषि पर आधारित शिक्षा कार्यक्रमों में शिक्षित करना होता है. अत: स्वयं किसानों को ही ऐसे कार्यक्रमों में शिक्षित कर, रेस्त्रां खोलने एवं फार्म तैयार करने का प्रशिक्षण देकर समृद्ध बनाया जा सकता है.

कीटनाशकों का प्रयोग लगभग शून्य होता है; क्योंकि पौधों को ग्रीन हाउस में रखा जाता है, जिसमें कीड़ों एवं पतंगो का प्रवेश असंभव है. ऐसी कृषि में खेत की सीमित आवश्यकता के कारण भूमि का बचाव होता है और जल की बचत भी हो जाती है. पौधों की जड़ों को सीधे जल से ही सींचा जाता है, जिससे पानी के अनावश्यक व्यय को रोका जाता है. आकार में छोटे और सीमित आवश्यकताओं के चलते हाइटेक फार्म सामान्यतया बाजार के समीप होते हैं, जिससे पैदावार, उत्पादों के परिवहन में आसानी होती है तथा ईंधन में बचत होती है.

ग्रीन हाउस बहुत अधिक गर्मी या सर्दी से फसलों की रक्षा करते हैं, धूल और बर्फ के तूफानों में पौधों की ढाल बनते हैं और कीटों को बाहर रखने में भी मददगार होते हैं. प्रकाश और तापमान नियंत्रण की वजह से ग्रीन हाउस कृषि हेतु अयोग्य भूमि को कृषि योग्य भूमि में बदल देता है, जिससे औसत पर्यावरण में खाद्य उत्पादन की स्थिति में सुधार होता है.

चूंकि ग्रीन हाउस में कुछ फसलों को साल भर उगाया जा सकता है, इसलिए ग्रीन हाउस उच्च अक्षांश रेखा पर स्थित देशों में खाद्य आपूर्ति के मामले में तेजी से लोकप्रिय होते जा रहे हैं. दुनिया के सबसे बड़े ग्रीन हाउसों में एक ग्रीन हाउस स्पेन के अल्मरिया का ग्रीन हाउस है, जो लगभग 50,000 एकड़ (200 वर्ग किमी) आकार का है. एक साथ बने गीन हाउस चूंकि भूमि पर अजीबोगरीब आकार प्रदर्शित करते हैं, तो इन्हें कभी-कभी प्लास्टिक का समुद्र भी कहा जाता है.

ग्रीन हाउसों का उपयोग अक्सर फूल, फल, तंबाकू और सब्जियों के पौधे उगाने

में होता है. अधिकांश ग्रीन हाउस परागसेचन में परागण के लिए भौंरों का उपयोग किया जाता है. हालांकि कृत्रिम परागण के साथ-साथ मधुमक्खी की अन्य प्रजातियों का भी उपयोग किया गया है. ग्रीन हाउसों में हाइड्रोपोनिक्स अर्थात जल संवर्धन विधि का प्रयोग किया जा सकता है, ताकि आंतरिक स्थान का श्रेष्ठतम उपयोग हो सके.

सर्दियों के अंत और बसंत ऋतु के प्रारंभ में ग्रीन हाउसों में कई सब्जियों और फूलों को उगाया जाता है और फिर मौसम के गर्म होने के बाद बाहर प्रतिरोपित किया जाता है. कुछ फसलों की किस्मों जैसे टमाटर का उपयोग आमतौर पर वाणिज्यिक उत्पादन के लिए किया जाता है.

ग्रीन हाउस के तापमान और नमी की लगातार जांच होनी चाहिए, ताकि सर्वोत्कृष्ट स्थिति को सुनिश्चित किया जा सके. इसके लिए दूर से आंकड़े इकट्ठा करने के लिए वायरलेस सेंसर नेटवर्क का उपयोग किया जा सकता है. ये आंकड़े एक नियंत्रण स्थान में संचारित किये जाते हैं और इनका उपयोग गर्म करने, ठंडा करने और सिंचाई प्रणालियों के लिए किया जाता है.

पॉली हाउस

पॉली हाउस, जिसे पॉली घर भी कहा जाता है, पॉलीथीन के अर्द्धगोलाकार, वर्गाकार या लम्बे आकार में बनाए गये रक्षात्मक घर हैं, जिनका उपयोग उच्च मूल्य के कृषि उत्पादों को उत्पन्न करने के लिये किया जाता है. पॉली हाउस मुख्य रूप से समशीतोष्ण क्षेत्रों में लगाए जाते हैं. इसमें लगाए गये उच्च तकनीकी उपकरणों की मदद से इसके अन्दर ड्रिप पद्धति से सिंचाई कर ताप, आर्द्रता, प्रकाश आदि को नियंत्रित किया जाता है. इससे कृत्रिम खेती की जा सकती है. अंदर के वातावरण को फसल के अनुरूप वातावरण प्रदान कर जब चाहें तब मनपसंद फसल पैदा कर सकते हैं. इसमें भी सूरज की किरणों से प्राप्त होने वाले रेडिएशन से इसके अंदर लगाए गये पौधे, जमीन एवं अन्य वस्तुएं उर्जा प्राप्त करती हैं और पुनः उर्जा को अवमुक्त करती रहती हैं. पॉली हाउस में भी उच्च तकनीक के उपकरणों द्वारा या उसमें बनाए गये झरोखों को खोल कर अंदर की गर्मी, उर्जा एवं आर्द्रता को नियंत्रित किया जाता है और पूरे पॉली हाउस में इन्हें समान रखा जाता है. अत्यधिक गर्मी के समय पौधों को मानक उर्जा प्रदान करने के लिए अति गर्मी को कृत्रिम फुहारों द्वारा मानक स्तर तक लाया जाता है. ग्रीन हाउस के समान पॉली हाउस भी पौधों को अत्यधिक गर्मी, ठंड, आंधियों एवं कीटों से सुरक्षा प्रदान करते हैं. इसमें ऑफ सीजन में भी फलों एवं सब्जियों का उत्पादन किया जा सकता है या यूं कहें कि फलों एवं सब्जियों के सीजन को विस्तारित किया जा सकता है. अत्यधिक ठंडे स्थानों में भी इसके अंदर का तापमान 5 से 15 डिग्री तक रहता है, जिसके कारण पौधों

की पाले से रक्षा होती है.

पॉली हाउसों में फूलों की खेती, फलों जिनमें रस्पबेरी/ ब्लैकबेरी/ स्ट्राबेरी प्रमुख हैं, की खेती के साथ पौधों की नर्सरी लगाकर किसान अपनी आमदनी में बढ़ोत्तरी कर सकते हैं.

हाइटेक पॉली हाउस में उष्णता करने के सिस्टम के साथ-साथ मिट्टी को गर्म करने का सिस्टम भी स्थापित किया जाता है; जो कीड़ों, बैक्टीरिया, वायरस और अन्य अनावश्यक जीवों को समाप्त कर मिट्टी को शुद्ध करने का कार्य करता है. अभी हाल ही में करनाल के समीप घरौंदा नाम से इंडो-इजराइल समन्वय से एक पॉली हाउस तैयार किया गया है, जो विकासशील देशों में कृषि करने के नवीनतम प्रकार का उत्कृष्ट उदाहरण है.

खुले क्षेत्र में की जाने वाली कृषि की अपेक्षा इस प्रकार की कृषि के द्वारा 4 से 5 गुना अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है. रिसर्च के अनुसार टमाटर (नवंबर), केप्सिकम (सितंबर मध्य) और खीरा (अक्तूबर मध्य) के अंतर्गत पॉली हाउस में प्रति 100 वर्ग मीटर में क्रमशः 1550 किलो, 1500 किलो और 1100 किलो पैदावार प्राप्त की जाती है. इन फसलों की उपज की अवधि को भी विस्तारित किया जा सकता है और इसकी 90 प्रतिशत तक की उपज को ऑफ सीजन (गर्मियों के प्रारंभ से सर्दियों तक) में भी प्राप्त किया जा सकता है, जिससे बाजार मूल्य भी 2 से 4 गुना प्राप्त होता है. इसे सीधे शब्दों में कहें कि हम ऐसी फसल विशेष को इस माध्यम से पूरे वर्ष प्राप्त कर सकते हें और वह भी न्यूनतम अतिरिक्त एप्लिकेशनों एवं इनपुट द्वारा और इस प्रकार अधिक से अधिक लाभ अर्जित कर सकते हैं. इसी प्रकार जरबेरा, गुलाब, लिली, ऑर्चिड, एन्थेरियम और कारनेशन इत्यादि जैसे फूल पॉली हाउस या नेट हाउस में बहुत ही अच्छे तरीके से पनप सकते हैं और साल भर अच्छी कमाई प्रदान करते हैं.

पॉली हाउस के निर्माण पर लगने वाली लागत उसके आकार एवं क्षेत्रफल पर आधारित है. इसकी संरचना स्टील या लकडी से तैयार होती है. 1000 वर्ग मीटर के बड़े पॉली हाउस की लागत 900 से 1000 रूपये प्रति वर्ग मीटर है, जबकि वातावरण नियंत्रित पॉली हाउस में इससे 2 से 3 गुना लागत आती है. इसके विपरीत बड़े पॉली हाउस में छोटे पॉली हाउस की तुलना में फसल उगाने की लागत बहुत कम आती है. पॉली हाउस के रखरखाव एवं फसल के अनुश्रवण हेतु दक्ष व्यक्ति की जरूरत होती है अतः परिवार में यदि कोई ऐसे फार्म का प्रशिक्षण ले चुका है, तो ही इस राह पर चलना चाहिए; अन्यथा देख-रेख के लिए तकनीकी व्यक्ति को रखने पर काफी खर्च हो सकता है.

ग्रीन हाउस को तैयार करने में दो प्रकार के लागत घटक प्रमुख हैं- एक स्थायी

लागत घटक और दूसरा संचयी लागत घटक.

स्थायी लागत घटक में जमीन की खरीद, निर्माण हेतु सामग्री, सिंचाई एवं अन्य आवश्यक उपकरण.

संचयी लागत घटक में पौधों की लागत, रोपाई, रखरखाव, मजदूरी, स्टोरेज, पैकिंग और परिवहन इत्यादि प्रमुख हैं. इस प्रकार से यदि 1 हेक्टेयर जमीन में गुलाब की खेती की जाए, तो उसकी लागत 250 लाख रुपये आती है, जिसमें लगभग 80 लाख रूपये जमीन की व्यवस्था, ग्रीन हाउस निर्माण, कोल्ड स्टोरेज, ऑफिस, प्रबंधन व्यय, बिजली एवं पानी सप्लाई के उपकरण एवं पौधों की खरीद आदि के लिए है और लगभग 170 लाख रूपये सामग्री की खरीद के लिए है, जिनमें विद्युत प्रभार, खाद, पौधों की सुरक्षा लागत, पैकिंग सामग्री, निर्यात हेतु हवाई प्रभार, कमीशन, कर, बीमा, कर्मचारियों को वेतन, रखरखाव एवं अन्य व्यय सम्मिलित हैं. कुल 250 लाख के निवेश पर लगभग 300 लाख की आय प्राप्त होती है अर्थात कुल रू.50 लाख का लाभ. ऊपर दी गई लागतों में कमी या बढ़ोत्तरी जमीन के क्षेत्रफल एवं ग्रीन हाउस के प्रकार पर निर्भर है. पूर्ण रूप से ओटोमेशन वाले ग्रीन हाउस सबसे अधिक निवेश के हैं, जिनमें प्रति वर्ग मीटर 2000 से 3000 रूपये की लागत आती है.

ऊपर दिये गये दोनों उदाहरणों में की जाने वाली खेती को बाहरी जलवायु, तेज हवाओं, कड़ाके की ठंड या गर्मियों में चलने वाली लू से बचाते हुए इनके अंदर लगे हुए उपकरणों से मानक तापमान एवं आर्द्रता प्रदान कर साल भर उपज को प्राप्त करना होता है और पौधों को जमीन पर ही उपजाया जाता है. इन हाउसों की सहायता के कुछ अन्य तरीके और भी हैं, जिनसे ताजी, सेहतमंद और ऑफ सीजन में भी फलों एवं सब्जियों को वैज्ञानिक तरीके से प्राप्त किया जा सकता है. इन तरीकों में हाइड्रोपोनिक्स या जल संवर्धन, एयरोपोनिक या वायु संवर्धन प्रमुख हैं.

हाइड्रोपोनिक्स :

जैसाकि नाम से ही स्पष्ट है- हाइड्रो अर्थात जल एवं पोनिक अर्थात संवर्धन. इस प्रक्रिया में पौधों को मिट्टी में नहीं रखा जाता है; बल्कि ऐसे पात्र में रखा जाता है, जिसमें उनकी जड़ वाला हिस्सा पानी में रहे और तना एवं पत्ते ऊपर रहें. ऐसी प्रक्रिया में उपयोग में लाये जाने वाले पानी में आवश्यक अवयवों को घोला जाता है और पौधों की जड़ें सीधे ही पानी को सोखती हैं. चूंकि इनकी जड़ें मिट्टी में नहीं होती हैं. अतः मिट्टी में पाने वाले वायरसों एवं किटाणुओं से पोधों की सुरक्षा होती है. चूंकि यह सारी प्रक्रिया एक बंद चारदीवारी में होती है, अतः बाहर से कीट पतंगों का प्रवेश भी नहीं होता है. इस प्रक्रिया में पौधों को

नजदीक-नजदीक लगाया जाता है, जिससे भूमि पर अधिक से अधिक पौधे लगाये जा सकते हैं और पौधों को दिया गया पानी प्रत्येक दो या तीन सप्ताह में गंदा होने पर बदला जाता है तथा पानी को बदलने पर पुनः आवश्यक अवयवों को मिलाना पड़ता है; परंतु ये सभी कार्य उच्च तकनीक के उपकरणों एवं कम्प्यूटरों की देखरेख में ही होते हैं.

एयरोपोनिक

एयरो अर्थात हवा में संवर्धन. इस प्रक्रिया में पौधों की जड़ों को हवा में रखा जाता है अर्थात जड़ें न तो मिट्टी में होती हैं और न हाइड्रोपॉनिक्स के समान पानी में; बल्कि हवा में लटकी होती हैं. इस प्रक्रिया में अंधेरा एक प्रमुख आवश्यकता है और पौधों की हवा और पानी की जरूरत को उसकी जड़ों में मिस्ट अर्थात पानी की बारीक बौछार से पूरा किया जाता है. मिस्ट छिडकाव की यह प्रक्रिया एक निश्चित अंतराल या आवश्यकता पडने पर स्वतः परिचालित होती है, जो अत्याधुनिक उपकरणों एवं कम्प्यूटरों द्वारा नियंत्रित होती है. पौधों को एलईडी प्रकाश द्वारा प्रकाश प्रदान किया जाता है, जो उनमें प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया को करने में सहायक होता है. चूंकि पौधों की जड़ें हवा में रहती हैं; अतः एयरोपोनिक्स में पानी को बदलने का कोई झंझट नहीं होता है.

उपयुक्त दोनों प्रक्रियाओं से उपजने वाले फल एवं सब्जियां स्वस्थ, पोषक पदार्थों से भरपूर एवं मात्रा में प्रचुर होती हैं. चूंकि पौधों की जड़ें मिट्टी में नहीं होती हैं; अतः पौधे, मिट्टी की अशुद्धियों से दूर रहते हैं, जिसके कारण कीटनाशक दवाओं की आवश्यकता नहीं पड़ती है. इन प्रक्रियाओं में सबसे महत्वपूर्ण यह हैं कि इनमें पानी का न्यूनतम एवं आवश्यकता के अनुसार प्रयोग होता है. इससे जल स्त्रोतों का बचाव होता है और उपयोग के दौरान जल के व्यर्थ होने की संभावनाएं समाप्त हो जाती हैं. इसके साथ ही कम कृषि भूमि में भी साल भर फलों एवं सब्जियों तथा फूलों की खेती से भूमि का श्रेष्ठतम उपयोग किया जा सकता है तथा कृषि के अन्य महत्वपूर्ण कार्यों के लिए भूमि की उपलब्धता बनी रहती है.

उपसंहार

चूंकि कृषि की इन विधियों में पौधों को मानक वातावरण अर्थात आवश्यक जल, वायु, पानी एवं उर्जा प्रदान करने के लिए किसान को तकनीक के उपकरणों एवं कम्प्यूटरों पर निर्भर होना पड़ता है. अतः इनमें शारीरिक श्रम भले ही कम लगता है; परंतु मशीनों एवं कम्प्यूटरों पर बड़ी मात्रा में धन का निवेश होने के कारण कृषि की यह विधि बहुत मंहगी है. अतः इसका प्रसार भी बहुत धीरे-धीरे हो रहा है. फसल को पानी देने के लिए बिजली की खपत भी बहुत अधिक है. हालांकि पौधों को पानी देने या फसल की कटाई

के लिए श्रमिकों की आवश्यकता नहीं होती है; परंतु पौधों के लिए पोषक तत्वों को मशीनों में डालने के लिए श्रमिकों की आवश्यकता होगी और ये श्रमिक भी ऐसी खेती के लिए प्रशिक्षित होने चाहिए. अत: इन्हें निश्चित रूप से बड़ा वेतन देना होगा और प्रशिक्षण भी प्रदान करना होगा.

ऐसी खेती को प्रारंभ करने से पूर्व कई जानकारियों का प्रशिक्षण प्राप्त करना आवश्यक है तथा आगे विकास के लिए लगातार नई खोजों को जारी रखना है और नये तरीकों को जानना है, जिसके कारण रिसर्च इसका एक प्रमुख अंग भी है.

ऐसी खेती में भूमि के न्यूनतम प्रयोग के कारण भूमि के कटाव, कमी से बचा जा सकता है, जंगलों को बचाया जा सकता है.

रासायनिक खाद के दुष्प्रभावों तत्वों से फार्म के आस-पास के तालाबों, नदियों एवं भूमि को दूषित होने से बचाया जा सकता है.

चूंकि कीटनाशकों का प्रयोग नहीं किया जाता है, जो कीटों को मारने के साथ-साथ पौधों में लगने वाले फूलों, फलों एवं सब्जियों को भी नुकसान पहुंचाते हैं, अत: ऐसी प्रकिया द्वारा प्राप्त होने वाले फूल, फल एवं सब्जियों पर इनका प्रभाव शून्य होता है. इसके कारण ये शरीर के लिए बेहद स्वास्थ्यवर्द्धक एवं लाभदायक होते हैं.

चूंकि ऐसी कृषि में वातावरण को मानक स्तर पर बनाए रखने तथा पानी के छिड़काव एवं आर्द्रता बनाए रखने के लिए आधुनिक तकनीक के उपकरणों एवं कम्प्यूटरों की आवश्यकता होती है; अत: ऐसी कृषि हेतु फार्मों की स्थापना के लिए कृषकों को सरकारी सहायता/ आसान दरों पर आसानी से निवेश प्राप्त होने चाहिए. तभी वे इस ओर रूख करेंगे; साथ ही किसान कल्याण संस्थाओं को सरकार के साथ मिलकर कृषकों को इस संबंध में तकनीक की जानकारी एवं व्यावहारिकता का ज्ञान प्रदान करना अति आवश्यक होगा. यदि ऐसी कृषि को सहज एवं आसान बनाया जाये, तो विश्व में खाद्य पदार्थों की कमी नही होगी तथा पोषक एवं स्वास्थ्यवर्द्धक फलों-सब्जियों को भारी मात्रा में साल भर प्राप्त किया जा सकेगा. चूंकि ऐसी कृषि में जल और भूमि के प्रयोग को भी सीमित किया जा सकता है. अत: विश्व में होने वाली जल एवं भूमि की कमी तथा जंगलों के कटाव को रोका जा सकता है, जो आने वाली पीढ़ी के लिए वर्तमान पीढ़ी का एक नायाब तोहफा होगा.

प्रदीप सिंह, वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा), सहायक सेवाएं विभाग, केंद्रीय कार्यालय

सज्जन चौहान

परिशुद्ध खेती (PRECISION FARMING)

कृषि हमारे देश तथा इसकी अर्थव्यवस्था के लिए कितना महत्वपूर्ण है, इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि अभी भी भारत की लगभग 60-65% जनसंख्या खेती एवं खेती से जुडे कार्यों में लगी हुई है तथा कृषि क्षेत्र का भारत के जीडीपी में 14% से अधिक योगदान है.

लेकिन उपर्युक्त तथ्य कृषि क्षेत्र के केवल एक पक्ष को ही दर्शाते हैं. इसका दूसरा और महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि आने वाले समय में यह कृषि क्षेत्र हमारे देश की निरंतर बढती जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने में किस तरह सक्षम होगा, जब कृषि उत्पादन में वर्तमान वृद्धि, जनसंख्या की वृद्धि दर से भी कम है. भारतीय किसान अपनी खेती, व्यवसाय के रूप में नहीं करता है, बल्कि जीविकोपार्जन के लिये करता है. खेती की परम्परागत विधियों, पूंजी की कमी, भूमि सुधार की अपूर्णता, विपणन एवं वित्त संबंधी कठिनाइयों आदि के कारण भारतीय कृषि की उत्पादकता अत्यन्त कम है. अत: यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि यदि हम कृषि की पारंपरिक तकनीकों पर ही निर्भर रहे, तो आने वाला समय हमारे लिए बहुत ही चुनौतीपूर्ण होगा. अत: समय की यह मांग है कि हम परंपरागत कृषि से थोड़ा हटते हुए अपना ध्यान कृषि की नवीन तकनीकों एवं विधियों पर केंद्रित करें; ताकि कृषि उत्पादकता में चमत्कारिक वृद्धि हो सके.

ऐसी ही कृषि की एक नई तकनीक, जो धीरे-धीरे प्रचलन में आ रही है, वह है 'परिशुद्ध खेती'. यह तकनीक भारत के लिए कोई नई नहीं है. हमारे किसान भली-भांति जानते हैं कि उपज बढाने के लिए कौन सा इनपुट कितनी मात्र में कब, कहां और कैसे डालना है और यदि नई वैज्ञानिक तकनीकों द्वारा उन्हें उचित सूचना प्रदान की जाए, तो हम अंदाजा लगा सकते हैं कि यह उनके लिए कितनी लाभप्रद होगी.

परिशुद्ध खेती या कृषि :

परिशुद्ध खेती के उपयोग से कृषि प्रबंधन में एक क्रांतिकारी परिवर्तन हो सकता है; क्योंकि यह तकनीक भूमि की उपज तथा निरंतरता बढाने के अतिरिक्त फसल की गुणवत्ता में भी उत्कृष्ट सुधार लाती है एवं यह पर्यावरण के संरक्षण में भी उपयोगी है.

परिशुद्ध खेती क्या है?

सीधे शब्दों में कहा जाए तो परिशुद्ध खेती **'सही काम को, सही समय तथा सही जगह पर, सही तरीके'** से करने की तकनीक है. आइए, हम इसे विस्तार से समझने की कोशिश करते हैं;

परिशुद्ध खेती में 'स्थान विशेष (साइट स्पेशिफिक)' तरीके का इस्तेमाल करते हुए भूमि में विविधता का पता लगाया जाता है और इस विविधता का उपयोग ही भूमि की उत्पादकता बढाने के लिए किया जाता है, जिससे कम लागत में अधिक मुनाफा हो सके.

परिशुद्ध खेती का महत्व:

- फसल उत्पादन में वृद्धि
- उत्तम प्रबंधन निर्णय के लिए आवश्यक सूचना प्रदान करना
- केमिकल एवं उर्वरक व्यय में भारी कटौती
- खेती योग्य भूमि व उचित प्रयोग.
- लाभप्रदता में वृद्धि
- पर्यावरण हितैषी व प्रदूषण में कमी.

परिशुद्ध खेती की मूलभूत अवधारणा यह है कि एक बडे भूमि के क्षेत्र को समान रूप से आकलित करना सही नहीं है, क्योंकि इससे उर्वरकों, कीटनाशकों और हर्बीसाइड (herbicides) जैसे महंगे संसाधनों का अधिक मात्रा में अपव्यय होता है.

भूमि के विभिन्न हिस्सों, मिट्टी के प्रकार, पोषक तत्वों की उपलब्धता और अन्य महत्वपूर्ण कारकों में व्यापक विविधता पायी जाती है और अगर इस विविधता को महत्व नहीं दिया जाता है, तो ये उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं.

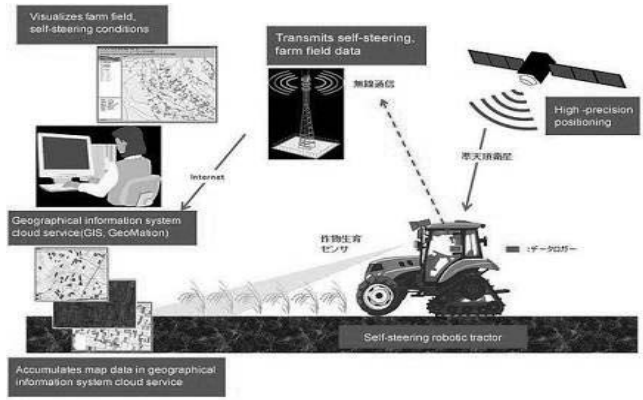

परिशुद्ध खेती में कृषि क्षेत्र को 'मृदा पीएच, पोषण की स्थिति, कीट प्रकोप, उपज दर और अन्य फसल उत्पादन को प्रभावित करने वाले कारकों के आधार पर छोटे-छोटे 'प्रबंधन जोन' में विभाजित किया जाता है, जिन्हें ग्रिड कहा जाता है. इसके बाद यह सुनिश्चित किया जाता है कि इन ग्रिडों को उनकी आवश्यकता के अनुसार व्यवहार में लाया जाए. इस कार्य में जीपीएस, जीआईएस जैसी उन्नत तकनीक का उपयोग किया जाता है.

परिशुद्ध खेती में इस्तेमाल प्रौद्योगिकी :

इस तकनीक के प्रभावी ढंग से उपयोग तथा कार्यान्वयन के लिए उपलब्ध आधुनिक तकनीकी उपकरणों जैसे हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर, प्रबंधन के तरीकों आदि के साथ परिचित होना महत्वपूर्ण है. निम्नलिखित पैराग्राफ में इसके बारे में संक्षेप में बताया गया है.

मानचित्रण :

फसल और मिट्टी के गुणों का मानचित्रण, परिशुद्ध खेती में सबसे पहला और महत्वपूर्ण कदम है; क्योंकि ये मानचित्र स्थानिक परिवर्तनशीलता को मापने और नियंत्रित करने के लिए आधार प्रदान करते हैं. डाटा संग्रह फसल उत्पादन के पहले और उसके दौरान दोनों ही समय किया जाता है, जिसे जीपीएस तकनीक का उपयोग करके और अधिक उपयोगी बनाया जाता है. ग्रिड सॉयल सैंपलिंग, यील्ड मॉनिटरिंग, आरएस, क्रॉप स्कॉउटिंग डाटा संग्रह करने की कुछ तकनीकें हैं.

ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम (जीपीएस) रिसीवर :

ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम उपग्रह सिग्नल का प्रसारण करते हैं, जिसे जीपीएस रिसीवर के माध्यम से ग्रहण करके स्थान का पता लगाया जाता है. यह जानकारी रियल टाइम

(Real Time) होती है अर्थात गति के समय निरंतर वास्तविक स्थान की जानकारी प्रदान की जाती है. किसी भी समय सटीक स्थान की जानकारी होने से मिट्टी और फसल माप के डाटा को मैच किया जा सकता है. जीपीएस रिसीवर ट्रैक्टर के ऊपर लगा डिश एंटिना होता है, जिसके द्वारा प्राप्त सिग्नल ट्रैक्टर में ही कंप्यूटर पर निरंतर रिकॉर्ड होते रहते हैं.

भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS):

यह एक कंप्यूटर आधारित मैनेजमेंट सिस्टम है, जिसका उपयोग मानचित्र के रूप में गणना, भंडारण, विश्लेषण और स्थानिक डाटा के प्रदर्शन के लिए किया जाता है। जीआईएस से परिवर्तनशीलता के विषय में जानकारी प्राप्त की जाती है। इसे सही मायने में परिशुद्ध खेती का मस्तिष्क कहा जाता है।

यह दो तरीकों से खेती में मदद करता है:

- पहला, सिमुलेशन मॉडल के साथ जीआईएस डाटा (मिट्टी, फसल, मौसम, खेत की जानकारी आदि) को जोड़ने और एकीकृत करने में है और
- दूसरा, जीपीएस निर्देशित मशीनों तथा डिजाइन कार्यान्वयन के लिए इंजीनियरिंग घटक का समर्थन करता है.

उपज की निगरानी और मानचित्रण :

यह एक बहुत महत्वपूर्ण स्टेप है, जिसमें उर्वरक संशोधन, बीज और कीटनाशकों का उपयोग, जुताई और सिंचाई के तरीकों में परिवर्तन का उपज पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है.

ग्रिड मिट्टी नमूना और चर दर उर्वरक (VRT) आवेदन :

इस प्रक्रिया में अलग-अगल स्थानों से मिट्टी के विभिन्न नमूनों को लिया जाता है और उन्हें आपस में मिला कर संयुक्त रूप से प्रयोगशाला में परीक्षण के लिए भेजा जाता है. उदाहरण के लिए 20 एकड के क्षेत्र में प्रत्येक 2 एकड भूमि का एक सैम्पल (नमूनों में 300 फीट का अंतर रखा जाता है) लेते हुए कुल 10 सैंपल लिए जाते हैं; जबकि पारंपरिक तकनीक में पूरी भूमि का एक ही सैम्पल लिया जाता है. ग्रिड नमूना लेने का उद्देश्य मिट्टी में पोषक तत्वों का पता लगाना है. प्रत्येक नमूने का प्रयोगशाला में विश्लेषण करते हुए फसल के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता का एक मैप तैयार किया जाता है, जिसे वैरियेबल रेट फर्टिलाइजर स्प्रेडर (variable-rate fertilizer spreader) में लगे कम्प्यूटर में फीड किया जाता है. यह कम्प्यूटर इस मैप और जीपीएस से मिली जानकारी के आधार पर प्रोडक्ट डिलिवरी कंट्रोलर (product-delivery controller) को निर्देशित करता है कि कौन सा उर्वरक कितनी मात्र में कब उपयोग करना है.

सुदूर संवेदन :

सुदूर संवेदन दूरी से डाटा का संग्रह है. डाटा सेंसर हैंड हेल्ड डिवाइसेज (hand-held devices) हैं, जो उपग्रह आधारित हो सकती हैं या इन्हें विमान पर रखा जा सकता है. रिमोट सेंसिंग फसल के स्वास्थ्य के मूल्यांकन के लिए एक उपयोगी उपकरण प्रदान करते हैं. नमी, पोषक तत्वों, संघनन आदि से संबन्धित फसल रोगों का इन ओवरहेड इमेज द्वारा आसानी से पता चल जाता है. इन ओवरहेड इमेज द्वारा मौसम परिवर्तन के कारण फसल की उपज पर पडने वाले प्रभाव का भी अनुमान लगता है, जो फसल की लाभप्रदता में सुधार करने के लिए आवश्यक जानकारी है. इन चित्रों की सहायता से एक स्पॉट ट्रीटमेंट प्लान विकसित किया जाता है, जिससे इनपुट का अनुकूल उपयोग हो सके.

सेटलाइट रिमोट सेंसिंग तकनीक फसल उत्पादन की सटीक जानकारी 1 महीने पूर्व ही दे सकती है, जो 95% सही होती है. मोनो-क्राप के संदर्भ में यह 10 दिन पहले का पूर्वानुमान 90% शुद्धता के साथ दे सकती है.

जैसाकि पहले भी कहा जा चुका है कि प्रत्येक भूमि की किस्म भिन्न होती है और

इस भिन्नता का आकलन ऊपर दी गयी सभी तकनीक शायद नहीं कर पायें तथा एक साथ इन सभी तकनीकों का उपयोग करना लागत की दृष्टि से भी अनुकूल नहीं होगा. अत: आवश्यक है कि शुरुआत में 1 या 2 तकनीक का उपयोग कर परिणाम का आकलन किया जाए.

अवसर और चुनौतियां :

परिशुद्ध खेती का पर्यावरण की गुणवत्ता पर सकारात्मक प्रभाव हो सकता है. उत्पादकों को यह दिखाने के लिए कि किस प्रकार बदलती उत्पादन प्रथाओं में खतरे की फसलों के लिए जगह नहीं है और सकारात्मक आर्थिक और पर्यावरणीय लाभ का उत्पादन मौजूद है. परिशुद्ध खेती अभी प्रारम्भिक चरण में है और इसको अधिक प्रभावी बनाने के लिए प्रयोगों की आवश्यकता है, जिससे उत्पादकों को यह दिखाया जा सके कि इस तकनीक की सहायता से आप अपनी फसल का नुकसान रोक सकते हैं. साथ ही अपनी उपज में दुगनी- तिगुनी वृद्धि कर सकते हैं; वह भी कम लागत पर. अवसर बहुत हैं, लेकिन चुनौतियाँ भी हैं, जिसमें सबसे प्रमुख है खेती की विचारधारा में परिवर्तन. हमारे अधिकतर किसानों की प्रवृति जोखिम न लेने की है और उन्हें अपनी भूमि पर इस तकनीक का उपयोग करने के लिए राजी करना एक बहुत बडी चुनौती होगी.

सरकार को भी अपनी खेती नीति में परिशुद्ध खेती को बढ़ावा देना होगा तथा रिसर्च के लिए अधिक निधि आबंटित करनी पडेगी. सरकार को परिशुद्ध खेती पर अनुदान का प्रावधान करना होगा, जिससे अधिक कृषक इस तकनीक के प्रति आकर्षित हों. शायद एक अलग परिशुद्ध खेती नीति बनाने की आवश्यकता है. साथ ही यह भी जरूरी है कि हमारे कृषि कॉलेज, कृषि वैज्ञानिक, कृषक तथा सरकार सभी एक साथ मिलकर इस मुद्दे पर कार्य करें.

परिशुद्ध खेती में काम आने वाली पद्धतियों पर गहन अनुसंधान किया जाए; जिससे यही तकनीक कम लागत पर हमारे कृषको को उपलब्ध हो सके. कुछ प्रगतिशील किसानों को इस तकनीक की ट्रेनिंग दी जानी चाहिए; ताकि वे अपने गाँव में रहने वाले अन्य साथियों को जागरूक कर सकें.

शुरुआती दौर में देश के कुछ हिस्से, जहां पर परिशुद्ध खेती की अच्छी संभावना है, वहाँ पायलट आधार पर इसे कार्यान्वित किया जाना चाहिए.

विगत 5 वर्षों में 'कृषि यंत्रीकरण एवं परिशुद्ध खेती' पर किए गए अनुसंधान, विकास एवं उपलब्धियां :

- आम पर इलैक्ट्रोमैगनेटिक रेडिएशन प्रोफाइल का अध्ययन गैर-हानिकारक तत्वों का पता लगाने के लिए किया गया कि सबसे अधिक सुविधाजनक पद्धत्ति कौन सी है. इस सूचना को आमों की गैर-हानिकारक गुणवत्ता निर्धारित करने के लिए साफ्टवेयर के रुप में रखा गया है.
- चावल एवं गेहूं की फसलों के अन्वेषण के माध्यम से सामान्य विभेद सूचकांक((NDVI) आधारित नाइट्रोजन उवर्रक की अनुमानित सर्वाधिक मात्रा के लिए एक एनरायड एप (1.02 वर्सन) एवं एक ऑनलाइन वेब एप विकसित किया गया है.
- भारतीय कृषि करने वालों का मानवीय डाटा प्राप्त किया जा चुका है एवं मानव मशीन प्रणाली में श्रम एवं लिंग विशेष स्थितियों को दूर करने के लिए उपयुक्त उपकरणों की डिजाइन के लिए संबंधों को विकसित किया गया है.
- मध्य प्रदेश राज्य में विभिन्न स्थानों पर पानी के बचाव के विकल्पों को निर्धारित करने के लिए बारिश की स्थिति को मिट्टी की विशेषता के साथ जोड़ा गया है.
- सक्षम उपकरणों की डिजायन के लिए उपकरणों एवं उर्जा की आवश्यकताओं के अध्ययन के लिए पूर्ण रुपेण सुसज्जित मिट्टी के भंडार से मिट्टी की पारस्परिक क्रियाओं का अध्ययन किया गया है.
- सोयाबीन एवं इसके उत्पादों को उनके न्यूट्रीशन एवं सुरक्षित उपभोग के आधार पर वर्गीकृत किया गया है.
- काजू के छिलके का अध्ययन सक्षम उर्जा सृजन प्रणाली की डिजायन के लिए उनका जैविक समिश्र एवं ज्वलनशीलता की जानकारी के लिए किया गया है.
- प्रमुख संचालकों से परिचालकों को किये जाने जाने वाले कम्पन को परिचालकों पर कम्पन दबाव को कम करने के लिए प्रणाली बनाने हेतु अन्तरित किया गया.
- संसाधनों के पूर्णतम उपयोग के लिए तस्वीर तकनीकों का अध्ययन किया जा रहा है.
- खेती परिचालनों में कम पानी पीने वाले पशुओं से अधिकतम कार्य प्राप्त करने के लिए पशुओं के मनोविज्ञान का अध्ययन किया जा रहा है.

- बदली हुई जलवायु परिस्थितयों के अन्तर्गत फलों एवं सब्जियों के लिए ट्रैक्टर/ मशीनरी, सिंचाई प्रणाली हेतु निर्णय लेने में सहायक साफ्टवेयर के बारे में अध्ययन किया जा रहा है.

बेंकों को परिशुद्ध खेती के लिए नयी स्कीम बनानी चाहिए; ताकि इस तकनीक का इस्तेमाल करने वाले कृषकों को कई रियायतों पर ऋण उपलब्ध कराया जाए .

हमें परम्परागत खेती से थोड़ा हटते हुए अपना ध्यान नयी खेती तकनीकों पर केन्द्रित करना होगा और परिशुद्ध खेती शायद वही तकनीक है, जो आने वाले समय में हमारे देश में खेती से संबन्धित समस्याओं को हल कर सके.

सफलता की कहानी :

राजमणि पुल्लागौंदन तमिलनाडु के कोयंबटूर जिले में पुदूर गांव के एक युवा किसान हैं, जो अभी तक परंपरागत खेती करते हुए प्याज, मिर्च, हल्दी और अन्य तरह की सब्जियाँ उगाते थे. इस तरह की खेती से होने वाली आय अपेक्षा से कम होती थी. फिर उन्होंने तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय (टीएनएयू) विस्तार शिक्षा, द्वारा आयोजित परिशुद्ध खेती पर एक प्रशिक्षण में भाग लिया और आगे की सलाह के लिए बागवानी विभाग से संपर्क किया. विभाग ने उन्हें सुझाव दिया यदि वे एक समूह में परिशुद्ध खेती करना शुरू करें; तो उनकी आय में सुधार हो सकता है. उन्होंने प्याज, टमाटर, बैंगन, गोभी, मिर्च और हल्दी की खेती की योजना बनाई और फिर बागवानी विभाग, टीएनएयू के वैज्ञानिकों की देख-रेख में अपनी जमीन को तैयार किया.

उन्होंने अपनी ही भूमि के 1.5 हैक्टेयर के एक क्षेत्र में हल्दी की खेती शुरू कर दी. उन्होंने भूमि को चार बार जोता और खाद, डीएपी और पोटाश को बेसल खुराक के रूप में डाला. फिर उन्होंने मिट्टी को नम करने के लिए ड्रिप सिंचाई की विधि का उपयोग किया तथा बुवाई का काम जून महीने में शुरू किया.

उन्होंने हल्दी की फसल के बीच धनिया के बीज फैलाये और ड्रिप सिंचाई प्रणाली के माध्यम से सिंचाई की. साथ ही हल्दी की छः क्यारियों के साथ दो क्यारियों में प्याज भी लगाए तथा ऑक्सीगोल्ड वीडीके का छिडकाव किया. बुवाई के एक सप्ताह बाद इन क्यारियों के बीच में 1000 मिर्च की पौध प्रत्यारोपित की तथा लाल चना सीमांत फसल के रूप में बोया. फसल अवधि के दौरान फर्टिगेशन विधि द्वारा पांच दिन के अंतराल पर पोटेशियम नाइट्रेट और यूरिया का छिडकाव किया.

(स्रोत: एनएआईपी सब-प्रोजेक्ट मास-मीडिया मोबिलाइजेशन, विस्तार शिक्षा निदेशालय, तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयम्बटूर)

उन्होंने 2 दिन के अंतराल पर भूमि को आवश्यकतानुसार सिंचित किया. समय-समय पर फसलों की जरूरत के अनुसार यूरिया, डीएपी, कीटनाशक का प्रयोग किया, जिसकी मात्रा और समय वैज्ञानिको के बताए अनुसार ही रखी. समय-समय पर मजदूरों द्वारा खर-पतवार भी हटवाये.

इस तरह बुवाई के 30-35 दिन बाद, बुवाई के 70 दिन बाद, रोपण के 90 दिन बाद, 250 दिन बाद तथा 275 दिन बाद कटाई की. उन्हें 1 हेक्टेयर जमीन में धनिये की 2 टन, प्याज की 13 टन, मिर्च की 2 टन, लाल चने की 50 किलो तथा हल्दी की 7 टन पैदावार मिली.

उन्होंने कहा कि नियमित अंतराल पर पर्याप्त पानी और उर्वरकों के उपयोग से उच्च उपज और गुणवत्ता वाली उपज मिली है. विशेष रूप से प्याज के एक ही आकार और अच्छी गुणवत्ता के होने की वजह से बाजार में उच्च मूल्य मिला. रिटेलर्स उपज लेने के लिए सीधे उनके खेत में आए थे. उन्होंने कहा कि उनका कुल खर्च 3,35,400 रुपये हुआ, जबकि उन्हें रू.9,66,000 प्रति हेक्टेयर प्राप्त हुए. उनके अनुसार जब से परम्परागत खेती से हट कर परिशुद्ध खेती को अपनाएं हैं, उन्हें अच्छा लाभ हो रहा है. अब राजमणि क्षेत्र में सबसे खुश किसानों में से एक हैं. वे अपने परिवार के साथ परिशुद्ध खेती का आनंद ले रहे हैं तथा गाँव के अन्य कृषकों के लिए प्रेरणा के स्रोत हैं.

(स्रोत: एनएआईपी सब-प्रोजेक्ट मास-मीडिया मोबिलाइजेशन, विस्तार शिक्षा निदेशालय, तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयम्बटूर)

सज्जन चौहान, वरिष्ठ प्रबंधक, ग्रामीण एवं कृषि कारोबार विभाग, कें.का., मुंबई

यूनियन बैंक को राष्ट्रीय राजभाषा पुरस्कार

भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नर श्री रघुराम जी राजन के कर कमलों से रिजर्व बैंक राजभाषा शील्ड ग्रहण करते हुए यूनियन बैंक के कार्यपालक निदेशक श्री विनोद कथूरिया. इनके बायीं तरफ श्री एस.एस. मूंदडा, उप गवर्नर (भारतीय रिजर्व बैंक); श्री केशव बैजल, महाप्रबंधक, श्री रामगोपाल सागर, सहायक महाप्रबंधक व श्री नवल दीक्षित, मुख्य प्रबंधक (यूनियन बैंक) तथा दायीं तरफ श्री अनूप कुमार श्रीवास्तव, सचिव, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, श्री एस एस यादव, मुख्य प्रबंधक, श्रीमती सविता शर्मा, संपादक, यूनियन धारा (यूनियन बैंक)

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया
अच्छे लोग, अच्छा बैंक
Union Bank of India
Good people to bank with
www.unionbankofindia.co.in | टोल फ्री नं. 1800 22 2244